अध्यात्म और सफल जीवन

मौलाना वहीदुद्दीन खान

अध्यात्म और सफल जीवन

लेखक
मौलाना वहीदुद्दीन खान

संपादक
डॉ. स्तुति मल्होत्रा

संकलक
इमरान अहमद इस्लाही

Goodword Books

First published 2025
This book is copyright free

This book is the Hindi translation of Maulana Wahiduddin Khan's selected Urdu articles.

Goodword Books
A-21, Sector 4, Noida-201301, Delhi NCR, India
Mob. +91 8588822672
info@goodwordbooks.com
www.goodwordbooks.com

CPS International
Centre for Peace and Spirituality International
1, Nizamuddin West Market, New Delhi-110 013, India
Mob. +91-9999944119
info@cpsglobal.org
www.cpsglobal.org

Center for Peace and Spirituality USA
2665 Byberry Road, Bensalem, PA 19020, USA
Mob. 617-960-7156
kkaleemuddin@gmail.com

विषय-सूची

अशुभ से शुभ	7
रिवाजी ज़ेहन	9
हौसलामन्दी	10
मानवता का सम्मान	12
फ़ितरी हक़ीक़त	13
माइनस को प्लस बनाईये	14
क़ुदरत का फ़ैसला	17
मुजरिम कौन	18
इन्तिक़ाम नहीं	19
मौत की ख़बर	22
कायनात मशीन नहीं	24
कोई उस जैसा नहीं	25
आह यह इंसान	27
सादा हल	28
ख़ामोशी	30
पत्थर खिसक गया	31
भविष्यवाणी योग्य चरित्र	34
शरीर का सारा खून	35
आदमी की परख	37
इच्छा-सूची	38
ये विशेषज्ञ	40
तरतीब	41
बोलने का तरीक़ा	42
महिला और पुरुष	43
मापदंड को बुलन्द करना	45
अजीब करिश्मा	46
सब से बड़ी ख़बर	47
अंधविश्वास	48
इंसान किधर	50
ज़माने के ख़िलाफ़	51
तजुर्बे के बाद	52
पेड़	55
मौत का फ़ैसला	57
जितना देना उतना पाना	58
कारोबारी स्थायित्व	60
शहद का सबक़	61
चुप की ताक़त	62
एक मिसाल	64

विषय-सूची

एकतरफ़ा तरीका	65
विविधता का उसूल	66
अनेकता में एकता	67
अख़्लाक़ी ज़हर	69
सृष्टि में एकत्व	70
सीमाबद्धता का नियम	71
ख़ुदा की तलाश	74
बोलने की सूझबूझ	75
ख़ुदा की कृपा	77
तहज़ीब की वापसी	78
ग़लतफ़हमी	79
कथनी के साथ करनी	82
कामयाबी की फ़ेहरिस्त	83
पहला क़दम	84
कामयाबी की शर्त	86
मुजरिम कौन	87
कामयाबी का टिकट	88
शेर देख रहा है	90
ज़िन्दगी का राज़	92
महंगी कीमत	93
ख़्वाब में	95
हौसलामन्दी	96
जीत, जंग के बिना	97
ख़ुदा की मौजूदगी का तजुर्बा	99
बेमुल्क	102
विवाहित जीवन	103
क़ुदरत का पैग़ाम	104
रास्ते में	106
एक आत्महत्या	107
ज़रूरी तैयारी	108
6 अप्रैल	110
ख़ुदा का सबूत	111
हक़ीक़तपसन्दी	113
आज की साइंस	115
हार में जीत	116
तकरार नहीं	119
एक नास्तिक की स्वीकारोक्ति	121
कामयाब इंसान	123
सच्ची ख़ुशी	124
ऊंची उड़ान	126
दुनिया के नेतृत्व का रहस्य	127
छत गिर पड़ी	128
आख़िरी अंजाम	130
ज्ञान का महत्व	131
आर्थिक हमला	133

विषय-सूची

देखने वाला देख रहा है 135
आधा आदमी 138
ज़िन्दगी का सवाल 140
प्रतिक्रिया का नतीजा 142
आलोचना 143
मिठास का इज़ाफ़ा 145
बन्द ज़ेहन 146
ज़्यादा बड़ी वापसी 147
दिमाग़ी मेहनत 149
गृहस्थ जीवन 150
बड़ा काम 151
ख़ुदा सब कुछ 152
अपनी ग़लती 154
तीन मिनट 155
फ़ासिले पर रहो 156
भुलाने की ज़रूरत 158
ज़्यादा फ़र्क़ नहीं 159
अख़लाक़ का फल 160
ख़ाली ज़िन्दगी 162
सृष्टि की संभावनाएं 163
सब्र का हथियार 164
ख़ुदा जल्दी नहीं चाहता 167
फ़र्ज़ी तस्वीर 169
दृष्टिकोण की अहमियत 171
इंसान की महानता 172
जीव वैज्ञानिक भाईचारा 174
निस्स्वार्थता 178
तक़वा और शुक्र 179
क़ुदरत का सबक़ 182
एक और आवाज़ 186
बेहतर हल 187
रचनात्मक योग्यता 188
मेहनत के ज़रिए 189
बचकर चलिए 191
हिकमत वाला तरीका 192
चेतना का निर्माण 193
सफलता कैसे 195
नाकामी और सफलता 197
गुस्सा न दिलाओ 198
अधिकार और लाचारी 200
अपनी कमज़ोरी 201
बचत से कमाई 203
युद्ध के बिना विजय 204
हिकमत की बात 206
सादा उसूल 207
खतरा नहीं 209

जोश बिना होश 210
दुश्मन से सीखना 212
सफलता का राज़ 213
मुश्किल में आसानी 215
दुकानदारी 216
सफल यात्रा 217
सीमाओं को लांघते हुए 219
सफलता का रहस्य 221
उद्देश्य की अहमियत 222
स्वीकृति 223
ऊँची सोच 225
ज़िंदा या मुर्दा 226
खोने के बाद भी 228
मानसिक एकाग्रता 229
महान प्रगति 231
खोज 232
ज़ेहन का निर्माण 233
अनिवार्य समस्या 235
प्रकृति का पाठ 236
गुस्से का परिणाम 238
एक नसीहत 239
मतभेद के बावजूद 240
मेहमान-नवाज़ी या दिखावा 242
मौत की याद 243
इंसान और शैतान 244
खुशहाली लौट आई 245
विवाद से पीछे हटना 246
इस्लाम में प्रतिक्रिया का स्थान नहीं 247
नकारात्मक प्रभाव, सकारात्मक प्रभाव 248
धन पर्याप्त नहीं है 249
मादी तरक्की, रूहानी मौत 250
शख्सियत की तामीर (व्यक्तित्व का निर्माण) 251
ज़्यादा ज़हीन, ज़्यादा दूर 252
भूतकाल में जीना 253
नफ़रत का बम 254
परम सत्य की समझ 255
सच्चा कर्म, सच्ची दुआ 257
मौत का पाठ 258
प्रकृति के साथ सहयोग करना 259
अंतर को समझना 260
लाड़-प्यार का संकट 262
एक बेहतर भविष्य की ओर 263

अशुभ से शुभ

एक वृक्ष की सफलता इसी में है कि वह छोटे को बड़ा बना सके, मामूली को ख़ास में बदल सके। वह जड़ पदार्थ (बीज) को बढ़ती हुई चीज़ों में बदल देता है। वह बाहर से मिट्टी पानी और गैस लेता है। और उसको पत्ती, फूल और फल के रूप में सामने ले आता है। इसी तरह किसी इंसानी समाज का बेहतर समाज होना इस बात पर निर्भर है कि उसके तमाम लोग यह योग्यता रखते हों कि वे छोटे बरताव को ऊंचे बरताव में बदल सकें।

इस मामले में इंसान के मनोवैज्ञानिक अस्तित्व को भी ऐसा ही होना चाहिए जैसा बनाने वाले ने उसके बॉयलाजिकल (जीव-वैज्ञानिक) अस्तित्व को बनाया है। इंसान जो चीज़ें खाता है उनमें एक अंश शक्कर (चीनी) का होता है। शक्कर अपनी पहले की सूरत में इंसान के लिए बेफ़ायदा है, इसलिए इंसान के जिस्म में अग्नाशय (Pancreas) की व्यवस्था की गई है, जिसका काम है शक्कर को ऊर्जा (एनर्जी) में बदल देना। इसी 'बदलने' की योग्यता पर इंसान की ताक़त और उसका स्वास्थ्य निर्भर है। जिस आदमी के जिस्म का यह सिस्टम बिगड़ जाय उसके अन्दर जाने वाली शक्कर ऊर्जा में परिवर्तित नहीं होगी। वह या तो ख़ून में शामिल हो जाएगी या पेशाब के रास्ते बाहर आने लगेगी। इसके बाद इंसान बेहद कमज़ोर हो जायगा। इसी से वह बीमारी पैदा होती है, जिसे मधुमेह (Diabetes) कहा जाता है।

यदि एक आदमी डायबिटीज का मरीज़ हो जाए यानी उसकी शारीरिक व्यवस्था शक्कर को ऊर्जा में बदलने की योग्यता खो दे, तो ज़िन्दगी उसके लिए बेमाने हो जायगी। वह सब कुछ होते हुए भी 'बेकुछ' हो जाएगा। इसी

प्रकार, यदि कोई समाज इस प्रकार की विशेष योग्यता और दृष्टिकोण को खो दे कि उसके लोग तुच्छ चीज़ को श्रेष्ठ चीज़ में बदलकर दिखाने की योग्यता खो दें तो ऐसा समाज एक बीमार समाज होगा। ऐसे समाज को दुरुस्त करने का उपाय इसके सिवाय कोई नहीं कि उसमें दुबारा यह उच्च योग्यता पैदा की जाय।

आजकल हमारे समाज में जो बिगाड़ और टकराव पाया जाता है, उसका कारण यह नहीं कि लोगों के बीच सांस्कृतिक भेद है। इसका सही कारण यह है कि हमारे समाज के लोग मनोवैज्ञानिक रूप से डायबिटिक हो गए हैं, उनमें शक्कर को ऊर्जा में बदलने की योग्यता नहीं रही। उनमें यह सामर्थ्य नहीं रही कि वे 'बेताक़त' को अपने लिए 'ताक़त' बना लें।

सामाजिक ज़िन्दगी में हमेशा ऐसा होता है कि आदमी के साथ अशोभनीय बातें होती हैं। एक आदमी को दूसरे आदमी के साथ शिकायत पैदा हो जाती है। किसी के हित दूसरे के स्वार्थ से टकरा जाते हैं, एक व्यक्ति ऐसे शब्द बोलता है जिन्हें सुनकर दूसरा व्यक्ति महसूस करता है कि वह उसकी निजी या सामाजिक हैसियत पर चोट कर रहा है, उसकी मानहानि कर रहा है। समाज में इस तरह की घटनाएं अवश्य ही घटती हैं और घटती रहेंगी। हमारे लिए यह सम्भव नहीं है कि हम ऐसी घटनाओं को होने से रोक दें। हमारे लिए जो चीज़ मुमकिन है वह सिर्फ़ यह है कि हम ऐसी घटनाओं से नकारात्क (निगेटिव) प्रभाव न लें।

एक स्वस्थ्य आदमी अपने अन्दर जाने वाली शक्कर को ऊर्जा में बदलता है। तब्दीली की यही प्रक्रिया मनोवैज्ञानिक तौर पर भी होनी चाहिए। इस दुनिया में बेहतर सामाजिक ज़िन्दगी बनाने का रहस्य यह है कि लोगों की चेतना को इस योग्य बनाया जाए कि वे नकारात्मक घटना को सकारात्मक (positive) प्रवृत्ति में बदल सकें। वे गुस्से के जवाब में माफ़ी पेश करें और बुराई करने वाले को भलाई का तोहफ़ा दें।

मौजूदा समाज के लोग मनोवैज्ञानिक रूप से डायबिटिक हो गए हैं। उनकी इस मनोवैज्ञानिक बीमारी का इलाज कीजिए। और फिर आप देखेंगे कि जो समाज आपसी मतभेदों और झगड़ों में फंसा हुआ था, वह विविध रंग के पौंधों और वृक्षों का खूबसूरत बाग बन गया है।

रिवाजी ज़ेहन

एलियस हॉव (Elias Howe) अमरीका के मशहूर शहर का एक मामूली कारीगर था। वह 1819 में पैदा हुआ और सिर्फ़ 48 साल की उम्र में 1867 में उसकी मृत्यु हुई। मगर उसने दुनिया को एक ऐसी चीज़ दी जिसने कपड़े तैयार करने में एक इन्क़िलाब पैदा कर दिया। यह सिलाई की मशीन थी जो उसने 1845 में ईजाद की।

एलियस हॉव ने जो मशीन बनाई उसकी सुई में धागा डालने के लिए शुरू में सुई की जड़ की तरफ़ छेद होता था जैसा कि आमतौर पर हाथ की सुइयों में होता है। हज़ारों बरस से इंसान सुई की जड़ में छेद करता आ रहा था। इसलिए एलियस हॉव ने जब सिलाई मशीन तैयार की तो उसमें भी उसने आम रिवाज के मुताबिक़ जड़ की तरफ़ छेद बनाया। उसकी वजह से उसकी मशीन ठीक काम नहीं करती थी। शुरू में वह अपनी मशीन से सिर्फ़ जूता सी सकता था। कपड़े की सिलाई इस मशीन पर मुमकिन न थी।

एलियस हॉव एक अर्से तक इसी उधेड़बुन में रहा मगर उसकी समझ में इसका कोई हल नहीं आता था। आख़िरकार उसने एक ख़्वाब देखा। इस ख़्वाब ने उसका मसला हल कर दिया।

उसने ख़्वाब में देखा कि किसी जंगली क़बीले के आदमियों ने उसको पकड़ लिया है और उसको हुक्म दिया है कि वह 24 घंटे के अंदर सिलाई

की मशीन बना कर तैयार करे, वरना उसको क़त्ल कर दिया जाएगा। उसने कोशिश की, लेकिन तय किए गए वक़्त में वह मशीन तैयार न कर सका। जब वक़्त पूरा हो गया तो कबीले के लोग उसको मारने के लिए दौड़ पड़े। उनके हाथ में बरछा था। हॉव ने ग़ौर से देखा तो हर बरछे की नोक पर एक सुराख़ था। यही देखते हुए उसकी नींद खुल गई।

हॉव को सिरा मिल गया। उसने बरछे की तरह अपनी सुई में भी नोक की तरफ़ छेद बनाया और उसमें धागा डाला। अब मसला हल था। धागे का छेद ऊपर होने की वजह से मशीन काम नहीं कर रही थी। वह नीचे की तरफ़ छेद करने के बाद बख़ूबी काम करने लगी।

हॉव के साथ दिक़्क़त यह थी कि वह पारंपरिक ज़ेहन से ऊपर उठ कर सोच नहीं पाता था। वह समझ रहा था कि जो चीज़ हज़ारों साल से चली आ रही है वही सही है। जब उसके अवचेतन ने उसको तस्वीर का दूसरा रुख़ दिखाया तो वह मामले को समझा और उसको फ़ौरन हल कर लिया। जब आदमी अपने आपको जी-जान से किसी काम में लगा दे तो वह इसी तरह उसके रहस्यों को पा लेता है।

हौसलामन्दी

अहमद और इक़बाल दोनों एक ही शहर में रहते थे। अहमद बी.ए. पास था जबकि इक़बाल सिर्फ़ आठवीं क्लास तक पढ़ा था।

एक बार इक़बाल को एक सरकारी दफ़्तर में जाना था। वह वहां जाने लगा तो अहमद भी उसके साथ चला गया। दोनों उस दफ़्तर में पहुंचे। अहमद ने देखा कि इक़बाल वहां खूब अंग्रेज़ी बोल रहा है। जब दोनों बाहर निकले तो अहमद ने कहा कि तुम बिल्कुल ग़लत-सलत अंग्रेज़ी बोल रहे थे। मैं तो

कभी इस तरह बोलने की हिम्मत नहीं करूंगा। पर इक़बाल को अहमद की इस बात से कोई शर्मिन्दगी नहीं हुई। उसने पूरे विश्वास भरे लेहजे में कहाः

"ग़लत बोलो ताकि तुम सही बोल सको।"

इक़बाल ने कहा कि हालांकि तुम बी.ए. हो और मैं कुछ भी नहीं हूं, मगर देख लेना कि मैं अंग्रेज़ी बोलने लगूंगा और तुम कभी भी न बोल सकोगे।

इस बात को अब बीस साल हो चुके हैं। इक़बाल की बात सौ फ़ीसदी सही साबित हुई। अहमद आज भी वहीं है जहां वह बीस साल पहले था। मगर इक़बाल ने इस अर्से में ज़बरदस्त तरक़्क़ी की। वह अब बेझिझक होकर अंग्रेज़ी बोलता है और बहुत कम लोग ऐसे हैं जो उसकी बातचीत में भाषा की ग़लती पकड़ सकें।

इक़बाल के इस हिम्मती मिज़ाज ने उसको बहुत फ़ायदा पहुंचाया। इससे पहले शहर में उसकी एक मामूली दुकान थी, मगर आज उसी शहर में उसका एक बड़ा कारख़ाना क़ायम है। "ग़लत बोलो ताकि तुम सही बोल सको" यह बात उसके लिए सौ फ़ीसदी सही साबित हुई।

इक़बाल के इस तरीक़े का ताल्लुक़ सिर्फ़ भाषा से नहीं, बल्कि ज़िन्दगी के तमाम मामलों से है। मौजूदा दुनिया में वही लोग कामयाब होते हैं जो हौसले के मालिक हों, जो बेधड़क आगे बढ़ने की हिम्मत कर सकें, जो ख़तरा मोल लेकर क़दम उठाने की हिम्मत रखते हों। इस दुनिया में ग़लती करने वाला ही सही काम करता है। जिसको यह डर लगा हुआ है कि कहीं उससे ग़लती न हो जाए वह ज़िन्दगी की दौड़ में पीछे रह जाएगा। उसके लिए आगे की मंज़िल पर पहुंचना मुक़द्दर नहीं।

मानवता का सम्मान

दूसरे खलीफा उमर फ़ारूक़ (रज़ि०) के ज़माने में अम्र बिन आस मिस्र के गवर्नर थे। उन्होंने एक बार घोड़ों की दौड़ कराई। इस दौड़ में गवर्नर के बेटे का घोड़ा भी शामिल था, पर। जब दौड़ हुई तो एक मिस्री (गैर मुस्लिम) का घोड़ा आगे बढ़ गया। मिस्री ने विजय के जोश में कोई ऐसा वाक्य कहा जो गवर्नर के बेटे (मोहम्मद बिन अम्र बिन आस) को बुरा मालूम हुआ और उसने उस मिस्री को कोड़े से मार दिया। कोड़ा मारते हुए उसने कहा, "यह लो, और मैं शरीफ़ों की औलाद हूं।"

हज़रत अनस बिन मालिक इस घटना को बयान करते हुए कहते हैं कि मिस्री (ग़ैर-मुस्लिम) मिस्र से चलकर मदीना पहुंचा और ख़लीफ़ा उमर फ़ारूक़ से शिकायत की कि गवर्नर के लड़के ने इस तरह उसको कोड़े से मारा। हज़रत उमर ने कहा, "तुम यहां ठहरो" और तुरन्त अपने एक ख़ास आदमी को मिस्र भेजा कि अम्र बिन आस और उनके बेटे मोहम्मद बिन अम्र को, जिस हाल में हों, लेकर मदीना आओ। लिहाज़ा वे लोग लाए गए। जब वे मदीना पहुंचे तो हज़रत उमर ने कहा, "मिस्री कहां है? ये कोड़ा लो और इस शरीफ़ ज़ादे को मारो।"

इसके बाद मिस्री ने कोड़ा लिया और मिस्र के गवर्नर के सामने उसके बेटे को मारना शुरू किया। वह मारता रहा, यहां तक कि उसको ज़ख़्मी कर दिया। हज़रत उमर बीच-बीच में कहते जाते थे कि "शरीफ़ जादे को मारो"। जब वह मार चुका तो हज़रत उमर फ़ारूक़ ने कहा, "इसके पिता अम्र बिन आस के सिर पर भी मारो, क्योंकि ख़ुदा की क़सम इनके बेटे ने सिर्फ़ अपने बाप की बड़ाई के ज़ोर पर तुमको मारा था।"

मिस्री ने कहा, "ऐ अमीरुल मोमिनीन, जिसने मुझे मारा था, उसको मैंने मार लिया, इससे ज़्यादा मुझे कुछ और नहीं चाहिए"। हज़रत उमर ने

कहा, "ख़ुदा की क़सम, अगर तुम इनको भी मारते तो हम तुम्हारे और इनके बीच रुकावट न बनते, बशर्ते कि तुम ख़ुद ही इनको छोड़ दो।"

फिर उन्होंने अम्र बिन आस से कहा, "ऐ अम्र, तुमने कब से लोगों को गुलाम बना लिया, हालांकि उनकी मांओं ने उनको आज़ाद पैदा किया था।" (हयातुस्सहाबा, खंड 2, पेज 338)

यह घटना आदमी के सम्मान और इंसानी बराबरी की सर्वश्रेष्ठ और अंतिम मिसाल है। इस घटना ने एक इंसान और दूसरे इंसान के बीच के हर तरह के भेद को व्यवहारतः ख़त्म कर दिया। इसने इंसानी न्याय और इंसाफ़ की ऐसी मिसाल कायम कर दी, जिसके आगे इंसानी अद्लो-इंसाफ का कोई और दर्जा नहीं।

फ़ितरी हक़ीक़त

सी एफ डोल (C. F. Dole) ने कहा है कि – मेहरबानी का बर्ताव दुनिया में सबसे बड़ी व्यवहारिक ताक़त है:

Goodwill is the mightiest force in the Universe.

यह सिर्फ़ एक शख़्स का क़ौल नहीं, यह एक फ़ितरी हक़ीक़त है। इंसान के पैदा करने वाले ने इंसान को जिन विषेशताओं के साथ पैदा किया है, उनमें से सबसे अहम विषेशता यह है कि किसी आदमी के साथ बुरा सुलूक किया जाए तो वह भड़क उठता है और अगर उसके साथ अच्छा सुलूक किया जाए तो वह एहसानमन्दी के एहसास के तहत अच्छा सुलूक करने वाले के आगे बिछ जाता है।

इस आम फ़ितरी उसूल में किसी भी शख़्स का कोई अपवाद नहीं।

यहां तक कि दोस्त और दुश्मन का भी नहीं। आप अपने एक दोस्त से कड़वा बोलिए, उसे बेइज़्ज़त कीजिए, उसे तकलीफ़ पहुंचाइए, आप देखेंगे कि इसके बाद वह फ़ौरन सारी दोस्ती भूल जाएगा। उसके अंदर अचानक इंतिक़ामी जज़्बा जाग उठेगा। वही शख़्स जो पहले आप पर फूल बरसा रहा था, अब आपके ऊपर कांटे और आग बरसाने के लिए तैयार हो जाएगा।

इसके उलट एक शख़्स जिसको आप अपना दुश्मन समझते हैं, उससे मीठा बोलिए, उसकी कोई ज़रूरत पूरी कर दीजिए, उसकी किसी मुश्किल के वक़्त उसके काम आ जाइए, यहां तक की प्यासा होने पर उसको एक गिलास ठंडा पानी पिला दीजिए। अचानक आप देखेंगे कि उसका पूरा मिज़ाज बदल गया है। जो शख़्स इससे पहले आपका दुश्मन दिखाई दे रहा था, वह आपका दोस्त और हितैषी बन जाएगा।

ख़ुदा ने इंसान की फ़ितरत में यह मिज़ाज रख कर हमारी बहुत बड़ी मदद की है। इस फ़ितरत ने एक निहत्थे आदमी को भी सबसे बड़ा सम्मोहक और असरदार हथियार दे दिया है। इस दुनिया में शेर और भेड़िये को मारने के लिए गोली की ताक़त चाहिए, मगर इंसान को जीतने के लिए गोली की ज़रूरत नहीं। उसके लिए अच्छे सुलूक की एक फ़ुहार काफ़ी है। कितना आसान है इंसान को अपने क़ाबू में लाना। मगर नादान लोग इस बेहद आसान काम को अपने लिए बेहद मुश्किल काम बना लेते हैं।

माइनस को प्लस बनाईये

क़ायनाती पैटर्न का एक पहलू यह है कि यहां की पूरी व्यवस्था रूपांतरण व बदलाव के नियम पर क़ायम है। यहां किसी चीज़ की उपयोगिता इसी में है कि वह बदलाव के सिद्धांत पर पूरी उतरे। मसलन, इस दुनिया में इंसान की

सांस से तथा दूसरे कारणों से बड़ी मात्रा में कार्बन डाईऑक्साइड पैदा होती है, जिसे पेड़-पौधे अपने अन्दर लेते हैं।

पेड़-पौधों में जो कार्बन डाईऑक्साइड प्रवेश करती है अगर वे दोबारा उसको कार्बन डाईऑक्साइड के रूप में ही निकालें तो पूरा वातावरण ज़हरीला (प्रदूषित) हो जाए और इंसान तथा जानवरों के लिए ज़िंदा रहना असंभव हो जाए। लेकिन पेड़-पौधे इस कार्बन डाईऑक्साइड को विशेष प्रक्रिया के ज़रिए उसे बदल कर ऑक्सीजन के रूप में बाहर निकालते हैं। वे दूसरों से जहरीली गैस लेकर उन्हें लाभदायक गैस का तोहफ़ा पेश करते हैं।

इसी तरह, गाय की मिसाल लीजिए। गाय कुदरत की एक प्रकार की फैक्ट्री है, जो घास खाती है और उसे दूध के रूप में हमें लौटा देती है। यह इंसान के लिए अनुपयोगी चीज़ को उपयोगी चीज़ में बदलने वाला प्राकृतिक कारखाना है। यदि गाय ऐसा करे कि वह घास खाकर फिर से घास ही देने लगे, तो वह अपनी कीमत और उपयोगिता पूरी तरह से खो देगी।

बदलाव का यह नियम जो बाक़ी दुनिया में लागू है, वही इंसान के लिए भी आदर्श है। बाकी दुनिया की सही कार्यकुशलता का रहस्य यह है कि वह कनवर्ज़न के सिद्धान्त पर काम कर रही हो। इसी प्रकार बेहतर जिंदगी और सफल मानव समाज बनाने का गुण भी यही है कि उसके लोग ऐसा चरित्र प्रस्तुत करें कि वे 'घास' खाएं और उसको 'दूध' के रूप में दुनिया की तरफ़ लौटा सकें।

क़ुरान में सच्चे इंसानों के बारे में कहा गया है कि "जब उन्हें ग़ुस्सा आता है तो वे माफ़ कर देते हैं" (क़ुरान, 42:37)। यानि दूसरों की तरफ़ से उन्हें ऐसा सलूक मिलता है जो उनमें ग़ुस्सा और बदले की आग भड़काने वाला हो, पर वे ग़ुस्सा और बदले की आग को अपने अन्दर ही अन्दर बुझा देते हैं। और दूसरे व्यक्ति को जो चीज़ लौटाते हैं वह क्षमा होती है और सद्व्यवहार होता है।

क़ुरान में कहा गया है कि “भलाई और बुराई दोनों समान नहीं। तुम जवाब में वह कहो जो उससे बेहतर हो। फिर तुम देखोगे कि तुममें और जिसमें दुश्मनी थी, वह ऐसा हो गया जैसे कि कोई क़रीबी दोस्त” (Quran, 41:34)। इस आयत के बारे में हज़रत अली इब्ने अबी तालिब ने कहा:

> अल्लाह ने ईमान वालों को हुक्म दिया है कि वह गुस्से के वक़्त सब्र करें कोई जहालत करे तो उसको बर्दाश्त करें। बुराई की जाए तो माफ़ करने और भुला देने का तरीक़ा अपनाएं। जब वे ऐसा करेंगे तो अल्लाह उनको शैतान से बचाएगा और उनके दुश्मन को इस तरह झुका देगा कि वह उनका करीबी दोस्त बन जाए। (तफसीर अल-क़ुर्तुबी, जिल्द, 15, पृष्ठ 362)

यह वही ख़ूबी है, जिसको ऊपर हमने कनवर्ज़न का गुण कहा है। ख़ुदा-परस्त आदमी की ख़ुदा-परस्ती उसके अन्दर ऐसी ख़ूबी पैदा कर देती है कि वह बुराई को भलाई में बदल (रूपान्तरित कर) सके, जो लोग उसे गाली दें उनके लिए वह दुआ करे। जो लोग उनके साथ ग़ैर इंसानी सलूक करें उनके साथ वह इंसानी सूलूक करे। जो लोग उससे कड़वा बोलें उनका स्वागत वह मीठे बोल से करे।

इससे मालूम होता है कि बेहतर समाज के निर्माण के लिए हमारी कोशिशों का रुख़ क्या होना चाहिए। वह यह होना चाहिए कि हम इंसानों में ‘माइनस को प्लस बनाने’ की खूबी पैदा करने की कोशिश करें। मौजूदा दुनिया में आदर्श समाज इसी कनवर्ज़न के ज़रिए बनाया जा सकता है। इसके सिवा आदर्श समाज बनाने का कोई और तरीका नहीं।

क़ुदरत का फ़ैसला

अगर आप अमरीका जाएं और वहां से कनाडा की तरफ़ सफ़र करें तो आप देखेंगे कि अमरीका और कनाडा की सरहद (border) पर दोनों मुल्कों के झंडे एक साथ लहरा रहे हैं। पास ही एक बोर्ड है, जिसके ऊपर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा हुआ है– एक ही मां की औलादें:

Children of a Common Mother

यह बात जो अमरीका और कनाडा की सीमा पर खुले बोर्ड के ऊपर लिखी गई है, यही बात तमाम दूसरे मुल्कों की सरहदों पर 'छुपे हुए बोर्डों' में न दिखाई देने वाले अक्षरों में लिखी हुई है। यह दूसरा बोर्ड वह है जो क़ुदरत की तरफ़ से लगाया गया है। पहला बोर्ड इन्सानी हाथों ने लिखा है, दूसरा बोर्ड स्वयं ख़ुदा के हाथों ने।

मॉलेक्यूलर बायोलॉजी में जो नई खोजें हुई हैं उनसे जैनेटिक सबूतों (genetic evidence) के ज़रिए ख़ालिस साइंस की सतह पर यह साबित हुआ है कि तमाम दुनिया के लोग एक ही महान ख़ानदान (Great family) का हिस्सा हैं। सब एक ही मां-बाप (common ancestor) से ताल्लुक़ रखते हैं (तफ़्सील के लिए देखें मेरी उर्दू किताब, *'तामीर की तरफ़'* पेज 28-30)

इस एतबार से देखा जाए तो मालूम होगा के अमरीका और कनाडा की सरहद पर लगे बोर्ड पर जो बात लिखी हुई है वह प्राकृतिक सच्चाई है। वही मामला तमाम क़ौमों का है जिसका ऐलान अमरीका और कनाडा ने अपने यहां किया है। स्वाभाविक सच्चाई यही मांग करती है कि हर क़ौम अपने यहां वही अल्फ़ाज़ लिखे जो अमरीका और कनाडा ने अपने यहां लिख रखा है।

यही मौजूदा दुनिया में इंसान का इम्तिहान है। यहां आदमी को अपने आज़ाद इरादे से वही काम करना है जो क़ुदरत ने लाज़िमी क़ानून के तहत पहले से तय कर दिया है। जो चीज़ क़ुदरत ने अपनी छुपी हुई क़लम से लिखी है, उसे इंसान को अपने हाथ से अपनी ज़िन्दगी के पन्ने पर लिखना है।

क़ुदरत की अपनी योजना के तहत संसार की जो स्कीम (scheme of things) है, हर इंसान को उसके अनुसार अपनी योजना को ढाल लेना चाहिए। क्योंकि क़ुदरत के नक़्शे के साथ तालमेल बनाना ही तामीर और सृजन है, जबकि क़ुदरत के नक़्शे के साथ तालमेल न बनाना नाकामी और बर्बादी है

मुजरिम कौन

एक आदमी को गुलाब का फूल तोड़ना था। वह शौक़ के तहत तेज़ी से लपक कर उसके पास पहुंचा और झटके के साथ एक फूल तोड़ लिया। फूल तो उसके हाथ में आ गया, लेकिन तेज़ी के नतीजे में कई कांटे उसके हाथ में चुभ चुके थे। उसके साथी ने कहा कि तुमने बड़ी मूर्खता की, तुमको चाहिए था कि कांटो से बचते हुए एहतियात के साथ फूल तोड़ो। तुमने एहतियात वाला काम बेएहतियाती से किया, इसी का नतीजा है कि तुम्हारा हाथ ज़ख्मी हो गया।

अब फूल तोड़ने वाला गुस्सा हो गया। उसने कहा कि सारा क़ुसूर तो इन कांटों का है। उन्होंने मेरी हथेली और मेरी उंगलियों से खून निकाल दिया। और तुम उल्टा मुझको मुजरिम ठहरा रहे हो। उसका साथी बोला, मेरे दोस्त, यह पौदे के कांटों का मामला नहीं, यह क़ुदरत की प्रबंधन-व्यवस्था का मामला है। क़ुदरत ने दुनिया की व्यवस्था इसी तरह बनाई है कि यहां फूल के

साथ कांटे हों। मेरी और तुम्हारी चीख़ और पुकार ऐसा नहीं कर सकती कि इस व्यवस्था को बदल दे। फूल के साथ कांटे की यह व्यवस्था तो बहरहाल इसी तरह दुनिया में रहेगी। अब मेरी और तुम्हारी कामयाबी इसमें है कि हम इस सच्चाई को मानते हुए इससे बचने की तदबीर तलाश करें। और वह तदबीर यह है कि कांटों से बच कर फूल को हासिल करें। कांटों में न उलझते हुए फूल तक पहुंचने की कोशिश करें।

फूल के साथ कांटे का होना कोई सादा बात नहीं। यह फ़ितरत और क़ुदरत की ज़ुबान में इंसान के लिए सबक़ है। यह प्रकृति की भाषा में इन्सानी हक़ीक़त का ऐलान है। यह उस फ़ितरी मन्सूबे का परिचय है, जिसके मुताबिक़ ख़ुदा ने मौजूदा दुनिया को बनाया है। इसका मतलब यह है कि इस दुनिया में वही क़दम कामयाब होता है जो बच कर चलने के उसूलों के मुताबिक़ हो।

जहां बचने की ज़रूरत हो वहां उलझना, जहां तदबीर की ज़रूरत हो वहां एजीटेशन करना सिर्फ़ अपनी अयोग्यता का ऐलान करना है। ख़ुदा ने जिस मौक़े पर बच कर चलने का तरीक़ा इख़्तियार करने का हुक्म दिया हो, वहां उलझने का तरीक़ा इख़्तियार करना ख़ुद अपने आपको मुजरिम बनाना है। चाहे आदमी ने दूसरों को मुजरिम साबित करने के लिए डिक्शनरी के तमाम अल्फ़ाज़ दोहरा डाले हों।

इन्तिक़ाम नहीं

किसी ने कहा है – “इन्तिक़ाम लेने से पहले सोच लो कि इन्तिक़ाम का भी इन्तिक़ाम लिया जाएगा।” यह ज़िन्दगी की बहुत गहरी हक़ीक़त है। और इस

हक़ीक़त को समझने के बाद ही कोई शख़्स मौजूदा दुनिया में अपनी ज़िन्दगी को कामयाब बना सकता है।

एक शख़्स से आपको तकलीफ़ पहुंची। आपके दिल में उसके ख़िलाफ़ इन्तिक़ाम लेने का जज़्बा भड़क उठा। आप चाहने लगे कि उससे बदला लेकर अपने सीने की आग ठंडी करें। मगर सोचने की बात यह है कि एक शख़्स के तकलीफ़ देने से आपके अन्दर इन्तिक़ाम का जज़्बा भड़क उठा, फिर वही तकलीफ़ जब आप उस शख़्स को देंगे तो क्या उसके अन्दर दोबारा इन्तिक़ाम का जज़्बा नहीं भड़केगा। यक़ीनन ऐसा ही होगा। और फिर बुराई का एक चक्कर चल पड़ेगा। आपको एक तकलीफ़ के बाद दूसरी तकलीफ़ सहनी पड़ेगी। इसलिए अक़्लमन्दी यह है कि नज़र अन्दाज़ करने का तरीक़ा इख़्तियार करके बात को पहले ही चरण में ख़त्म कर दिया जाए।

मेरी मुलाक़ात एक बार उत्तर प्रदेश के एक शख़्स से हुई। उसने एक नेता की साझेदारी में एक बस ख़रीदी। उस आदमी ने पैसा लगाया और नेता ने लायसेंस हासिल किया। लाइसेंस क़ानूनी तौर पर नेता के नाम था। मगर फ़ायदे में दोनों बराबर के हिस्सेदार थे।

कुछ दिनों के बाद नेता की नीयत ख़राब हो गयी। उसने सोचा कि क़ानूनी तौर पर गाड़ी मेरी है, क्योंकि लाइसेंस मेरे नाम है। फिर मैं उसका फ़ायदा दूसरे को क्यों दूं। उसने एकतरफ़ा तौर पर गाड़ी पर क़ब्ज़ा कर लिया।

अब आदमी बहुत ग़ुस्सा हुआ। उसके अन्दर इन्तिक़ाम की आग भड़क उठी। उसने इरादा किया कि नेता को क़त्ल कर डाले। वह उसके क़त्ल का मन्सूबा बनाने लगा। इस दौरान इसी बीच उसकी मुलाक़ात एक बूढ़े तजुर्बेकार आदमी से हुई। पूरा हाल सुनने के बाद बूढ़े आदमी ने कहा कि अगर तुम अपने मन्सूबे के मुताबिक़ नेता को मार डालो तो उसके बाद उसके बच्चे क्या तुम को जिन्दा छोड़ देंगे?

यह बात आदमी की समझ में आ गई। उसने नेता के क़त्ल का इरादा

छोड़ दिया। इसके बजाय उसने यह किया कि उसके पास जो पैसे अब भी बचे थे उनसे उसने छोटे पैमाने पर कारोबार शुरू कर दिया। चन्द साल बाद जब उस आदमी से मेरी मुलाक़ात हुई तो उसने कहा कि मैं बहुत ख़ुश हूं। बस की साझेदारी से मैं जितना कमाता था, अब मैं उससे ज़्यादा कमा रहा हूं और मेरा कारोबार बराबर तरक़्क़ी कर रहा है।

जब भी आपके सीने में किसी के ख़िलाफ़ इन्तिक़ाम की आग भड़के तो अपने ज़ेहन को ठंडा करके सबसे पहले यह सोचिए कि मेरा फ़ायदा इन्तिक़ाम लेने में है या इन्तिक़ाम न लेने में।

ज़ाहिर है कि दूसरे को नुक़सान पहुंचाना अपने आप में कोई मक़्सद नहीं। अस्ल मक़्सद जो हर आदमी अपने सामने रखता है या उसको रखना चाहिए, वह अपने आपको फ़ायदा पहुंचाना है। अगर दूसरे को नुक़सान पहुंचाने का नतीजा यह हो कि आख़िर में आपको ख़ुद उससे बड़ा नुक़्सान उठाना पड़े तो ऐसी हालत में अक़्लमन्दी क्या है। अगर आप ठंडे दिमाग से सोचें तो आप यह मानने पर मजबूर होंगे कि ऐसी कार्यवाही जो आख़िर में ख़ुद अपने ख़िलाफ़ पड़ने वाली हो, वह किसी भी हाल में सही नहीं कही जा सकती। ऐसी हर कार्यवाही सिर्फ़ बेवकूफ़ी है, न कि वह काम जो एक अक़्लमन्द आदमी को करना चाहिए।

हमारे समाज में जो झगड़े हैं और अदालतों में जो मुक़द्दमों की भरमार है, वह सब इसी इन्तिक़ामी जज़्बे का नतीजा है। लोग दूसरों की तरफ़ से होने वाली शिकायत या तकलीफ़ को भुला नहीं पाते। वे फ़ौरन प्रतिक्रिया का शिकार हो जाते हैं और जवाबी कार्रवाई करना शुरू कर देते हैं।

इस तरह जो झगड़े और मुक़द्दमे बढ़ते हैं उनका नुक़सान सिर्फ़ दूसरे आदमी को नहीं पहुंचता बल्कि उस आदमी को भी पहुंचता है जिसने जवाबी कार्रवाई करके दूसरे के ख़िलाफ़ बदला लेना चाहा था।

हर आदमी सुकून की ज़िन्दगी चाहता है। हर आदमी यह चाहता है

कि उसका समाज अम्न और शान्ति का समाज हो। यह मक़्सद उसी वक़्त हासिल हो सकता है जबकि लोगों के अन्दर बदला न लेने का स्वभाव पैदा हो जाए। यही हर मसले का एकमात्र हल है। इसी से हर आदमी को सुकून हासिल हो सकता है। और पूरा समाज भी इसी के ज़रिए अम्न और शान्ति से रह सकता है।

जब भी आप किसी से इन्तिक़ाम लें तो इन्तिक़ाम लेने में आप अपनी ताक़त ख़र्च करते हैं। काफ़ी पैसा और काफ़ी वक़्त ख़र्च किए बग़ैर कोई आदमी दूसरे से बदला नहीं ले सकता। मान लीजिए, अगर आदमी बदला लेने में कामयाब हो जाए तब भी बदला लेकर उसको जो चीज़ हासिल होती है वह सिर्फ़ एक टेम्परेरी सुख है, उससे ज़्यादा और कुछ नहीं।

लेकिन यही वक़्त और रक़म किसी पोज़िटिव चीज़ को हासिल करने में लगा दिए जाएँ तो वह फ़ायदे के साथ आदमी की तरफ़ लौटते हैं, जैसा कि उपरोक्त आदमी के साथ हुआ। इन्तिक़ाम लेने में ताकत को ख़र्च करना ताक़त को खोना है, और एक पोज़िटिव काम में ताक़त लगाना, ताक़त को और भी इज़ाफ़े के साथ दोबारा पा लेना है। ऐसी हालत में यह समझना मुश्किल नहीं कि अक़्लमन्द आदमी को दोनों में कौन-सा तरीक़ा इख़्तियार करना चाहिए।

मौत की ख़बर

रोज़ाना अख़बारों में जो ख़बरें होती हैं उनमें से एक मुस्तक़िल ख़बर वह है, जिसको मौत का कॉलम (शोक-समाचार) कहा जाता है। ये ख़ुशहाल घरानों में मौत की घटनाएं हैं। मरने वाले की तस्वीर के साथ उसकी मौत की ख़बर होती है और फिर बताया जाता है कि फ़लां तारीख़ को फ़लां जगह पर

उनकी आख़िरी रस्में अदा होंगी, दोस्त और रिश्तेदार वहां आकर दिवंगत की आख़िरी रस्मों में शामिल हों।

15 सितम्बर 1990 के अख़बार से दो मिसालें लीजिये। *टाइम्स आफ इंडिया* के आख़िरी पेज पर इसी क़िस्म की एक सचित्र ख़बर है। उसके शब्द ये हैं – रमेश गोयल का, जो कि एक बेहतरीन आदमी थे, बिल्कुल जवानी की उम्र में अचानक अमरीका में देहान्त हो गयाः

> Ramesh Goel, a good man has died suddenly at a very young age in U.S.A.

हिन्दुस्तान टाइम्स के पेज 4 पर एक सचित्र ख़बर इस तरह छपी हुई है — बहुत दुख और अफसोस के साथ हम ख़बर दे रहे हैं कि हमारे प्रिय पी.एस. पाथेजा का 9 सितम्बर को एक कार दुर्घटना में अचानक और बेवक़्त निधन हो गयाः

> With profound grief and sorrow, we inform the sudden and untimely demise of our beloved P.S. Patheja in a car accident on September 9, 1990.

मौत हमारी दुनिया की एक आम घटना है। किसी आदमी की मौत के बाद उसके वारिस या उसके जानने वाले अपनी ज़िम्मेदारी सिर्फ़ यह समझते हैं कि सामाजी रिवाज के मुताबिक़ उसकी आख़िरी रस्में (Last rites) अदा कर दें। हिन्दू अपने रिवाज के अनुसार, और मुसलमान और दूसरी क़ौमें अपने रिवाज के अनुसार।

लेकिन सिर्फ़ इतना ही काफ़ी नहीं। हक़ीक़त यह है कि दूसरे आदमी की मौत ख़ुद अपने लिए मौत की ख़बर है। मौत का असली फ़ायदा यह है कि मरने वाले की मौत को देख कर ज़िन्दा रहने वाले अपनी मौत को याद

करें। वे दूसरे के अंजाम को देख लें। मौत से नसीहत लेना सबसे बड़ा काम है, लेकिन यही वह काम है जिसको करने वाला आज की दुनिया में कोई नहीं।

कायनात मशीन नहीं

मौजूदा ज़माने में मशीनी इंसान बनाए गए हैं, जिनको आम तौर पर रोबोट (Robot) कहा जाता है। रोबोट देखने में आदमी की शक्ल का होता है। वह चलता है। वह बोलता है। वह काम करता है। मगर हक़ीक़त में वह एक मशीन होती है और उसमें कोई शऊर या (चैतन्य) नहीं होता। वह उसी तरह मैकानिकी अन्दाज़ में अमल करता है, जैसे इंसान की बनाई हुई दूसरी तमाम मशीनें।

लन्दन के एक दफ़्तर में एक रोबोट रखा गया था, ताकि वह चपरासी (office boy) के तौर पर काम कर सके। यह रोबोट जब तैयार होकर दफ़्तर में आया तो दफ़्तर की सेक्रेटरी मिस जैनी सेफ़ ने उसको अज़माइशी हरकत (trial run) देनी चाही। वह रोबोट की बैटरी जांच रही थीं कि रोबोट हरकत में आ गया। वह सेक्रेटरी के पीछे चलने लगा। अब यह हालत हुई कि सेक्रेटरी आगे-आगे भाग रही हैं और मशीन उनको पीछे से दौड़ा रही है। रोबोट इस तरह चल रहा था जैसे उसने कंट्रोल क़बूल करने से इन्कार कर दिया है। इस भाग दौड़ में एक नया टाइपराइटर टकरा कर ज़मीन पर गिर पड़ा और टूट गया। आख़िरकार बड़ी मुश्किल से रोबोट को क़ाबू में लाया गया (*हिन्दुस्तान टाइम्स*, 30 जून 1981)।

मौजूदा ज़माने में जो लोग ख़ुदा को नहीं मानते उनका कहना है कि कायनात इसके सिवा कुछ नहीं कि वह बहुत बड़ी मशीन है। वह बस उसी तरह चल रही है जिस तरह कोई 'रोबोट' मैकानिकी तौर पर चलता है। मगर

कायनात या ब्रह्माण्ड का खरबों साल से बेहद संगठित तौर पर एक सी हालत में चलना इस मान्यता का खंडन कर रहा है। अगर कायनात महज़ एक मैकानिकी मशीन होती, जैसे रोबोट, तो यक़ीनन उसमें बार-बार उसी क़िस्म के टकराव होते जैसा कि लन्दन के आफ़िस में ऊपर उल्लेखित घटना में हुआ।

क़ुरआन में है:

> "और सूरज, वह अपनी ठहराई हुई राह पर चलता रहता है। यह प्रभुत्वशाली (अज़ीज़) व ज्ञानवान (अलीम) का बांधा हुआ अंदाज़ा है। (39) और चांद के लिए हमने मंज़िलें मुक़र्रर कर दीं, यहां तक कि वह ऐसा रह जाता है जैसे खजूर की पुरानी शाख़। (40) न सूरज के वश में है कि वह चांद को पकड़ ले और न रात दिन से पहले आ सकती है। और सब एक-एक दायरे में तैर रहे हैं। (36:38-40)।

क़ुरआन का यह बयान मौजूदा ज़माने में एक साबितशुदा इन्सानी अनुभव बन चुका है और यही सच्चाई इस बात को साबित करने के लिए काफी है कि यहां एक बुद्धिमान हस्ती है जो पूरी कायनात को नियंत्रित कर रही है। उसके बिना इस ब्रह्मांड में ऐसी व्यवस्था और नियमितता इतने सटीक और सफल रूप में संभव नहीं हो सकती।

कोई उस जैसा नहीं

क़ुरआन में ख़ुदा के बारे में ये शब्द आये हैं कि उस जैसी कोई चीज़ नहीं (अल-शूरा, 42:11)। ख़ुदा हर लिहाज़ से एक बड़ी हस्ती है। उसका बड़ा

और महान होना ही उसको यह हैसियत देता है कि वह तमाम मौजूद चीज़ों का ख़ुदा ठहरे, सबके सब उसके आगे झुक जाएं। सबके सब उसको अपना बड़ा बना कर उसके मुक़ाबले में छोटा बनने पर राज़ी हो जाएं।

ख़ुदा अपने आप क़ायम है। इंसान पैदा किए जाने से पैदा होता है। पर ख़ुदा इससे ऊपर है कि कोई उसको पैदा करे। ख़ुदा का अस्तित्व एक स्थायी अस्तित्व है। वह हमेशा से है और हमेशा रहेगा। वह एक है। वह सबसे बेनियाज़ (निःस्पृह) है। उसका न कोई बाप है और न कोई उसका बेटा। उसके बराबर कोई नहीं। (क़ुरान, 112:1-4)

ख़ुदा 'नहीं' से 'है' को पैदा करने की ताक़त रखता है। वही है जिसने तमाम ग़ैर-मौजूद चीज़ों को मौजूद किया। पदार्थ और क्रिया और प्रकाश और ऊर्जा और चेतना के रूप में जो कुछ आज सृष्टि में दिखाई देता है वह सब उसी का पैदा किया हुआ है। उसी ने तमाम चीज़ों को अस्तित्व दिया।

ख़ुदा परोक्ष (ग़ैब) का ज्ञान रखता है। वह अतीत और वर्तमान के साथ-साथ भविष्य को भी पूरी तरह जानता है। ख़ुदा की इसी विशेषता की वजह से यह मुमकिन हुआ कि वह सृष्टि की ऐसी मन्सूबाबंदी करे कि उसके तमाम हिस्से एक-दूसरे से तालमेल रखते हों। उनमें शाश्वत रूप से कोई दोष पैदा न हो सके।

ख़ुदा एक जिन्दा हस्ती है। वह नींद और थकान और कमज़ोरी से ऊपर है, (क़ुरान, 2:255) वह अपनी व्यापक सृष्टि का अनवरत संचालन कर रहा है। यही वजह है कि करोड़ों-अरबों साल गुज़रने के बाद भी ब्रह्मांड की गति बराबर जारी है। उसमें कभी अंतराल नहीं आया। उसमें कोई ख़राबी पैदा नहीं हुई।

ख़ुदा एक सर्वशक्तिवान हस्ती है। ख़ुदा अगर शक्तिवान न हो तो इंसान के पास शक्ति कहां से आए? ख़ुदा तमाम चीज़ों को देखने वाला है। ख़ुदा अगर न देखे तो इंसान भी देखने से महरूम रहे। ख़ुदा चेतना और बोध का

मालिक है। ख़ुदा अगर चेतना और बोध का मालिक न हो तो इंसान के पास न चेतना होगी और न ही वह किसी चीज़ का बोध कर सकेगा। ख़ुदा सब कुछ है। ख़ुदा उन विशेषताओं का मालिक भी है, जिनको हम जानते हैं और उन गुणों का मालिक भी जिनको हम नहीं जानते। मौजूदा दुनिया में ख़ुदा का सृजन प्रकट हुआ है, आख़िरत में ख़ुदा का शासन अपने खुले हुए रूप में प्रकट हो जाएगा।

आह यह इंसान

इंसान ख़ुदा को नाराज़ करने वाले अल्फ़ाज़ बोलता है। वह भूल जाता है कि उसका ख़ुदा उसको देख रहा है। इंसान जहन्नमी कर्म (बुरे कर्म) करता है, हालांकि जहन्नम की एक आंच सहने की ताक़त भी उसके अन्दर नहीं। आह, कितना ज़्यादा कमज़ोर है इंसान, इसके बावजूद वह कितना ज़्यादा ढीट बना हुआ है!

इंसान के सामने एक सच्चाई आती है, जिसका वह इन्कार न कर सके। इसके बावजूद वह उसको हिक़ारत (घृणा) के साथ नज़र अन्दाज़ कर देता है। इंसान की ग़लती दिन की रोशनी की तरह उस पर खोल दी जाती है, फिर भी वह अपनी ग़लती को नहीं मानता। इंसान के पास अपने नासेह (नसीहत करने वाला) की बात को ठुकराने के लिए कोई दलील नहीं होती, लेकिन वह ऐब निकाल कर और इल्ज़ाम लगा कर ज़ाहिर करता है कि नासेह (नसीहत करने वाले) इस क़ाबिल ही नहीं कि उसकी बात मानी जाए।

इंसान ख़ुद ज़ालिम होता है और वह दूसरे के ज़ुल्म का एलान करता है। इंसान अपने क़दमों के नीचे फ़साद बरपा किए हुए होता है और दूसरों को फ़सादी कह कर उन्हें तबाह करने की मुहिम चलाता है। इंसान अपने कर्तव्यों

की अदायगी में आख़िरी हद तक ग़ाफ़िल होता है और दूसरे के कर्तव्यों का झंडा उठा कर ज़मीन व आसमान एक कर देना चाहता है।

इंसान अपनी क़ियादत और सरदारी की ख़ातिर झूठे नारे लगाता है, चाहे इसके नतीजे में पूरी क़ौम तबाह व हलाक हो जाए। इंसान अपने को बड़ा बनाने के लिए दूसरे को छोटा कर देना चाहता है, चाहे दूसरे को छोटा करने की यह कोशिश ख़ुदाई हक़ीक़त को छोटा करने जैसी हो। इंसान ख़ुशख़्यालियों में जीता है, हालांकि इस दुनिया में हक़ीक़त के सिवा कोई चीज़ नहीं, जहां आदमी को ज़िन्दगी का साया मिल जाए।

इंसान का यह हाल है कि वह बिल्कुल बेहक़ीक़त होता है और अपने को हक़ीक़त के रूप में ज़ाहिर करता है। इंसान अपनी बड़ाई के मीनार को बाक़ी रखने के लिए अपनी सारी ताक़त लगा देता है, हालांकि आख़िरकार जो वाक़िया होने वाला है, वह यह कि वह और उसके बड़ाई का मीनार दोनों एक ही क़ब्रिस्तान में हमेशा के लिए दफ़न हो जाएं। ख़ुदा ने इंसान को जन्नत में बसने के लिए बनाया था, मगर इंसान को नरक के रास्तों में दौड़ने के सिवा किसी और चीज़ से कोई दिलचस्पी नहीं।

सादा हल

एक साहब ने अपना वाक़िया लिखा है। वह एक रेगिस्तानी इलाक़े में गए। वह तांगे पर सफ़र कर रहे थे। इतने में आंधी के आसार दिखाई दिए। तांगे वाले ने अपना तांगा रोक दिया। उसने बताया कि इस इलाक़े में बड़ी ख़तरनाक आंधी आती है, वह इतनी तेज़ होती है कि बड़ी-बड़ी चीज़ों को उड़ा ले जाती है। और आसार बता रहे हैं कि इस वक़्त उसी तरह की आंधी आ रही है। इसलिए आप लोग तांगे से उतर कर अपने बचाव की तदबीर करें।

आंधी क़रीब आ गई तो हम लोग एक पेड़ की तरफ़ बढ़े कि उसकी आड़ में पनाह ले सकें। तांगे वाले ने हमें पेड़ की तरफ़ जाते हुए देखा तो व चीख़ पड़ा। उसने कहा कि पेड़ के नीचे हरगिज़ न जाना। इस आंधी में बड़े-बड़े पेड़ गिर जाते हैं। इसलिए इस मौक़े पर पेड़ के नीचे छुपना बहुत ख़तरनाक है, उसने कहा कि इस आंधी के मुक़ाबले में बचाव का एक ही तरीक़ा है। वह यह कि आप लोग खुली ज़मीन पर औंधे लेट जाएं।

हमने तांगे वाले के कहने पर अमल किया और ज़मीन पर मुंह नीचे करके लेट गए। आंधी आई और बहुत ज़ोर के साथ आई। वह बहुत से पेड़ों और टीलों को उड़ा ले गई। लेकिन यह सारा तूफ़ान हमारे ऊपर से गुज़रता रहा। ज़मीन की सतह पर हम महफ़ूज़ पड़े रहे। कुछ देर के बाद जब आंधी का ज़ोर ख़त्म हुआ तो हम उठ गए। हमने महसूस किया कि तांगे वाले की बात बिल्कुल ठीक थी। (*ज़िकरा*, नवम्बर 1989)

आंधियां उठती हैं तो उनका ज़ोर हमेशा ऊपर-ऊपर रहता है। ज़मीन की नीचे की सतह उसके सीधे ज़ोर से बची रहती है। यही वजह है कि आंधी में खड़े हुए पेड़ तो उखड़ जाते हैं पर ज़मीन पर फैली हुई घास उसी तरह क़ायम रहती है। ऐसी हालत में आंधी से बचाव की सबसे ज़्यादा कामयाब तरकीब यह है कि अपने आपको वक़्ती तौर पर नीचा कर लिया जाए।

यह क़ुदरत का सबक़ है, जो बताता है कि ज़िन्दगी के तूफ़ानों से बचने का तरीक़ा क्या है। इसका सादा तरीक़ा यह है कि जब आंधी उठे तो वक़्ती तौर पर अपना झंडा नीचा कर लो। कोई शख़्स भड़काने वाली बात कहे तो तुम उसकी तरफ़ से अपने कान बंद कर लो। कोई तुम्हारी दीवार पर कीचड़ फेंक दे तो उसके ऊपर पानी बहा कर उसे साफ़ कर दो। कोई तुम्हारे ख़िलाफ़ नारेबाज़ी करे तो तुम उसके लिए दुआ करने में लग जाओ।

ख़ामोशी

एक रिवायत के मुताबिक़, पैगंबर मुहम्मद ने फ़रमाया कि हया (लज्जा) और कम बोलना ईमान में से है। सूफ़ियों ने भी कहा है कि जिस शख़्स को अल्लाह की पहचान हो जाए, उसकी ज़ुबान बोलने से थक जाएगी।

जिस तरह ख़ाली बर्तन ज़्यादा आवाज़ करता है, और जो बर्तन भरा हुआ हो उसमें आवाज़ कम हो जाती है, कम पानी में पत्थर फेंकें तो बहुत ज़्यादा लहरें पैदा होंगी, मगर समुन्दर में पत्थर फेंकिए तो उसमें पत्थर की वजह से लहरें नहीं उठेंगी। यही मामला इंसान का है। ख़ाली इंसान ज़्यादा बोलता है और भरा हुआ इंसान हमेशा कम बोलता है।

अल्लाह की पहचान सबसे बड़ी हक़ीक़त की पहचान है। आदमी जब अल्लाह को उसकी अथाह महानताओं के साथ पाता है, तो अपना वजूद उसको बिल्कुल तुच्छ मालूम होने लगता है। उसको महसूस होने लगता है कि अल्लाह सब कुछ है और उसके मुक़ाबले में मैं कुछ नहीं। यह एहसास उसकी ज़ुबान को बन्द कर देता है। वह हैरानी की हालत में गुम होकर रह जाता है।

फिर यह कि अल्लाह की पहचान आदमी के अन्दर ज़िम्मेदारी और जवाबदेही की चेतना को जगाती है। वह महसूस करने लगता है कि हर एक काम और हर एक बोल का मुझे उस सर्वशक्तिमान के सामने हिसाब देना है। यह एहसास उसको मजबूर करता है कि वह नापतौल कर बोले। वह कहने से पहले सोचे और अपनी बात को जांच-परख ले। ख़ुदा की पहचान आदमी के अन्दर संजीदगी पैदा करती है और संजीदगी, ठीक अपने स्वभाव के मुताबिक़, आदमी को ख़ामोश कर देती है।

ख़ामोश आदमी यह बता रहा होता है कि वह गहरा आदमी है। वह ऊंची हक़ीक़तों को पाए हुए है। ख़ामोशी इस बात की अलामत है कि

आदमी बोलने से पहले सोचता है। वह करने से पहले अपने करने को तौलता है। ख़ामोशी फ़रिश्तों का चरित्र है। फ़रिश्ते ख़ामोश ज़ुबान में बोलते हैं। जिस आदमी को फ़रिश्तों का चरित्र हासिल हो जाए वह ख़ामोश ज़्यादा दिखाई देगा और बोलता हुआ कम।

पत्थर खिसक गया

बनी इसराईल के इतिहास की एक घटना पैगंबर मुहम्मद ने अपने साथियों को सुनाई। सुनने वालों में अब्दुल्लाह बिन उमर भी थे। वह इस घटना को इस तरह बताते हैं:

"तुम से पहले जो लोग गुज़रे हैं उनमें से तीन आदमी एक सफ़र पर निकले। चलते-चलते रात हो गई तो रात बिताने के लिए वे एक गुफ़ा में रुके। पहाड़ों पर अक्सर पत्थर गिरने (land slide) की घटनाएं होती रहती हैं। रात के वक़्त ऊपर से एक बड़ा सा पत्थर लुढ़क कर गिरा और इसकी वजह से गुफ़ा का मुंह बन्द हो गया। उन्होंने कहा कि इस चट्टान को हटाने का हमारे पास कोई उपाय नहीं है, सिवा इसके कि हम अपने नेक कामों का हवाला देकर अल्लाह से दुआ करें।

अब एक आदमी दुआ करने बैठा। उसने कहा, "ऐ ख़ुदा, मेरे मां-बाप बहुत बूढ़े हो चुके थे। मेरा नियम था कि रोज़ाना शाम को जब मैं अपने जानवर चरा कर लौटता तो जब तक मैं उन दोनों को दूध न पिला लेता, न ख़ुद दूध पीता और न किसी और को पिलाता। एक दिन मैं चारे की तलाश में दूर निकल गया। शाम को वापसी में इतनी देर हुई कि मेरे मां-बाप सो गए। मैंने उन दोनों के लिए दूध निकाल कर तैयार किया। जब उनके पास दूध लेकर पहुंचा तो दोनों को सोता हुआ पाया। मुझे यह अच्छा न लगा कि

मैं उनको जगाऊं और मुझको यह भी गवारा न था कि मैं उनसे पहले दूध पिऊं और अपने बच्चों को पिलाऊं। मैं उनके पास खड़ा हो गया। मेरे हाथ में प्याला था और मैं इस इतिज़ार में था कि जब वे जागें तो मैं उनको दूध पेश करूं। इसी हाल में सुबह हो गई। बच्चे मेरे पांव के पास बिलबिला रहे थे। सुबह मेरे मां-बाप उठे और उन्होंने दूध पिया। उसके बाद हम सब लोगों ने दूध पिया। मेरे अल्लाह, यह नेक अमल मैंने तेरी खुशी के लिए किया है तो इस चट्टान की मुसीबत से तू हमको छुटकारा दे दे।" इसके बाद चट्टान थोड़ी-सी खिसक गई, पर इतनी नहीं कि वे तीनों निकल सकें।

अब दूसरे आदमी ने दुआ शुरू की। उसने कहा, "ऐ ख़ुदा, मेरे चाचा की एक लड़की थी। वह मुझे बहुत प्रिय थी। उससे मुझे उसी क़िस्म की सख़्त मुहब्बत थी जो मर्दों को औरतों से होती है। मैंने उससे अपनी काम-वासना तृप्त करनी चाही पर वह मना करती रही। कुछ अर्से बाद अकाल पड़ा और वह मुसीबत में फंस गई। वह मदद के लिए मेरे पास आई। मैंने उसको 120 दीनार इस शर्त पर दिए कि वह मुझको अपने ऊपर क़ाबू दे दे। वह इसके लिए तैयार हो गई। यहां तक कि जब मैं उसके ऊपर पूरी तरह हावी हो गया और उसके दोनों पैरों के बीच बैठ गया तो उसने कहा, 'ख़ुदा से डर' तो मैंने उसे छोड़ दिया हालांकि वह मुझको तमाम लोगों में सबसे ज़्यादा प्रिय थी। और जो दीनार मैंने उसको दिए थे वे भी उससे वापस नहीं लिए। ऐ ख़ुदा, अगर मैंने यह काम तेरी खुशी के लिए किया है तो उस मुसीबत से तू हमको निकाल जिसमें हम इस वक़्त फंसे हुए हैं। "तो चट्टान थोड़ी-सी और हट गई, पर इतनी नहीं कि वे निकल सकें।

अब तीसरे आदमी ने दुआ की। उसने कहा, "ऐ ख़ुदा, मैंने कुछ मज़दूरों से काम कराया। काम के बाद मैंने सबको मज़दूरी दे दी। पर एक मज़दूर अपनी मज़दूरी छोड़ कर चला गया। मैंने उसकी छोड़ी हुई रक़म को कारोबार में लगा दिया। उससे मुझको बहुत ज़्यादा फायदा हुआ। कुछ अर्से

बाद वह आदमी वापस आया और कहा, 'ऐ अल्लाह के बन्दे! मेरी मज़दूरी मुझे दे दे।' मैंने उससे कहा, 'ये ऊंट, ये गायें, ये बकरियां और ये गुलाम जो तुम देख रहे हो, यह सब तुम्हारी मज़दूरी है।' उसने कहा, 'ऐ ख़ुदा के बन्दे! मुझसे मज़ाक़ न कर।' मैंने उससे कहा कि मैं तुमसे मज़ाक़ नहीं कर रहा हूं। यह सब तुम्हारा ही है। उसके बाद उसने सब चीजें लीं और उनको इस तरह हंका ले गया कि उनमें से कुछ भी न छोड़ा। ऐ ख़ुदा, अगर मैंने यह तेरी खुशी के लिए किया तो इस मुसीबत से तू हमको छुटकारा दे दे।" इसके बाद चट्टान हट गई और वे तीनों बाहर निकल कर रवाना हो गए" (सहीह अल-बुख़ारी, हदीस संख्या 5974)।

यह रिवायत सहीह हदीसों में आई है और इसके सच होने में कोई शक नहीं। इससे साबित होता है कि दुआ ऐसी चीज़ है जो पत्थर की चट्टान को भी अपनी जगह से खिसका देती है। पर यह वह दुआ नहीं है जो मुंह से सिर्फ शब्दों के रूप में निकलती है और आदमी की वास्तविक ज़िन्दगी से उसका कोई ताल्लुक नहीं होता।

उपरोक्त मिसाल बताती है कि दुआ से चट्टान खिसकाना उन लोगों के लिए संभव होता है जो अपने आपको पूरी तरह ख़ुदा के हवाले कर दें, जो पूरी तरह ख़ुदा को अपने ऊपर संरक्षक बना लें। यहां तक कि भूख की मार और बीवी बच्चों की मुहब्बत भी उनको ख़ुदा की पसंदीदा राह से न हटा सके।

बेहद नाज़ुक और भावुक घड़ियों में भी ख़ुदा की याद दिलाना उनको चौंका देने के लिए काफ़ी हो। चिन्ता के क्षणों में भी जब ख़ुदा का नाम लिया जाए तो उनके चलते हुए क़दम रुक जाएं और उनके उठे हुए हाथ अपनी हरकत बन्द कर दें। आख़िरत के हिसाब का भय उन पर इतना ज़्यादा छाया हो कि एक हक़दार का हक़ चुकाने की ख़ातिर अगर उनको अपनी सारी पूंजी देना पड़े तो इससे भी वे हिचकिचाएं नहीं। एक आदमी अगर अपना

हक मांगने के लिए खड़ा हो जाए तो वे फ़ौरन उसको मान लें, चाहे मांग करने वाला कितना ही कमज़ोर हो और उसके मुकाबले में उनको कितनी ही ज़्यादा ताक़त हासिल हो।

ख़ुदा के बन्दे वे हैं जो अपनी वासनाओं और इच्छाओं को कुचल कर और अपने फ़ायदों की बलि देकर ख़ुदा को अपनाते हैं। और जो लोग इस तरह ख़ुदा को अपना लें वे अगर कहें कि ऐ ख़ुदा, तू इस पत्थर की चट्टान को खिसका दे तो ख़ुदा पत्थर की चट्टान को भी उनके लिए खिसका देता है।

भविष्यवाणी योग्य चरित्र

क़ुरआन में पसंदीदा बन्दों की विशेषता यह बताई गई है कि वे अपने वादे को पूरा करने वाले लोग हैं, कि वे किसी से वादा कर लें तो उसे ज़रूर पूरा करते हैं। यह बिल्कुल वही नैतिक गुण है, जिसे हमने भविष्यवाणी के योग्य चरित्र कहा है, अर्थात एक ऐसा व्यक्ति जिसके आचरण और प्रतिक्रियाएँ समाज में दूसरों के लिए स्पष्ट और अनुमानित हों।

जिस तरह लोहे के ऊपर किसी छत को खड़ा किया जाए तो पहले से यह यकीन होता है कि वह छत के बोझ को संभाल लेगा, इसी तरह जब एक इंसान दूसरे इंसान से कोई वादा करे तो पहले से यह विश्वास होना चाहिए कि वह ज़रूर उस वादे को पूरा करेगा, वह किसी हाल में भी उससे नहीं हटेगा।

इसी बात को एक हदीस में इस तरह बयान किया गया है कि मुनाफ़िक़ (पाखंडी) आदमी की तीन निशानियां हैं— जब वह बात करे तो झूठ बोले, जब वह वादा करे तो उससे फिर जाए जब उसको अमानत सौंपी जाए तो वह अमानत में खयानत करे। (सहीह अल-बुख़ारी, हदीस संख्या 2682)

उपरोक्त तीनों बातें भविष्यवाणी के योग्य चरित्र के ख़िलाफ़ हैं। जब

किसी इंसान से बात की जाती है तो इस विश्वास पर की जाती है कि वह सही बात कहेगा, वह झूठ और ग़लत बयानी से काम नहीं लेगा। अब अगर वह सत्य के विपरीत बोलने लगे तो उसने उम्मीद के विरुद्ध कार्य किया। इसी तरह जब किसी से वचन लिया जाता है तो इस विश्वास पर लिया जाता है कि वह इस वचन पर अडिग रहेगा। अब अगर आदमी अपने वचन से फिर जाए या उसके विरुद्ध काम करने लगे तो उसने अपने बारे में किए गए भरोसे को तोड़ दिया।

इसी तरह जब कोई अमानत (धरोहर) किसी को सौंपी जाती है तो इसी भरोसे पर सौंपी जाती है कि वह वक़्त पर उसे पूरी-पूरी लौटा देगा। अब अगर वह समय पर अमानत उसके हक़दार को न लौटाए तो इसका मतलब यह है कि वह भविष्यवाणी के योग्य (या विश्वसनीय) चरित्र का आदमी नहीं है।

कायनात अपने भविष्यवाणी के योग्य चरित्र के कारण कामिल (सही प्रामाणिक और सम्पूर्ण) है। इसी तरह इंसान भी उसी हालत में ‘कामिल’ हो सकता है जब वह भविष्यवाणी के योग्य चरित्र वाला बन जाए।

शरीर का सारा ख़ून

प्रोफ़ेसर पाल डिरॅक (Paul Dirac) 1902 में पैदा हुए। अक्तूबर 1984 में उनकी 82 साल की उम्र में फ्लोरिडा में मृत्यु हुई। वह आधुनिक दौर में न्यूटन (Newton) और आइंस्टाइन (Einstein) के बाद सबसे ज़्यादा मुमताज़ और बड़े साइंसदां समझे जाते हैं। उनको नोबेल प्राइज़ और दूसरे बहुत से इनाम व सम्मान हासिल हुए।

पाल डिरॅक के नाम के साथ क्वांटम मेकानिकल थ्योरी (Quantum Mechanic Theory) जुड़ी हुई है। यह साइंसी नज़रिया (सिध्दांत) एटम

के बेहद छोटे ज़र्रात (कणों) के बारे में है। उन्होंने सबसे पहले एंटी मीटर की पेशीनगोई (भविष्यवाणी) की जो बाद में ज़्यादा तहक़ीक़ात से साबित हो गया। गार्जियन (4 नवम्बर 1984) ने पाल डिरॅक पर लेख छापा तो उसकी सुर्ख़ी इस तरह लगाई:

Prophet of the Anti-Universe.

पाल डिरॅक ने एटम में पहला एंटी पार्टिकल खोजा, जिसे पाज़िट्रान (Positron) कहा जाता है। 'इस खोज ने न्यूक्लेयर फ़िज़िक्स में एक इंक़िलाब बरपा कर दिया। लोग जब पाल डिरॅक से पूछते कि आपने सब-एटोमिक की नौइयत (प्रकृति) और विशेषताओं के बारे में अपना चौंका देने वाला नज़रिया कैसे खोज निकाला तो वह बताते कि वह अपने स्टडी रूम में इस तरह फ़र्श पर लेट जाते थे कि उनका पाँव ऊपर रहता था ताकि ख़ून उनके दिमाग़ की तरफ़ दौड़े:

> When people asked him how he got his startling ideas about the nature of sub-atomic matter, he would patiently explain that he did so lying on the floor of his study with his feet up so that the blood rushed to his head.

देखने में यह एक लतीफ़ा लगता है। लेकिन हक़ीक़त यह है कि कोई बड़ा फ़िक्री और बौद्धिक काम वही शख़्स कर पाता है जो अपने सारे जिस्म का ख़ून अपने दिमाग़ में समेट दे।

ज़्यादातर लोगों का हाल यह होता है कि वे अपनी क्षमता को विभाजित किए हुए होते हैं। वे अपने आपको एक केन्द्र पर एकाग्र नहीं कर पाते इसीलिए वे एक अधूरी ज़िन्दगी गुज़ार कर इस दुनिया से चले जाते हैं।

हर काम आदमी से उसकी पूरी क्षमता मांगता है। वही शख़्स बड़ी कामयाबी हासिल करता है जो अपनी पूरी क्षमता को एक काम में लगा दे।

आदमी की परख

अल्लामा इब्ने क़य्यिम (691-751 हि.) ने अपनी किताब तरीक़ुल हिजरतेन में एक घटना का इस तरह उल्लेख किया है:

> हज़रत सहल बिन सअद कहते हैं कि रसूलुल्लाह ने सूर: मुहम्मद की यह आयत तिलावत की, "क्या ये लोग कुरआन में ग़ौर नहीं करते या दिलों पर उनके ताले लगे हुए हैं।" उस वक़्त रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पास एक लड़का बैठा हुआ था। उसने आयत सुन कर कहा, "हां, ख़ुदा की क़सम, ऐ अल्लाह के रसूल, बेशक दिल पर उसके ताले हैं। और उनको कोई नहीं खोल सकता, सिवा उसके जिसने उसको लगाया है।" फिर जब हज़रत उमर बिन ख़त्ताब खलीफा हुए तो उन्होंने उस लड़के को बुलाया, ताकि उसको किसी काम पर लगाएं और उन्होंने कहा, "लड़के ने यह जो बात कही वह अक़्ल से कही।" (अल-क़ज़ा वल-क़द्र, अल-बैहक़ी, हदीस संख्या 336)

जो लोग किसी टीम या समाज के काम की ज़िम्मेदारी संभालते हैं, उनके लिए हर इंसान की अहमियत बहुत होती है। किसी संस्था या बड़े काम को अच्छे से पूरा करने में यही लोग मददगार होते हैं। ऐसे काबिल लोग समाज में हमेशा मौजूद रहते हैं। लेकिन जो लोग इन लोगों को चुनने

की ज़िम्मेदारी लेते हैं, उनमें एक खास बात होनी चाहिए — उन्हें इंसान की असली काबिलियत को देखकर ही उसका चुनाव करना चाहिए, न कि किसी और वजह से।

किसी संस्था के ज़िम्मेदार में अगर पक्षपात हो; अगर वह खुशामदी इन्सानों को पसंद करता हो; अगर वह यह चाहता हो कि उसके आसपास के तमाम लोग उससे कमतर सलाहियत वाले हों, ताकि उसकी निजी बड़ाई कायम रहे-ज़िम्मेदार के अन्दर अगर इस क़िस्म का मिज़ाज हो तो वह संस्था को बेकार इन्सानों का कबाड़खाना बना देगा। इसके उलट अगर उसके अन्दर वह मिज़ाज हो, जिसका एक नमूना ऊपर की घटना में नज़र आता है तो उसका संगठन एक ऐसा बाग़ होगा, जिसमें हर किस्म के बेहतरीन पेड़-पौधे लगे हुए हों और हमेशा वह अपना फल-फूल देता रहें।

इच्छा-सूची

क्लियरी सिम्पसन अमरीका की एक उच्च शिक्षित महिला हैं। शिक्षा पूरी करने के बाद वह अस्थायी तौर पर विभिन्न काम करती रही हैं। यहां तक कि उनकी आकांक्षाओं के मुताबिक उनको अमरीकी पत्रिका टाइम में अपनी पसंद का काम मिल गया। इस समय वह टाइम के न्यूयार्क के दफ्तर में एडवरटाइजिंग सेल्स डायरेक्टर हैं।

टाइम के 15 अगस्त 1991 के अंक (पेज 4) में उनका हंसता हुआ फोटो छपा है। वह इस पद के मिलने पर बेहद खुश हैं। तस्वीर के नीचे उनका बयान इन शब्दों में दिया गया है —टाइम के लिए काम करना हमेशा से मेरी इच्छा सूची में था:

Working for *Time* was always on my wish list.

हर आदमी किसी चीज़ को सब से बड़ी चीज़ समझता है, वह उसकी तमन्ना में जीता है, वह उसका सपना देखता है, उसके सुबह-शाम उसकी यादों में गुज़रते हैं। वह इस इंतिज़ार में रहता है कि कब वह दिन आए जब वह अपनी इस प्रिय चीज़ को पा ले। यह चीज़ उसकी इच्छा सूची में सब से ज़्यादा अहमियत के साथ दर्ज होती है। मौजूदा दुनिया में कोई भी ऐसा आदमी नहीं जिसके लिए कोई न कोई चीज़ इस तरह आकांक्षा केन्द्र न बनी हुई हो।

आस्थावान वह है जिसने जन्नत को अपनी इच्छा-सूची (विश लिस्ट) में लिख रखा हो- हमेशा कायम रहने वाली उच्चस्तरीय नेमतों की वह दुनिया जहां वह अपने रब को देखेगा, जहां सच्चे इन्सानों से उसकी मुलाकात होगी, जहां वह ख़ुदा की रहमतों के साए में ज़िन्दगी गुज़ारेगा। वह दुनिया जो व्यर्थ और अशोभनीय बातों से मुक्त होगी, जहां अनाचार और ज़ोर-ज़बरदस्ती समाप्त कर दी जाएगी, और जिसका वातावरण हर ओर हम्द (ईश्वर की महिमा-गान), सलामती और शांति से भरपूर होगा, जहां डर और रंज को ख़त्म कर दिया जाएगा, जहां ऐसी आज़ादी होगी जिस पर कोई क़ैद नहीं, जहां ऐसी लज्ज़तें होंगी, जिनकी कोई सीमा नहीं।

जब किसी शख़्स पर ज़िन्दगी की हक़ीक़त खुलती है तो वह यह भी जान लेता है कि उसके लिए सबसे बड़ी चीज़ जन्नत है। वह जन्नत का लालसी बन जाता है। और जन्नत उसके लिए है जो लालसा की हद तक जन्नत का तलबगार बन गया हो।

ये विशेषज्ञ

प्रोफेसर राज कृष्ण (1925-1985) भारत के पचास बड़े प्रतिभाशाली लोगों में गिने जाते थे।

अर्थशास्त्र में ग़ैर-मामूली महारत की वजह से वह अंतर्राष्ट्रीय शोहरत के मालिक थे। वह देश के बड़े-बड़े आर्थिक पदों पर रहे। आख़िर में वह एफ.ए.ओ. (फ़ूड एंड एग्रीकल्चर आर्गेनाइज़ेशन) के एक प्रोजेक्ट के तहत तीन महीने के लिए रोम (इटली) गए थे। अभी वह अपना काम पूरा भी न कर सके थे कि 21 मई 1985 को अचानक हृदय गति रुक जाने से उनका देहांत हो गया। उनकी उम्र सिर्फ़ 59 साल थी (टाइम्स ऑफ इंडिया, 22 मई 1985)

प्रोफेसर राज कृष्ण कृषि अर्थशास्त्र के एक माने हुए विशेषज्ञ थे। उन्होंने इस समस्या का विशेषज्ञता के साथ अध्ययन किया था कि तीसरी दुनिया के ग़रीबी के माहौल में रोज़गार का मसला किस तरह हल किया जाए:

> He was an acknowledged expert in agricultural economics and had specialised in the study of employment conditions of poverty in the third world.

कैसे अजीब होंगे दुनिया की समस्याओं के वे विशेषज्ञ जिनको ख़ुद अपने मसले की ख़बर न हो।

इंसान का हाल भी कैसा अजीब है। वह अपने कल को नहीं जानता और दूसरों के भविष्य पर रिसर्च करता है।

वह ख़ुद वैचारिक दरिद्रता से ग्रस्त होता है और दूसरों की आर्थिक दरिद्रता पर भाषण के चमत्कार दिखाता है।

दुनिया की समस्याओं पर विशेषज्ञता के लिए उसे बड़े-बड़े सम्मान

दिए जाते हैं, लेकिन तजुर्बे के बाद पता चलता है कि वह अपने निकटतम मसले का जानकार भी नहीं था।

कैसा अजीब है लोगों का जानना और कैसा अजीब है उनका न जानना!

तरतीब

ऊंची इमारतों में आटोमैटिक लिफ्ट लगी होती है। आप उसके अन्दर दाख़िल होकर बटन दबाते हैं और वह आपको उस मंज़िल तक पहुंचा देती है, जहां आप जाना चाहते हैं।

मान लीजिए कि चार आदमी एक ही वक़्त में लिफ्ट के अन्दर दाख़िल होते हैं। आपको दूसरी मंजिल तक जाना है और बाक़ी लोग दसवीं और ग्यारहवीं मंज़िल पर जाने वाले हैं। अब अगर दूसरे लोग पहले अपने नम्बर वाला बटन दबा दें और आप अपना नम्बर बाद में दबाएं तो ऐसा नहीं होगा कि लिफ्ट पहले ऊपर चली जाए और बाक़ी लोगों को दसवीं और ग्यारहवीं मंज़िल पर उतारे और उसके बाद नीचे आकर आपको दूसरी मंज़िल पर पहुंचाए। बटन दबाने की बेतरतीबी के बावजूद ऐसा होगा कि लिफ्ट पहले दूसरी मंजिल के मुसाफिर को उतारेगी, उसके बाद वह ऊपर की मंज़िलों पर जाएगी।

ऐसा क्यों होता है? बटन दबाने की बेतरतीबी को वह अपने आप किस तरह बातरतीब बना लेती है। इसका जवाब कंप्यूटर है। आधुनिक लिफ्टों में कंप्यूटर लगा होता है। यह कंप्यूटर एक तरह के मशीनी दिमाग़ की तरह काम करता है। वह बटन दबाने की बेतरतीबी को मंज़िल की तरतीब

में बदल देता है और लिफ्ट को 'आदेश' देता है कि मंज़िल की वास्तविक तरतीब के हिसाब से मुसाफ़िरों को ऊपर ले जाए।

आटोमैटिक लिफ्ट ख़ुदा की एक मामूली रचना है। जब ख़ुदा की एक अदना सी रचना में यह क्षमता है कि वह ग़लत क्रम को सही क्रम में बदल दे तो यह क्षमता ख़ुद रचनाकार के अन्दर कितनी ज़्यादा होगी?

मौजूदा दुनिया इम्तिहान की दुनिया है। यहां इंसान को पूरी आज़ादी दी गई है। इस आज़ादी से फायदा उठा कर लोगों ने अपना नाम ग़लत तरतीब के साथ लिख लिया है। कोई तीसरे दर्जे का आदमी है, पर उसने अपना नाम नम्बर एक पर लिखा रखा है। कोई निचली सतह पर बिठाए जाने के काबिल है, पर उसने अपने आपको ऊंची सतह पर बिठा रखा है। कोई है जो सिरे से जिक्र के काबिल ही नहीं पर वह बनावटी तौर पर शोहरत के स्टेज पर जगह हासिल किए हुए है। आख़िर में तमाम ग़लत तरतीब दुरुस्त कर दी जाएगी। इसके बाद अदना दर्जे का आदमी अदना सीट पर पहुंचा दिया जाएगा। और ऊंचे दर्जे का आदमी ऊंची सीट पर।

बोलने का तरीक़ा

पैगंबर मुहम्मद का बोलने का तरीक़ा यह था कि आप हमेशा साफ़ अन्दाज़ में बोलते थे और अल्फ़ाज़ को ठहर-ठहर कर अदा करते थे। आपकी बीवी हज़रत आयशा (रज़ि.) ने बाद के ज़माने के लोगों से फरमायाः

> रसूलुल्लाह (स.अ.व.) तुम लोगों की तरह तेज़-तेज़ नहीं बोलते थे, बल्कि आपकी बात में ठहराव होता था। आप के पास बैठा हुआ आदमी उसको याद कर लेता था (सुनन अल-तिरमिज़ी, हदीस संख्या 3639)।

एक और रिवायत में ये अल्फ़ाज़ आए हैं:

> रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इस तरह तेज़-तेज़ बातें नहीं करते थे जैसे तुम करते हो, आप इस तरह बात करते थे कि अगर गिनने वाला गिने तो उसको गिन ले। (सहीह अल-बुखारी, हदीस संख्या 3567)

ईमान वाले का बोलना एक ऐसे शख़्स का बोलना होता है जो अल्लाह से डरने वाला हो। ईमान वाले को यक़ीन होता है कि उसका हर लफ़्ज़ फ़रिश्ते लिख रहे हैं। वह अपनी कही हर बात के लिए ख़ुदा के यहां जवाबदेह होने वाला है। ईमान वाले का यह यक़ीन उसके अन्दर ज़िम्मेदारी का एहसास पैदा कर देता है। वह जब बोलता है तो उसको ऐसा महसूस होता है जैसे वह ख़ुदा और फ़रिश्ते के सामने बोल रहा है। यह एहसास उसकी ज़ुबान पर लगाम लगा देता है, वह बोलने से पहले सोचता है, वह जब बोलता है तो अल्फ़ाज़ तोल कर अपने मुंह से निकालता है। ख़ुदा का ख़ौफ़ उससे जल्दी-जल्दी बोलने का अन्दाज़ छीन लेता है। परलोक में अपने कर्मों के उत्तर्दय्त्व का एहसास उसके बोलने के जोश में रुकावट बन जाता है।

जो इंसान इस तरह के गहरे एहसासों से प्रभावित होता है, वह बहुत गंभीर स्वभाव का हो जाता है। और गंभीर व्यक्ति की बातचीत का अंदाज़ वैसा ही होता है, जैसा हज़रत आयशा की ऊपर दी गई रिवायत में दिखता है।

महिला और पुरुष

औरत और मर्द के बीच दो विपरीत (opposite) संबंध हैं। और वह हैं— पूर्ण जैविक अनुकूलता (complete biological compatibility) के बावजूद पूर्ण जैविक भिन्नता (complete biological difference)। यह

सृष्टि का एक अनोखा संतुलन (unique balance) है, और यह एक अहम समाजी जीवन के मक़सद से है। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि सृष्टि की इस दूरदर्शिता को शायद किसी ने नहीं समझा।

कुरान में इस दूरदर्शिता को दो शब्दों में इस तरह व्यक्त किया गया है: "तुम एक दूसरे से हो।" (3:195)। कुरान की यह आयत संकेत की भाषा में थी। इसके विस्तार को विचार (तदब्बुर) के माध्यम से समझना था। लेकिन ऐसा लगता है कि इंसान ने इस सच्चाई को न तो कुरान के अध्ययन से समझा और न ही धर्मनिरपेक्ष (secular) अध्ययन के माध्यम से।

प्राचीन इतिहास में ऐसा हुआ कि मनुष्य ने महिला को पुरुष की तुलना में कम आंका। इस कारण वह प्रकृति के अनुसार, महिला की रचना का मक़सद समझ नहीं सका। इस कारण वह प्रकृति के अनुसार, महिला की रचना का मक़सद समझ नहीं सका। आधुनिक सभ्यता (modern civilization) के दौर में, लैंगिक समानता (gender equality) का विचार अपनाया गया। लेकिन यह आधुनिक विचार केवल प्राचीन विचार की प्रतिक्रिया (reaction) थी। इस तरह पुरानी और नयी सोच दोनों ही कमी और ज़्यादती का शिकार हुए और वास्तविक सच्चाई तक पहुंचने में विफल रहे।

प्राचीन सोच के अनुसार, यदि महिला और पुरुष के बीच लैंगिक असमानता (gender inequality) थी, तो आधुनिक सोच ने बताया कि महिला और पुरुष के बीच लैंगिक समानता है। लेकिन सच्चाई यह है कि महिला और पुरुष के बीच तक्मीली (पूरक) संबंध (gender complementarity) है।

रचनात्मक योजना के अनुसार, महिला और पुरुष एक-दूसरे के लिए गियर के दांत (cogwheel) की तरह हैं। वे एक-दूसरे के पूरक

(complement) हैं। दोनों में से प्रत्येक में एक अतिरिक्त विशेषता है जिसके द्वारा दोनों मिलकर सृष्टि-निर्माण योजना को पूरा करते हैं।

मापदंड को बुलन्द करना

पुराने ज़माने के अरब में बराबर की अख़्लाक़ियात (नैतिकता) का रिवाज था। उनकी ज़िन्दगी का उसूल यह था कि जो शख़्स जैसा करे उसके साथ वैसा ही किया जाए। यानी अच्छा सुलूक करने वाले के साथ अच्छा सुलूक और बुरा सुलूक करने वाले के साथ बुरा सुलूक। इस्लाम से पहले के ज़माने का एक शायर अपने प्रतिद्वंद्वी क़बीले के बारे में कहता है कि ज़ुल्म की कोई क़िस्म हमने बाक़ी नहीं छोड़ी। उन्होंने हमारे साथ जैसा किया था वैसा ही हमने उनको बदला दिया।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तश्रीफ़ लाए तो आपने अख़्लाक़ के इस उसूल को बदला। बराबरी के अख़्लाक़ के बजाय आपने उनको बुलन्द अख़्लाक़ की तालीम दी। आपने फ़रमाया कि "जो शख़्स तुम्हारे साथ बुरा सुलूक करे उसके साथ भी तुम अच्छा सुलूक करो" (कंज़ुल उम्माल, हदीस नंबर 6929)। एक और हदीस में है:

तुम लोग इम्मआ (मौक़ापरस्त-ख़ुदगर्ज़) न बनो, कि यह कहने लगो कि अगर लोग हमारे साथ अच्छा करें तो हम भी उनके साथ अच्छा करेंगे। और अगर वे ज़्यादती करें तो हम भी ज़्यादती करेंगे। बल्कि अपने आपको इसके लिए तैयार करो कि लोग तुम्हारे साथ अच्छा करें तो तुम उनके साथ अच्छा करोगे और अगर लोग तुम्हारे साथ बुरा करें तब भी तुम उनके साथ बुरा नहीं करोगे। (सुनन अल-तिर्मिज़ी, हदीस नंबर 2007)

आपकी एक सुन्नत यह भी है कि लोगों के शुऊर (चेतना) को बुलन्द

किया जाए। उनके अख़्लाक़ को ऊंचा किया जाए। उनकी हालत को हर लिहाज़ से ऊपर उठाने को की कोशिश की जाए।

इंसान की इंसानियत को बेहतर बनाना, सोच, ज्ञान और अच्छे व्यवहार के स्तर पर उसे ऊपर उठाना सबसे ज़रूरी काम है। इसी में आदमी की भलाई है और इसी में पूरे समाज की भलाई भी। यह ठीक पैग़म्बर की सुन्नत है और इसको ज़िन्दा करना पैग़म्बर की सुन्नत को ज़िन्दा करना है।

अजीब करिश्मा

इंसान का जिस्म कुछ माद्दी और भौतिक चीज़ों से मिल कर बना है। पानी, कार्बन, ऑक्सीजन और कुछ दूसरे रासायनिक तत्व। ज़ाहिरी तौर पर इंसान बस इसी क़िस्म के कुछ चीज़ों का मजमूआ (संकलन) है। राबर्ट पैटिसन (R. Pattison) ने इन्सानी जिस्म के इन भौतिक तत्वों का हिसाब लगाया तो उसने पाया कि बाज़ार के रेट के लिहाज़ से इनकी क़ीमत मात्र कुछ रुपये है।

लेकिन इन्हीं 'कुछ रुपये' के सामान से अल्लाह ने ऐसा अनमोल आदमी बनाया है, जो इतना क़ीमती है कि सिक्के में उसकी क़ीमत तय नहीं की जा सकती। सौ खरब रुपये भी एक इंसान की क़ीमत नहीं हो सकते।

इंसान के बेहद क़ीमती होने का अन्दाज़ा उस वक़्त होता है जबकि उसका कोई अंग उससे छीन लिया जाए। इंसान का एक हाथ कट कर उससे अलग हो जाए अरबों डालर अदा करके भी दोबारा वैसा हाथ उसको नहीं मिल सकता। इंसान की आंख अगर बेनूर हो जाए तो सारी दुनिया की दौलत भी उसको वह आंख नहीं दे सकती, जिससे वह दोबारा देखने लगे। इंसान की ज़ुबान अगर जाती रहे तो कोई भी क़ीमत अदा करके वह बाज़ार से ऐसी चीज़ नहीं पा सकता, जिससे वह बोले और अपने ख़यालात प्रकट कर सके।

कैसी अजीब है ख़ुदा की कारीगरी कि वह बेक़ीमत चीज़ों से बेइन्तिहा क़ीमती चीज़ बनाता है। वह मुर्दा चीज़ को ज़िन्दा चीज़ में तब्दील करता है। वह बेशऊर, बेजान पदार्थ से बाशऊर और जानदार मख़्लूक़ वजूद में लाता है। वह 'नहीं' से 'है' की रचना करता है।

अगर किसी जादूगर की छड़ी से एक पत्थर आवाज़ निकालने लगे, तो सब लोग हैरान रह जाएंगे। लेकिन खुदा तो अनगिनत इंसानों को माटी जैसे पदार्थ से बना कर खड़ा कर रहा है। मगर उसको देख कर किसी को हैरानी नहीं होती। कैसे अंधे हैं वे लोग, जिनको जादूगर के करिश्मे दिखाई देते हैं, मगर ख़ुदा के करिश्मे दिखाई नहीं देते। कैसे नासमझ हैं वे लोग जो झूठे करिश्मे दिखाने वालों के सामने पूरी श्रद्धा से झुक जाते हैं, लेकिन जो हस्ती सच्चे करिश्मे दिखा रही है, उसके प्रति उनके दिल में न श्रद्धा का भाव उमड़ता है और न ही प्रेम का जज़्बा।

हक़ीक़त यह है कि इंसान अगर ख़ुदा को पा ले तो वह उसके करिश्मों में गुम हो जाए। ख़ुदा के सिवा किसी दूसरी चीज़ का उसे होश न रहे।

सब से बड़ी ख़बर

30 जून 1985 ग्वालियर के लिए एक ऐतिहासिक दिन था। आज यहां के फौजी हवाई अड्डे पर विशेष चहल पहल थी। इसका कारण यह था कि भारत ने फ्रांस से जो आधुनिक सैनिक विमान मिराज 2000 खरीदा था उसको भारतीय हवाई सेना में शामिल करने की रस्म यहां अदा की जाने वाली थी।

एयर चीफ़ मार्शल लक्ष्मण माधव कात्रे (1926–1985) आज बहुत खुश दिखाई दे रहे थे। उन्होंने इस समारोह में पूरे उत्साह के साथ भाग लिया।

लेकिन एयर चीफ मार्शल इस शानदार समारोह से दिल्ली वापस लौटे थे कि उन पर दिल का दौरा पड़ा। उन्हें तेज़ी से फौजी अस्पताल ले जाया गया जहां चन्द घंटे बाद पहली जुलाई 1985 को उनका देहांत हो गया।

ख़बरों में बताया गया कि एयर चीफ़ मार्शल लक्ष्मण माधव कात्रे योग्यतम पायलट थे। उन्होंने कई लड़ाइयों में दुश्मन के ख़िलाफ़ हवाई लड़ाई का शानदार रिकार्ड कायम किया था। लेकिन दुश्मन के युद्ध विमानों को मार गिराने वाला शख़्स मौत के खामोश हमले का मुकाबला न कर सका। वह आदमी जिसने आसमान में उड़ कर युद्ध में विजय हासिल की थी वह ज़मीन पर मौत के ख़िलाफ़ जंग में इस तरह पराजित हो गया जैसे उसके मुकाबले के लिए उसके पास कोई ताक़त ही नहीं।

ताकत और बेताक़ती का यह मुक़ाबला हर रोज किसी न किसी रूप में ज़मीन पर दिखाई देता है। हर रोज़ कोई 'एयर चीफ़ मार्शल' मौत के ख़ामोश हमले के मुकाबले में एकतरफा शिकस्त खा जाता है। और इस तरह अपने तजुर्बे के रूप दूसरों के लिए एक ऐलान करता एक हक़ीक़त का ऐलान कि इंसान एक ऐसी दुनिया में है जहां हर जीत आख़िरकार एक मुकम्मल हार पर ख़त्म होती है। ज़िन्दगी इख़्तियार से बेइख़्तियारी की तरफ़ सफ़र है। मौत आदमी को इसी हक़ीक़त की ख़बर देती है। लेकिन यही खबर है जो आज किसी को मालूम नहीं।

अंधविश्वास

अमरीकी रिपब्लिकन पार्टी के एक पदाधिकारी श्री सैलर (Sayler) ने बताया था कि अमरीकी (पूर्व) राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन हर वक़्त अपनी जेब में एक छोटी-सी सोने की नाल रखते थे। यह नाल उनको राष्ट्रपति बनने से

लगभग पांच साल पहले उनके एक दोस्त ने दी थी। श्री रीगन को विश्वास था कि इस सुनहरी नाल में चमत्कारिक असर है। वह उनको हर आफ़त से बचाती है। 1981 में जब उनके ऊपर क़ातिलाना हमला किया गया तो उनके ख़्याल के मुताबिक़ इस नाल ने उनको बचा लिया।

यह नाल हर वक़्त श्री रीगन के पास रहती है। जून 1981 की एक मुलाक़ात में श्री सैलर ने उनसे पूछा, "क्या आप अब भी इस नाल को अपनी जेब में रखतें हैं?" राष्ट्रपति रीगन ने कहा, "हां, ज़रूर।"

इसके बाद उन्होंने अपनी बाईं जेब में हाथ डाला और वह नाल निकाल कर दिखाई। (*टाइम्स ऑफ़ इंडिया,* 24 जून 1981)

बेशक यह एक अंधविश्वास (superstition) है। पर इस अंधविश्वास का एक ज्ञात कारण है। वह यह कि मौजूदा दुनिया में इंसान के साथ जो कुछ घटता है वह सब इतना रहस्यपूर्ण होता है कि आदमी पूरी तरह उसकी व्याख्या नहीं कर पाता, उसे समझ नहीं पाता। ऐसा मालूम होता है कि कुछ छुपे हुए कारक (factors) हैं जो किसी आदमी को कामयाब और किसी को नाकाम कर देते हैं।

कोई शख़्स किसी एक नतीजे से दो-चार होता है और कोई शख़्स किसी दूसरे नतीजे से। और दोनों में से कोई भी सही अर्थों में नहीं बता सकता कि उसके साथ जो हुआ वह क्यों हुआ? एक बार मैंने एक बड़े व्यापारी से पूछा कि कारोबार में कामयाबी का राज़ क्या है? वह कुछ देर सोचता रहा। आख़िर में कहा कि 'क़िस्मत'; अगर कोई शख़्स तीन कारण पूछे तो मैं कहूंगा क़िस्मत, क़िस्मत, क़िस्मत!

यह रहस्यमय इसलिए है कि सब कुछ करने वाला ख़ुदा है। पर इंसान चूंकि परोक्ष ख़ुदा को देख नहीं पाता इसलिए वह किसी न किसी दिखाई देने वाली चीज़ को ख़ुदा बना लेता है, चाहे वह सोने की एक नाल हो या पत्थर की एक अंगूठी।

इंसान मजबूर है कि वह किसी को अपना मा‘बूद (उपास्य, आराध्य) बनाए- ख़ुदा को या ख़ुदा को छोड़कर किसी और को।

इंसान किधर

भारत के पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी (1944-1991) लोकसभा के दसवें चुनाव (मई 1991) के अभियान पर थे। वह देश भर का तूफ़ानी दौरा करते हुए 21 मई 1991 को अपने विशेष विमान के ज़रिए तमिलनाडु पहुंचे। वह हवाई अड्डे मीनमपक्कम पर उतरे। यहां वह अपनी बुलेट प्रुफ़ गाड़ी में बैठे। और तीस से ज़्यादा कारों के काफिले के साथ श्रीपेरुम्बुदुर के लिए रवाना हुए, जहां उन्हें एक चुनाव-सभा को सम्बोधित करना था।

रात को दस बजे वह पंडाल के अन्दर जनता की तरफ़ से गुलदस्ते स्वीकार कर रहे थे। उसी दौरान एक 25 वर्षीया महिला अपने दोनों हाथों में फूलों का एक गुलदस्ता लिए हुए राजीव गांधी की तरफ़ बढ़ी। राजीव गांधी भी विजयभाव से उसकी तरफ़ बढ़े, क्योंकि हर जगह जनता से मिले स्वागत ने उन्हें यकीन दिलाया था कि इस चुनाव के बाद वे देश के प्रधानमंत्री बनने वाले हैं।

महिला ने पास आकर अपना गुलदस्ता राजीव गांधी की तरफ़ बढ़ाया। पर उस महिला का सम्बंध आत्मघाती दस्ते से था और वह अपने जिस्म पर ख़तरनाक बम बांधे हुए थी। राजीव गांधी ने गुलदस्ता अपने हाथ में लिया ही था कि बम फट गया। राजीव गांधी पूरी तरह उसकी चपेट में आ गए। उनका जिस्म टुकड़े-टुकड़े हो गया। तत्काल उनकी मृत्यु हो गई।

ज़ाहिरी तौर पर यह बम का धमाका था, पर हक़ीक़त में वह मौत का धमाका था, जो हर इंसान के लिए नियत है। इस लिहाज से यह सिर्फ़

राजीव गांधी की कहानी नहीं, बल्कि हर इंसान की कहानी है। हर आदमी यह समझता है कि वह कामयाबी की तरफ़ बढ़ रहा है। हर आदमी का हाथ खुशियों के गुलदस्ते पर है। पर सच्चाई उसकी उम्मीदों के विपरीत है। जिस चीज़ को आदमी गुलदस्ता समझ कर वसूल कर रहा है वह उसके लिए विनाश का बम है।

इसके अपवाद सिर्फ़ वे लोग हैं, जिनको मौत से पहले अपने रब का बोध हासिल हो गया, जिन्होंने अपनी ज़िन्दगी को सृष्टि के पालनहार के आज्ञापालन में गुज़ारा, जिनको मौत इस हाल में आई कि वे अपने इम्तिहान के पर्चे को कामयाबी के साथ हल कर चुके थे।

ज़माने के ख़िलाफ़

शहर की पॉश कालोनी में एक आदमी आवाज़ लगा रहा था: बर्तन कलई वाला, बर्तन कलई वाला।

वह आवाज़ लगाता हुआ तमाम सड़कों पर घूमता रहा। पर शानदार मकानों में से किसी ने भी उसकी तरफ़ ध्यान न दिया। सारी कॉलोनी में किसी के यहाँ भी उसको काम न मिला।

क्या ये पक्षपात का मामला था। क्या ज़ुल्म और घमंड की वजह से लोगों ने "बर्तन क़लई वाले" को काम नहीं दिया। हो सकता है 'बर्तन कलई वाला' इसी तरह सोचता हो। उसके बाप-दादा यही काम करते थे। वह खुद चालीस साल से यही काम कर रहा था। इसलिए उसका ज़ेहन बर्तन क़लई' में इतना गुम हो चुका है कि वह इससे बाहर निकल कर सोच नहीं सकता।

लेकिन जो शख़्स 'बर्तन क़लई' से बाहर की हक़ीक़तों को जानता हो, जो व्यापक दायरे में सोच सके, वह आसानी से समझ सकता है कि

बर्तन क़लई वाले को कालोनी में काम न मिलने की वजह क्या थी। इसकी सीधी-सी वजह यह थी कि क़लई का काम तांबे-पीतल के बर्तनों में होता है, जबकि कालोनी के तमाम घरों में स्टेनलेस स्टील के बर्तन इस्तेमाल हो रहे थे, फिर यहां बर्तन क़लई वाले को काम मिलता तो किस तरह मिलता?

मौजूदा दुनिया में कामयाबी के लिए जिन चीज़ों की ज़रूरत है, उनमें से एक यह है कि आदमी वक़्त को पहचाने। वह ज़माने के तक़ाज़ों को समझे। जो शख़्स वक़्त और ज़माने को न जाने उसका हाल वही होगा जो ऊपर बताये गए आदमी का हुआ। वह स्टेनलेस स्टील इस्तेमाल करने वालों के बीच 'बर्तन क़लई' की आवाज़ लगाता रहेगा और वहां कोई भी शख़्स न मिलेगा जो उसका ख़रीदार बन सके। वह ज़माने के ख़िलाफ़ चलने वाली अपनी दुकानदारी में नाकाम होगा और फिर दूसरों को इल्ज़ाम देगा कि उन्होंने पक्षपात और जुल्म की वजह से मेरी दुकान चलने न दी। योग्यता के दौर में आरक्षण की मांग, सार्थकता की दुनिया में शब्दों के चमत्कार दिखाना, हक़ीक़त के बाज़ार में खुशख्याली की क़ीमत पर सौदा हासिल करने की कोशिश, यह सब इसी क़िस्म की ज़माने के ख़िलाफ़ हरकत है। और ऐसी हर कोशिश का एक ही अंजाम है, और वह यह कि उनका कोई अंजाम नहीं।

तजुर्बे के बाद

एक अमरीकी महिला लिन्डा बर्टन (Linda Burton) ने अपने पारिवारिक अनुभवों पर एक किताब लिखी है, जिसका नाम है: तुम्हारी जैसी एक तेज स्मार्ट औरत घर पर क्या काम करती है:

What's a Smart Women Like You Doing at Home?

इस महिला की कहानी का खुलासा, उसी के लफ़्ज़ों में यह है कि मेरा घर पर रहने का कोई इरादा नहीं था। मैं एक कम्पनी में पूरे वक़्त (full time) नौकरी करती थी। 33 साल की उम्र में मेरे यहां एक लड़का पैदा हुआ। उसे संभालने के लिए मजबूरी के तौर पर मुझे अपनी नौकरी छोड़नी पड़ी। यहां तक कि मेरे लिए पैसे की तंगी पैदा हो गई और मैंने दोबारा बाहर का काम करना शुरू कर दिया।

मैं अपने बच्चे के लिए शाम का वक़्त और हफ्ते की छुट्टी का दिन दे सकती थी। पर वह नाकाफ़ी थी। अब मैंने उसके लिए एक 'चाइल्ड केयर सेंटर' तलाश किया। मगर एक महीने के बाद ही घटिया होने की वजह से मुझे वह चाइल्ड केयर सेंटर छोड़ना पड़ा। मैं नौकरी छोड़ कर दोबारा घर पर रहने लगी, ताकि बच्चे की देखभाल कर सकूँ। मैं दो साल तक किसी ज़्यादा बेहतर सेंटर की तलाश में रही, यहां तक कि मेरे यहां दूसरा बच्चा पैदा हो गया।

मैंने दोबारा एक नौकरी कर ली और अपने दोनों बच्चों को घरेलू क़िस्म के चाइल्ड केयर सेंटर में डाल दिया। लेकिन मैं इस के काम करने के तरीके से संतुष्ट न हो सकी। आख़िरकार मैंने ख़ुद अपने घर पर व्यक्तिगत सेवाएं हासिल कीं। मैंने पाया कि आप चाहे जितने कायदे कानून बनाएं, कितना ही ज़्यादा पैसा ख़र्च करें मगर यह नामुमकिन है कि एक शख़्स किसी दूसरे के लिए मुहब्बत कर सके:

> In time, my search for childcare taught me a critical lesson: no matter how many licenses we issue, how many guidelines we establish or how much money we pay, it is impossible

> to have quality controls over the capacity of one human being to love and care for another (p. 94).

मैं एक ऐसा शख़्स चाहती थी जो नर्म मिज़ाज और मुहब्बत करने वाला हो, जो मुस्तैद और खुश-मिज़ाज हो, एक ज़िन्दा शख्स जो मेरे बच्चों की रचनाशीलता को बढ़ाए, वह उनको मनोरंजन के लिए बाहर भी ले जाए। वह उनके तमाम छोटे-छोटे सवालों का जवाब दे। वह उनको मीठी नींद सुलाए। आहिस्ता-आहिस्ता और तकलीफ़देह तौर पर मैं इस हैरतनाक एहसास तक पहुंची कि मैं बरसों से जिस शख़्सियत को तलाश कर रही थी वह मेरी अपनी नाक के नीचे मौजूद है, यानी मैं ख़ुद! यह है वह काम जो मेरे जैसी तेज़-तर्रार व स्मार्ट औरत अपने घर में कर रही है:

> I had wanted someone who was loving and tender, with a sense of humor and an alert, lively manner' somebody who would encourage my children's creativity, take them on interesting outings, answer all their little questions, and rock them to sleep. Slowly, painfully, I came to a stunning realization: the person I was looking for was right under my nose. I had desperately been trying to hire me. And that's what a smart woman like me is doing at home. (*Reader's Digest*, August, 1988)

मज़हब की तालीम के तहत समाज का यह उसूल तय किया गया था कि मर्द कमाए और औरत घर की देखभाल करे। इस तरह काम के बटवारे के इस उसूल पर दोनों ज़िन्दगी का कारोबार चलाएं।

यह एक इंतज़ामी बन्दोबस्त था, न कि किसी को बड़ा और किसी को

छोटा दर्जा देना। मगर आज के नए दौर में औरतों की आज़ादी का आन्दोलन उठा, जिसने इस तरीक़े को औरत को छोटा और गुलाम बनाने की साज़िश बताया। और यह नारा दिया कि औरत व मर्द को किसी बंटवारे या हदबन्दी के बिना हर काम करना चाहिए। यह नज़रिया इतना फैला कि औरतों की एक पूरी नस्ल घर से बाहर निकल पड़ी।

तथाकथित समानता के इस तजुर्बे पर अब क़रीब सौ साल बीत चुके हैं। ख़ास तौर पर पश्चिमी दुनिया में इसका तजुर्बा आख़िरी मुमकिन हद तक किया गया है। मगर इन तजुर्बों ने इसका फायदा साबित करने के बजाय सिर्फ़ इसका नुकसान साबित किया है। मौजूदा पश्चिमी समाज में अलग-अलग अन्दाज़ से इसकी मिसालें लगातार सामने आ रही हैं। उन्हीं में से एक मिसाल वह है, जिसे ऊपर दिया गया है।

मज़हब ने मर्द और औरत के काम के बीच यह बंटवारा किया था कि मर्द रोज़ी-रोटी जुटाए और औरत नई नस्ल का चरित्र निर्माण करे:

Man the bread-earner,
woman the character-builder.

नई सभ्यता ने इस मज़हबी तालीम को नहीं माना, लेकिन नई सभ्यता के तजुर्बों ने सिर्फ़ यह किया है कि उसने मज़हब की तालीम की सच्चाई को नए सिरे से और ज़्यादा ताक़त के साथ साबित कर दिया है।

पेड़

पेड़ का एक हिस्सा तना होता है और दूसरा हिस्सा उसकी जड़ें। कहा जाता है कि पेड़ का जितना हिस्सा ऊपर होता है लगभग उतना ही हिस्सा ज़मीन के नीचे जड़ के रूप में फैला हुआ होता है। पेड़ अपने अस्तित्व के आधे

हिस्से को फला-फूला और हरा-भरा उस वक़्त रख पाता है जबकि वह अपने अस्तित्व के बाक़ी आधे हिस्से को ज़मीन के नीचे दफ्न करने के लिए तैयार हो जाए। पेड़ का यह नमूना इन्सानी ज़िन्दगी के लिए ख़ुदा का सबक़ है। इससे मालूम होता है कि ज़िन्दगी के निर्माण और स्थायित्व के लिए लोगों को क्या करना चाहिए। एक पश्चिमी विचारक ने लिखा है:

> Root downward-fruit upward. That is the divine protocol. The rose comes to the perfect combination of colour, line and aroma atop a tall stem. Its perfection is achieved, however, because first, a root goes down into the homely matrix of the common earth—those who till the soil or garden understand the analogy. Our interests have so centred on gathering the fruit that it has been easy to forget the cultivation of the root. We cannot really prosper and have plenty without first rooting in a life of sharing. The thorn of plenty does not stay full unless there is rooting in sharing first.

जड़ नीचे की तरफ़ फल ऊपर की तरफ़ यह ख़ुदाई (ईश्वरीय) उसूल है। गुलाब का फूल रंग और खुश्बू का एक उत्कृष्ट योग है, जो एक तने के ऊपर प्रकट होता है। लेकिन उसकी यह उत्कृष्टता इस तरह हासिल होती है कि पहले एक जड़ मिट्टी के अन्दर गई। वे लोग जो ज़मीन में खेती करते हैं या बाग़ लगाते हैं वे इस उसूल को जानते हैं। पर हमको फल हासिल करने में इतनी ज़्यादा दिलचस्पी है कि हम जड़ जमाने की बात आसानी से भूल जाते हैं। हम निश्चय ही तरक्की और खुशहाली हासिल नहीं कर सकते जब

तक हम साझा ज़िन्दगी में अपनी जड़े दाख़िल न करें। मुकम्मल ख़ुशहाली सामूहिक ज़िन्दगी में जड़े क़ायम किए बिना संभव नहीं।

पेड़ ज़मीन के ऊपर खड़ा होता है। पर वह ज़मीन के अन्दर अपनी जड़ें जमाता है। वह नीचे से ऊपर की तरफ़ बढ़ता है न कि ऊपर से नीचे की तरफ़। पेड़ जैसे प्रकृति का एक शिक्षक है जो इंसान को यह सबक़ दे रहा हैः इस दुनिया में अन्दरूनी मज़बूती के बिना बाहरी तरक्क़ी मुमकिन नहीं।

मौत का फ़ैसला

इयान फ्लेमिंग 1908 में लन्दन में पैदा हुआ और 1964 में उसका देहांत हुआ। 1929 से 1933 तक वह मास्को में पत्रकार की हैसियत से रहा। मार्च 1933 में सोवियत रूस की हुकूमत ने पांच ब्रिटिश इंजीनियरों को जासूसी के आरोप में गिरफ्तार कर लिया। मास्को में उनके ऊपर मुकदमा चलाया गया। यह पश्चिमी पत्रकारिता के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण ख़बर थी। इस मुक़दमें की कार्रवाई लिखने के लिए यूरोप के जो अख़बारी नुमाइन्दे मास्को पहुंचे, उनमें रायटर का संवाददाता इयान फ्लेमिंग भी था। इयान फ्लेमिंग चाहता था कि वह इस फ़ैसले की ख़बर सबसे पहले यूरोप भेजे।

इस मुक़द्दमे के लिए उसने एक ख़ामोश मन्सूबा बनाया। जिस दिन मास्को के जज मुक़द्दमे का फ़ैसला देने वाले थे, उसने पूरी घटना की दो अलग-अलग रिपोर्ट तैयार कीं। एक रिपोर्ट अपराधियों के सज़ा पाने की स्थिति में और दूसरी रिपोर्ट वह जबकि उन्हें छोड़ दिया जाए।

निश्चित समय पर जैसे ही जजों ने फ़ैसले सुनाए, इयान फ्लेमिंग ने फ़ौरन अपनी रिपोर्ट की खाली जगह भरी और उसी वक़्त टेलिग्राम के ज़रिए उसको अपने यूरोप के दफ्तर के नाम रवाना कर दिया। यह उस मुक़द्दमे की

पहली ख़बर थी, जो लन्दन पहुंची। इयान फ्लेमिंग को इसके बाद रायटर ने बड़ी तरक़्क़ी दे दी।

इयान फ्लेमिंग का ज़्यादा दौलत कमाने का शौक उसको उपन्यास लेखन की तरफ़ ले गया। उसने सनसनीखेज उपन्यास लिखने में ज़बरदस्त ख्याति अर्जित की। उसके तेरह उपन्यासों की लगभग दो करोड़ प्रतियां बिकीं और ग्यारह भाषाओं में उनका अनुवाद हुआ। उसका एक उपन्यास डाक्टर नो (Dr. No) एक लाख डालर में बिका। यह कहानी फिल्माई गई और इससे उसको एक लाख डालर और मिले। इयान फ्लेमिंग अब दौलत और शोहरत के आसमान पर था। पर ठीक इसी वक़्त उसके ऊपर वह वक़्त आ गया जो हर एक के ऊपर आता है। अभी वह सिर्फ़ 56 साल की उम्र को पहुंचा था कि अचानक वह 12 अगस्त 1964 को मर गया।

इयान फ्लेमिंग रूसी जज के फ़ैसले की रिपोर्ट पहले से तैयार कर सकता था, पर वह मौत के जज के फ़ैसले का पहले से अन्दाज़ा न कर सका। ठीक उस वक़्त उसे अपने आपको मौत के हवाले करना पड़ा जबकि वह सबसे ज़्यादा ज़िन्दगी का ख़्वाहिशमन्द हो चुका था।

जितना देना उतना पाना

श्री सुरजीत सिंह लांबा (जन्म 1931) 'फ़ोटोग्राफ़िक मेमोरी के मालिक थे। किसी चीज़ को चन्द बार पढ़ लें तो वह उनको याद हो जाती है। 12 जून 1983 को हमारे दफ्तर में आए तो अल-रिसाला के कई लेख उन्होंने शब्दशः ज़बानी सुना दिए।

श्री लांबा क़ानून मंत्रालय में हैं और दिल्ली में कीर्ति नगर में रहते हैं। वह इक़बाल के रसिया हैं। 'इक़बालियात' (इक़बाल से सम्बन्धित विषय)

से उन्हें ख़ास दिलचस्पी है। इक़बाल के हज़ारों शे'र उनको ज़बानी याद हैं और इसी तरह उनकी ज़िन्दगी के हालात भी।

श्री सुरजीतसिंह लांबा मई 1983 में पाकिस्तान गए। वहां इक़बालियात के माहिर की हैसियत से उनका ज़बरदस्त स्वागत हुआ। इस सिलसिले में उनकी मुलाक़ात अमीर हुसैन साहब (लाहौर) से हुई। उन्हें भी इक़बाल के बहुत से शे'र याद हैं। उन्होंने श्री लांबा को चुनौती दी कि अगर तुम साबित कर दो कि तुम्हें इक़बाल के शे'र मुझसे ज़्यादा याद हैं तो मैं अपनी हार मान लूंगा और तुमको पांच हज़ार रुपये इनाम दूंगा। श्री लांबा ने कहाः

> मैं पिछले दस साल से इक़बाल रूपी 'शमा' पर 'परवाने' की तरह नृत्य कर रहा हूं। तुम मुझसे ज़्यादा इक़बाल का कलाम उसी वक़्त पेश कर सकते हो जबकि तुमने 'परवाना' बन कर इक़बाल रूपी शमा पर मुझसे ज़्यादा नृत्य (रक्स) किया हो।

श्री लांबा इस मुक़ाबले में जीत गए। अमीर हुसैन साहब इक़बाल की जिस नज़्म का कोई मिसरा पढ़ते श्री लांबा लगातार उसके आगे के शेर सुनाना शुरू कर देते। इसके उलट जब श्री लांबा ने इक़बाल का कोई मिसरा पढ़ा तो अमीर हुसैन उसके आगे ज़्यादा न सुना सके।

इक़बाल के इस मुक़ाबले में सुरजीत सिंह लाम्बा जीत गए और अमीर हुसैन लाहौरी हार गए। किसी क्षेत्र में सफलता की सबसे ज़रूरी शर्त यह है कि उस क्षेत्र में आदमी अपने आपको पूरी तरह समर्पित कर दे। ज़िन्दगी का हर मामला जैसे एक शमा है। और इस मामले में सबसे ज़्यादा वही शख़्स आगे बढ़ेगा जो सबसे ज़्यादा उस शमा के लिए तड़पा हो, जिसने सबसे ज़्यादा उस शमा के लिए नृत्य किया हो।

ज़िन्दगी लेन-देन का सौदा है। यहां देने वाला पाता है। और उतना ही पाता है जितना उसने दिया हो। यहां न दिए बिना पाना संभव है और न ही यह संभव है कि कोई शख्स कम दे कर ज़्यादा का हिस्सेदार बन जाए।

कारोबारी स्थायित्व

ख़ुशहाल तबक़ा नाश्ते में या चाय के साथ अनाज की बनी हुई हल्की चीज़ें लेना पसंद करता है। इसी का एक रूप वह हल्का खाद्य है, जिसको कॉर्नफ्लैक्स कहा जाता है। इसकी विभिन्न क़िस्में बाज़ार में मौजूद हैं।

बहुत-सी फ़र्मों ने विभिन्न नामों से कॉर्नफ्लैक्स बनाए। उनके स्वाद में तरह-तरह की विविधता पैदा की। पर भारतीय बाज़ार में वे ज़्यादा कामयाब न हो सके, हालांकि उन्होंने विज्ञापन पर काफ़ी पैसा ख़र्च किया।

इस वक़्त भारत के बाज़ार में सिर्फ़ दो फ़र्मों के बनाए हुए कॉर्नफ्लैक्स ज़्यादा चल रहे हैं। एक हिंदुस्तान वेजिटेबल ऑयल्स कॉर्पोरेशन लिमिटेड (HVOC) का और दूसरा मोहन मीकिन्स लिमिटेड का। ये दोनों फ़र्में हर साल एक हज़ार टन कॉर्नफ्लैक्स बेचती हैं, जिनकी क़ीमत तीन करोड़ पचास लाख होती है, हालांकि ये दोनों फ़र्में विज्ञापन पर सिरे से कोई पैसा ख़र्च नहीं करतीं। उनका तैयार किया हुआ कॉर्नफ्लैक्स बिना किसी विज्ञापन के बिकता था।

इस फ़र्क़ की वजह क्या थी? इसकी बुनियादी वजह यह है कि दूसरे फ़र्मों का कोई इतिहास नहीं। उन्होंने किसी नाम से कॉर्नफ्लैक्स की एक किस्म बनाई। वह बाज़ार में नहीं चली तो उन्होंने दूसरी क़िस्म बना डाली या सिरे से उसको बनाने का काम छोड़ कर कोई दूसरा काम शुरू कर दिया। इसके विपरीत उपरोक्त दोनों कामयाब फर्मों के कारोबार के पीछे बीस साल का इतिहास है। वे बीस साल से लगातार एक ही क़िस्म का कॉर्नफ्लैक्स बना रही हैं। बीस वर्षीय इतिहास ने उनको लोगों की नज़र में जाना-पहचाना और मान्यताप्राप्त बना दिया है। किसी आदमी को कॉर्नफ्लैक्स लेना होता है तो उनके ज़ेहन में पहले से उसका नाम मौजूद होता है और वह बाज़ार जाकर अपने इस जाने-पहचाने कॉर्नफ्लैक्स को खरीद लेता है।

यही कारोबार में तरक्की का राज़ है। कारोबार में ठहराव और स्थायित्व ज़रूरी शर्त है। आप कारोबार करके उसको छोड़ते या बदलते रहते हैं तो आप कभी कारोबार में कामयाब नहीं होंगे। और अगर आप कारोबार करके उस पर जमे रहें, किसी भी कठिनाई की वजह से उसको न छोड़ें तो 'बीस साल' गुज़रने के बाद आप निश्चित रूप से कामयाबी की अगली मंज़िल पर पहुंच चुके होंगे।

शहद का सबक़

शहद की मक्खियां फूलों का जो रस जमा करती हैं, वह सब का सब शहद नहीं होता। उसका सिर्फ़ एक तिहाई हिस्सा शहद बनता है। शहद की मक्खियों को एक पौंड शहद के लिए बीस लाख फूलों का रस हासिल करना पड़ता है। उसके लिए मक्खियां क़रीब तीस लाख उड़ानें करती हैं और इस दौरान वह कुल मिलाकर क़रीब पचास हज़ार मील तक का सफ़र तय करती हैं। रस जब ज़रूरी मात्रा में जमा हो जाता है तो इसके बाद शहद बनाने का काम शुरू होता है।

शहद शुरू-शुरू में पानी की तरह पतला होता है। शहद तैयार करने वाली मक्खियां अपने परों को पंखे की तरह इस्तेमाल करके अतिरिक्त पानी को भाप की तरह उड़ा देती हैं। जब यह पानी उड़ जाता है तो इसके बाद एक मीठा द्रव बाक़ी रह जाता है, जिसको मक्खियां चूस लेती हैं। मक्खियों के मुंह में ऐसी ग्रंथियां होती हैं जो मीठे द्रव को शहद में बदल देती हैं। अब मक्खियां इस तैयार शहद को ख़ास तौर पर बने हुए छत्ते के सूराख़ों में भर देती हैं। ये सूराख दूसरी मक्खियां मोम के ज़रिए बेहद कारीगरी के साथ

बनाती हैं। मक्खियां शहद को सूराख़ों में भर कर उसको ‘डिब्बाबन्द’ खाद्य की तरह सुरक्षित कर देती हैं, ताकि बाद को वह इंसान के काम आ सके।

इस तरह की बेशुमार व्यवस्थाएं हैं जो शहद की तैयारी में की जाती हैं। ख़ुदा ऐसा कर सकता था कि चमत्कारिक ढंग से अचानक शहद पैदा कर दे या पानी की तरह शहद का झरना ज़मीन पर बहा दे। पर उसने ऐसा नहीं किया। ख़ुदा हर क़िस्म की सामर्थ्य रखने के बावजूद शहद को एक व्यवस्था के तहत तैयार करता है, ताकि इंसान को सीख मिले। वह जाने कि ख़ुदा ने दुनिया की व्यवस्था किस ढंग पर बनाई है और किन सिद्धांतों और नियमों को अपना कर ख़ुदा की इस दुनिया में कोई शख़्स कामयाब हो सकता है।

शहद की मक्खी जिस तरह काम करती है, उसे योजनाबद्ध कार्य कहते हैं। यही उसूल इंसान के लिए भी है। इंसान भी सिर्फ़ उस वक़्त कोई सार्थक सफलता अर्जित कर सकता है, जबकि वह योजनाबद्ध कार्य के ज़रिए अपने मक़सद तक पहुंचने की कोशिश करे। संगठित और योजनाबद्ध कार्य ही इस दुनिया में कामयाबी हासिल करने का एकमात्र विश्वसनीय तरीक़ा है, शहद की मक्खी के लिए भी और इंसान के लिए भी।

चुप की ताक़त

पुरानी कहावत है कि ‘एक चुप हज़ार बला टालती है।’ यह कहावत बहुत सार्थक है और लंबे इंसानी तजुर्बों पर आधारित है। हक़ीक़त यह है कि चुप रहना अपने आप में ख़ुद एक ताक़तवर हथियार है, बशर्ते कि इस हथियार को उसके तमाम तक़ाज़ों के साथ इस्तेमाल किया जाए।

1966 की बात है। मैं लखनऊ और शाहगंज के बीच ट्रेन से सफ़र कर रहा था। यह देहरादून एक्सप्रेस थी और मैं पुराने नाम के मुताबिक़ थर्ड क्लास

में और नए नाम के मुताबिक़ सेकंड क्लास के एक डब्बे में था। पूरे डब्बे में शायद मैं अकेला मुसलमान था।

सफ़र के दौरान ऐसा हुआ कि मुझे टॉयलेट जाने की जरूरत पेश आई। मैं अपनी सीट से उठकर टॉयलेट के पास गया। मैंने अपनी आदत के मुताबिक़ दरवाज़ा आहिस्ता से खोला, लेकिन दरवाज़ा ज़रा-सा खुलते ही अंदर से कपड़े का पल्लू दिखाई दिया। मैंने फ़ौरन दरवाज़ा बंद कर दिया और वापस आकर अपनी सीट पर बैठ गया।

वास्तविकता यह थी कि टॉयलेट के अंदर एक हिंदू महिला मौजूद थीं, लेकिन उन्होंने क़ायदे के मुताबिक़ दरवाज़े का बोल्ट नहीं लगाया था।

महिला का पति मेरे पास की सीट पर बैठा हुआ था। इस दृश्य को देखते ही वह बिगड़ गया। वह ग़ुस्सा और नफ़रत से भरकर मेरे ऊपर पिल पड़ा। वह जोश में उठकर खड़ा हो गया और मुझे बुरी तरह डांटना और बुरा-भला कहना शुरू कर दिया। मैंने कहा कि दरवाज़ा अंदर से बंद न था और मुझे मालूम न था कि अंदर कोई है, वरना मैं हर्गिज़ दरवाज़ा खोलने की कोशिश न करता। पर मेरी तरफ़ से अपनी सफ़ाई पर बोला गया हर शब्द उसको और भी अधिक उत्तेजित कर रहा था। ऐसा लगता था कि वह मुझे खिड़की से बाहर फेंक देगा।

लंबी बोगी पूरी तरह भरी हुई थी, पर पूरे डब्बे में एक शख़्स भी मेरी हिमायत के लिए नहीं उठा। आख़िर में मैं बिल्कुल खामोश हो गया। मैं उस शख़्स की तरफ़ देख रहा था, पर मेरे चेहरे पर डर या उत्तेजना का ज़रा सा भी कोई भाव न था। मैं एकदम भावहीन मुद्रा में स्टेचू की तरह ख़ामोशी के साथ उसको देखता रहा। अब वह ठंडा पड़ने लगा, यहां तक कि बिल्कुल चुप हो गया। दूसरे को चुप करने की सबसे आसान तरकीब है-अपनी ज़ुबान को एकतरफ़ा तौर पर बंद कर लेना।

एक मिसाल

सच्चे इन्सानों को लोगों के बीच किस तरह रहना चाहिए इसकी बेहतरीन मेकेनिकल मिसाल शॉक एब्ज़ारबर (Shock absorber) है। शॉक एब्ज़ारबर का शाब्दिक अर्थ है— झटके को सहने वाला एक यंत्र जो मोटर गाड़ियों में लगाया जाता है और एक्सल और बॉडी के बीच एक किस्म के गद्दे का काम करता है। वह सड़क की सतह पर ऊंच-नीच से पैदा होने वाले झटकों को बॉडी तक पहुंचने से रोकता है:

> A device which on an automobile, acts as a cushion between the axles and the body and reduces the shocks on the body produced by undulations of the road surface (Automotive Suspension & Steering Systems)

अगर आप ट्रेक्टर पर 50 किलोमीटर का सफ़र करें तो आप अपनी मंजिल पर इस तरह पहुंचेंगे कि आप थके हुए होंगे। इसके विपरीत जब आप एक अच्छी मोटर कार पर 50 किलोमीटर की यात्रा करें तो आप मंजिल पर इस तरह उतरते हैं कि आप बिल्कुल तरो-ताज़ा होते हैं।

दोनों गाड़ियों में इस अन्तर का कारण क्या है? इसका कारण शॉक एब्ज़ारबर है। कार जब चलती है तो ज़्यादातर उसका पहिया ऊपर-नीचे होता है, बॉडी ऊपर नीचे नहीं होती। इसके विपरीत जब ट्रैक्टर चलता है तो उसका पहिया और बॉडी दोनों ऊपर-नीचे होते रहते हैं। दूसरे शब्दों में कार उस गाड़ी का नाम है कि जो झटका गाड़ी को लगा वह गाड़ी तक रह गया, वह मुसाफिर तक नहीं पहुंचा। जबकि ट्रैक्टर उस गाड़ी का नाम है कि जो झटका गाड़ी को लगा वह गाड़ी तक नहीं रुका, बल्कि वह मुसाफ़िर तक पहुंच गया।

सच्चा इंसान दुनिया में कार की तरह चलता है, और झूठा इंसान ट्रैक्टर की तरह। सच्चे इंसान के सीने में एक शॉक एब्ज़ारबर होता है जो तमाम झटकों और सदमों को अन्दर ही अन्दर सहता रहता है, जबकि झूठे इंसान के अन्दर शॉक एब्ज़ारबर नहीं होता। वह हर झटके को दूसरों तक पहुंचाता रहता है। अच्छा समाज बनाना है तो सच्चे इंसान बनाइए, क्योंकि दरअसल ये झूठे इंसान ही हैं जो समाज को बिगाड़ और फ़साद से भर देते हैं।

एकतरफ़ा तरीका

दिल्ली के एक अंग्रेजी अख़बार में मैंने एक लेख पढ़ा। उसका शीर्षक था कि 'दोतरफा तरीका बेहतरीन तरीक़ा है' (Bilateralism is the Best)। यानी दो वर्गों के बीच विवाद हो तो उसको हल करने का तरीका यह है कि दोनों 'फिफ्टी फिफ्टी' पर राज़ी हो जाएं। पचास प्रतिशत जिम्मेदारी एक पक्ष ले और पचास प्रतिशत जिम्मेदारी दूसरा पक्ष। इस तरह मामले को ख़त्म कर दिया जाए।

यह बात ग्रामर (व्याकरण) के लिहाज़ से सही है, पर हक़ीक़त के हिसाब से ग़लत। क्योंकि आज की दुनिया में यह अव्यावहारिक है। इस दुनिया में कोई विवाद उसी स्थिति में ख़त्म हो सकता है जबकि एक पक्ष एकतरफा तौर पर इसको ख़त्म करने पर राजी हो जाए। इस लिहाज़ से यह कहना ज़्यादा सही होगा कि एकतरफ़ा तरीक़ा बेहतरीन तरीका है:

Unilateralism is the Best.

पैग़म्बरे- रे-इस्लाम ने झगड़ों और शिकायतों को ख़त्म करने का यही तरीका बताया है। हदीस में कहा गया है: ''जो शख्स तुम्हारे साथ बुरा

सलूक करे उसके साथ तुम अच्छा सलूक करो।" (*कुन्ज़ल उम्माल*, हदीस संख्या 6929)। यानी प्रतिक्रिया और रद्दे-अमल का तरीका न अपनाओ। और न इसका इंतजार करो कि दूसरा पक्ष पचास प्रतिशत झुके तो तुम भी पचास प्रतिशत झुक जाओ। ख़ुदापरस्त इंसान के लिए यह हुक्म है कि वह एकतरफा सदाचार (हुस्ने-सलूक) का तरीका अख्तियार करे। इसी एकतरफ़ा सदाचार का नाम सब्र है। और इसी सब्र में बेहतर इन्सानी समाज का रहस्य छुपा हुआ है।

विविधता का उसूल

जिस दुनिया में हम रह रहे हैं उसकी व्यवस्था विविधता और रंग-बिरंगेपन के नियम पर क़ायम है। यही विविधता इंसानों के बीच भी अपेक्षित है। हमें इंसानों के बीच यह मिज़ाज बनाना चाहिए कि वह अनेकता और भिन्नता के बावजूद एक होकर रहें। वह हर तरह के इंसानों के बीच ज़िंदगी गुज़ारना सीखें। इंसानी एकता को क़ायम करने के लिए फ़र्क़ व विविधता को मिटाना प्रकृति के नियम के विरुद्ध है इसलिए यह विचार कभी सफल नहीं हो सकता।

मिसाल के तौर पर जानवरों को लीजिए। जानवरों की दस लाख से ज़्यादा किस्में पाई जाती हैं और हर एक का एक काम है, जो उसी के लिए नियत है। यहां जमीन पर रहने वाले कीड़ों की भी ज़रूरत है, जो गन्दी और बेकार चीज़ों को विखंडित (decompose) करके हमारे वातावरण को लगातार पाक साफ करते रहते हैं। यहां बैल की भी ज़रूरत है, जो हमारे खेत जोते और घोड़े की भी जरूरत है जो हमारी सवारी के काम आए। एक तरफ़ अगर यहां चिड़ियों की भी ज़रूरत है, जो चहचहाएं तो दूसरी तरफ़ गधे की

भी जरूरत है कि जब वह चीखे तो आप सोचें कि मुझे इस तरह चीख कर नहीं बोलना चाहिए।

यही मामला तमाम दूसरी चीजों का भी है। इस दुनिया में बेहिसाब विविधता है और रंगबिरंगापन है, इसी विविधता और अनेकरूपता पर उसकी व्यवस्था चल रही है। इसी पैटर्न पर इंसानों को पैदा करने वाले ने इंसानों के भीतर भी भिन्नता और विविधता रखी है। इस विविधता को बाकी रखने ही में इंसान की तरक़्क़ी और कामयाबी है। इस विविधता को मिटाना ऐसा ही है जैसे इंसानों को बराबर क़द का बनाने के लिए लोगों को नीचे और ऊपर से तराश कर बराबर किया जाने लगे।

अनेकता में एकता

क़ायनात का अध्ययन करने से मालूम होता है कि इसमें अनेकता में एकता का नियम लागू है। यानी चीज़ें देखने में तो भिन्न और अनेक हैं। पर जब उनका विश्लेषण किया जाता है तो मालूम होता है कि तमाम चीज़ें अपनी अंतिम सच्चाई की दृष्टि से परमाणु (एटम) का संकलन हैं। हर चीज़ अंततः एटम है, चाहे वह ऊपर से कुछ भी दिखाई देती हो।

सृष्टि का यही पैटर्न इन्सानों के अन्दर भी रखा गया है। इंसान ऊपर से देखने में एक-दूसरे से अलग नज़र आते हैं। उनमें रंग और नस्ल के लिहाज़ से बहुत सी भिन्नताएं पाई जाती हैं, पर अगर उनका ऐतिहासिक विश्लेषण किया जाए तो पता चलता है कि तमाम नस्लें आख़िरकार एक मां-बाप पर जाकर ख़त्म होती हैं। यानी सब एक-दूसरे के भाई हैं, न कि एक-दूसरे के पराए।

यही बात क़ुरआन में इन शब्दों में कही गई है: ऐ लोगो! अपने रब

से डरो जिसने तुम्हें एक जान से पैदा किया और उसी से उसका जोड़ा पैदा किया और इन दोनों से बहुत से मर्द और औरतें फैला दीं। (4:1)

यही बात हदीस में इस तरह आई है: सुन लो कि तुम सब आदम की औलाद हो और आदम मिट्टी से थे। (मुसनद अहमद, हदीस संख्या 8736)

इन्सानी एकता की यह परिकल्पना हर इंसान के दिल में दूसरे इंसान के लिए मुहब्बत और सदभाव पैदा करती है। वह पूरी इन्सानी नस्ल को एक कुटुम्ब, एक ख़ानदान और एक बिरादरी बना देती है। हदीस में कहा गया है:

> "तमाम मखलूक (जीवधारी) अल्लाह की कुटुम्ब है। तमाम लोगों में अल्लाह के निकट सबसे ज़्यादा प्रिय वह है, जो अपने कुटुम्ब के साथ अच्छा सलूक करे।" (मुसनद अल-बज़्ज़ार, हदीस संख्या 6947)

क़ायनाती मॉडल अनेकता में एकता की खूबी रखता है। इंसान को भी इसी क़ायनाती माडल पर अपनी जिंदगी का नक़्शा बनाना चाहिए। उसको अनेक में एक नमूना बन जाना चाहिए। क़ायनात में जब अनेकता में एकता (unity in diversity) का नियम चल रहा है तो इंसान के लिए यह दुरुस्त नहीं कि वह अनेक को एक करने (unification of diversity) के तरीके पर जिंदगी की व्यवस्था बनाने की कोशिश करे।

अख़्लाक़ी ज़हर

6 जनवरी, 1990 को दिल्ली (शकूरपुर) में एक दर्दनाक हादसा हुआ। कुछ छोटे बच्चे एक मैदान में खेल रहे थे। वहां एक तरफ़ कूड़े का ढेर था। वे खेलते हुए उस कूड़े तक पहुंच गए। यहां उन्हें एक पड़ी हुई चीज़ मिली। यह

कोई ज़हरीली चीज़ थी। मगर उन्होंने उसको बेख़बरी में उठा कर खा लिया। इसके नतीजे में दो बच्चे फ़ौरन ही मर गए, और आठ बच्चों को गम्भीर हालत में जयप्रकाश नारायण अस्पताल में दाख़िल करना पड़ा। ये बच्चे दो साल से पांच साल तक के थे।

टाइम्स ऑफ इंडिया (7 जनवरी 1990) ने पहले पेज पर इसकी ख़बर देते हुए लिखा है कि इन बच्चों में से एक ने वहां एक छोटा पैकेट पाया। उसमें करीब डेढ़ सौ ग्राम कोई सफ़ेद रंग का चूर्ण था। उन्होंने ग़लती से उसको शक्कर समझा और आपस में बांट कर खाने लगे। खाने के चन्द मिनट बाद उनके होंठ नीले पड़ गए:

> One of them found a small packet containing about 150 gm of white, powdery substance. They mistook it for sugar and distributed it among themselves, within minutes of consuming it, their lips turned blue.

भौतिक ख़ुराक के लिहाज़ से यह चन्द बच्चों का वाकिआ है, लेकिन नैतिक ख़ुराक की दृष्टि से देखिए तो आज यही तमाम इन्सानों का वाक़िआ है। आज की दुनिया में तामाम इंसान ऐसी नैतिक ख़ुराकें खा रहे हैं जो उनकी इन्सानियत के लिए ज़हर हैं, जो उनको हमेशा की बरबादी से दो-चार करने वाली हैं।

झूठ, दुराचार, रिश्वत, अहंकार, ईर्ष्या, ज़ुल्म, अपहरण, अवैध क़ब्ज़ा, बददियानती, वादा-ख़िलाफ़ी, बदनामी, बेउसूली, दुर्वयवहार, अविश्वास, ग़लती न मानना, एहसानफ़रामोशी, ख़ुदग़र्ज़ी, इन्तिक़ाम, उत्तेजना और दूसरों के लिए कुछ और अपने लिए कुछ और पसंद करना – ये तमाम चीज़ें नैतिक दृष्टि से ज़हरीली ख़ुराकें हैं। लोग इन्हें मीठी शक्कर समझकर खा रहे हैं। लेकिन वह समय दूर नहीं जब इनका ज़हर स्पष्ट होगा, और इंसान खुद

को ऐसी हालत में पाएगा जहां न कोई उसकी मदद करने वाला होगा और न कोई इलाज करने वाला।

सृष्टि में एकत्व

सृष्टि का अध्ययन बताता है कि पूरी सृष्टि एक केन्द्र के चारों तरफ़ घूम रही है। एटम का एक न्यूक्लियस है और एटम का पूरा ढांचा उस न्यूक्लियस के चारों तरफ़ घूमता है। सौर-मंडल का केन्द्र सूरज है और उसके तमाम गृह-नक्षत्र लगातार उसके चारों तरफ़ घूम रहे हैं। इसी तरह आकाश-गंगा का एक केन्द्र है और आकाश-गंगा के अरबों सितारे इस केन्द्र के चारों तरफ़ घूमते है। यहां तक कि पूरे ब्रह्मांड का एक केन्द्र है और पूरी फैली हुई सृष्टि इस आख़िरी केन्द्र के चारों तरफ़ चक्कर लगा रही है।

वैज्ञानिकों का अन्दाज़ा है कि सृष्टि का यह केन्द्र एक दिन अपने चारों तरफ़ की चीज़ों को खींचना शुरू करेगा और फिर अकल्पनीय हद तक फैली हुई यह असीम सृष्टि अपने केन्द्र की तरफ़ सिमटना शुरू होगी और आख़िरकार वह वक़्त आएगा कि सृष्टि के सारे पिंड सिमट-सिमट कर एक केन्द्रीय गोले का रूप धारण कर लेंगे, जैसे बिखरी हुई कीलों के बीच चुम्बक लाया जाए और सब कीलें सिमट-सिमट कर उससे जुड़ जाएं।

इस तरह सृष्टि (क़ायनात) जैसे एकेश्वरवाद का व्यावहारिक प्रदर्शन बन गई है। वह अपने व्यवहार और अपनी गति से बता रही है कि इंसान की ज़िन्दगी को कैसा होना चाहिए। इंसान की ज़िन्दगी को ऐसा होना चाहिए कि उसकी तमाम सरगर्मियों का सिर्फ़ एक केन्द्र हो और वह एक ख़ुदा हो। आदमी के जज़्बात, उसकी सोच, उसकी सरगर्मियां, उसका सब कुछ ख़ुदा के आगे घूमने लगे।

आदमी अगर अपनी ज़िन्दगी का केन्द्र अपने आपको बनाए तो सृष्टि की गति के हिसाब से वह प्रतिकूल है। इसी तरह अगर वह अपने व्यक्तित्व के बाहर किसी को अपने ध्यान का केन्द्र बनाए तो मौजूदा ढांचा एक हस्ती के सिवा किसी दूसरे की 'केन्द्रीयता' को मानने से इन्कार करता है।

सृष्टि पुकार-पुकार कर कह रही है - 'एक' को अपने ध्यान का केन्द्र बनाओ, न कि एक के सिवा 'कई' को।

सीमाबद्धता का नियम

सृष्टि या क़ायनात का अध्ययन हमें बताता है कि यहां हदबंदी की विशेष व्यवस्था है। हर चीज़ अपने निश्चित और तयशुदा दायरे में रहकर अपना काम कर रही है। वह अपने दायरे से निकल कर दूसरे दायरे में दाख़िल नहीं होती। यही बात क़ुरान में इन शब्दों में कही गई है:

> "और सूरज, वह अपनी ठहराई हुई राह पर चलता रहता है। यह प्रभुत्वशाली (अज़ीज़) व ज्ञानवान (अलीम) का बांधा हुआ अंदाज़ा है। और चांद के लिए हमने मंज़िलें निर्धारित कर दीं, यहां तक कि वह ऐसा रह जाता है जैसे खजूर की पुरानी शाख़। न सूरज के वश में है कि वह चांद को पकड़ ले और न रात दिन से पहले आ सकती है। और सब एक-एक दायरे में तैर रहे हैं।" (36:38-40)

इन आयतों में उस आकाशीय सच्चाई की तरफ़ संकेत किया गया है कि इस क़ायनात के तमाम घूमने वाले सितारे और सैय्यारे (गृह व नक्षत्र)

अपनी-अपनी कक्षा (Orbit) में ठीक-ठीक और सुनिश्चित ढंग से घूमते हैं। वे कभी अपनी हद को छोड़कर दूसरे की हद में दाख़िल नहीं होते।

यही हदबन्दी या सीमाबद्धता इंसान के लिए भी आदर्श है। कुरान में कहा गया है कि जो लोग ख़ुदा की क़ायम की हुई हदों को तोड़ते हैं वे ख़ुदा की नज़र में ज़ालिम (अत्याचारी) हैं। (2:229)

यही बात हदीस में इन शब्दों में कही गई है:

> "और अल्लाह ने हदें क़ायम कर दी हैं। तो तुम उन हदों का उल्लंघन न करो" (मुसतदरक अल-हाकिम, हदीस संख्या 7114)

एक और हदीस में इस बात को मिसाल के ज़रिए इस तरह स्पष्ट किया गया है:

> "ईमान वाले की मिसाल ऐसी है जैसे घोड़ा, जो अपनी रस्सी में बंधा हुआ हो। वो घूमता है फिर वह अपनी रस्सी की तरफ़ लौट आता है।" (मुसनद अहमद, हदीस संख्या 11335)

एक घोड़े की गर्दन में पांच मीटर की रस्सी हो। वह रस्सी एक खूंटे से बंधी हो तो घोड़ा अपनी आदत के मुताबिक चारों तरफ़ घूमेगा पर वह रस्सी की लम्बाई से ज़्यादा न जा सकेगा। रस्सी अगर पांच मीटर की है तो उसकी हरकत का दायरा भी पांच मीटर तक सीमित रहेगा।

आसमान के सितारे एक अनदेखी रस्सी में बंधे हुए हैं जो उन्हें उनके तयशुदा दायरे (Orbit) से बाहर नहीं जाने देती। इसी तरह इंसान को भी एक नैतिक (अख़लाकी) रस्सी में बांधा गया है। यह रस्सी सही और ग़लत की रस्सी है। उसको सही काम करना है पर ग़लत क़दम नहीं उठाना है। इंसान को इंसाफ़ पर क़ायम रहना है। उसको ज़ुल्म और अत्याचार की इजाज़त नहीं, उसको जब बोलना है सच बोलना है, झूठ बोलना उसके लिए जायज़

नहीं। उसको अपनी तरक़्क़ी और कामयाबी के लिए प्रयत्नशील रहने की इजाज़त है। पर उसको यह इजाज़त नहीं कि वह दूसरों को नुकसान पहुंचाने की क़ीमत पर अपने लिए फ़ायदा हासिल करे।

इस सत्य को स्पष्ट किया जा सकता है। एक देश को बाहरी गुलामी से आज़ादी मिली। उसके बाद वहां का एक 'नागरिक सड़क पर निकला। वह खुशी से झूमता हुआ जा रहा था। और अपने दोनों हाथ ज़ोर-ज़ोर से हिला रहा था। इसी बीच उसका हाथ एक राहगीर की नाक से टकरा गया। राहगीर ने ग़ुस्सा होकर पूछा कि तुम इस तरह हाथ हिलाते हुए क्यों चल रहे हो? उस नागरिक ने जवाब दिया: "आज मेरे देश को आज़ादी मिल चुकी है। अब मैं आज़ाद हूं कि जो चाहूं करूं।" राहगीर ने अहिस्ता स्वर में कहा:

> "तुम्हारी आज़ादी वहां ख़त्म हो जाती है, जहां से मेरी नाक शुरू होती है।"
>
> (Your freedom ends where my nose begins.)

इस देश में हर आदमी को अमल और कर्म की आज़ादी है पर एक शख़्श को हाथ हिलाने की आज़ादी वहीं तक है जहां वह दूसरे की नाक से न टकराए। जैसे ही दूसरे शख्श की नाक से टकराने की हद शुरू हो वहीं हाथ हिलाने वाले की आज़ादी की हद भी ख़त्म हो जाती है।

ख़ुदा की तलाश

एक बेहद प्रतिभासम्पन्न आदमी था। वह लगातार इस एहसास में डूबा रहता था कि मैं ज़िन्दगी में अपने सही मुक़ाम को न पा सका। आखिरकार उसने आत्महत्या कर ली। आत्महत्या से पहले उसने अपने पत्र में लिखा था:

> "मैं अपनी ज़िन्दगी को ख़त्म कर रहा हूं, क्योंकि शायद मैं ऐसी दुनिया में भटक आया जिसके लिए मैं पैदा नहीं किया गया था।"

कमी का यह एहसास ऐसे बहुत से लोगों का पीछा किए रहता है, जो प्राकृतिक रूप से ग़ैर-मामूली ज़ेहन लेकर पैदा हुए हों। वे या तो घोर निराशा और असफलता की ज़िन्दगी गुज़ार कर मरते हैं या आत्महत्या कर लेते हैं। कम बुद्धि और कम प्रतिभा रखने वालों में ऐसे लोग काफ़ी मिल जाएंगे जो प्रत्यक्षतः संतुष्ट जीवन जीते हों, पर ज़्यादा प्रतिभाशाली लोगों में मुश्किल ही से कोई शख़्स मिलेगा, जो संतुष्ट जीवन हासिल करने में सफल हुआ हो।

इसकी वजह इंसान का आदर्शवाद है। हर इंसान स्वाभाविक तौर पर आइडियल (आदर्श) की तलाश में है। पर मौजूदा दुनिया में आइडियल को पाना इतना कठिन मालूम होता है कि कहावत बन गई है कि आदर्श कभी हासिल नहीं किया जा सकताः

Ideal cannot be achieved.

अब होता यह है कि कम बुद्धि रखने वालों में चूंकि चेतना बहुत ज़्यादा जागृत नहीं होती, वे आइडियल और ग़ैर-आइडियल के बीच बहुत ज़्यादा फ़र्क़ नहीं कर पाते। वे अपनी ख़राब पसंद (bad taste) की वजह से ग़ैर-आइडियल में भी इस तरह व्यस्त हो जाते हैं जैसे कि वह उनका आइडियल हो। पर जो लोग ज़्यादा बुद्धि- सम्पन्न और ज़्यादा ज़हीन हैं वे आइडियल और ग़ैर-आइडियल के फ़र्क़ को फ़ौरन महसूस कर लेते हैं और इसी लिए आइडियल से कम किसी चीज़ पर वह अपने को राज़ी नहीं कर पाते।

इंसान का आइडियल एक ही हो सकता है और वह उसका सृजनहार और पालनहार है। उच्च बुद्धिसम्पन्न लोग जिस चीज़ की तलाश में हैं

वे ईश्वरीय मिशन के सिवा कुछ नहीं, ख़ुदा का अस्तित्व ही आइडियल अस्तित्व है। और ख़ुदा के मिशन में अपने को लगा कर ही हम उस चीज़ को पा सकते हैं जो हमारी पूरी हस्ती को संतुष्टि दे और आइडियल के बारे में हमारी मानसिक कसौटी पर पूरी तरह खरा उतरे।

इंसान का आइडियल उसका ख़ुदा है। पर वह अपने इस आइडियल को 'ग़ैर-ख़ुदा' में तलाश करने का असफल प्रयास कर रहा है।

बोलने की सूझबूझ

पैग़म्बर मुहम्मद ने कहा है कि जो शख़्स अल्लाह पर और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता हो उसको चाहिए कि बोले तो भली बात बोले वरना चुप रहे।

ला ब्रूइयर (Jean de La Bruyere) एक फ्रांसिसी लेखक है। वह 1645 में पैदा हुआ और 1696 में उसकी मृत्यु हुई। उसने यही बात इन शब्दों में कही कि यह बड़ी बदक़िस्मती की बात है कि आदमी के अन्दर न इतनी समझ हो कि वह अच्छा बोले और न इतनी निर्णय-शक्ति हो कि वह चुप रहे:

> It is a great misery not to have enough wit to speak well, nor enough judgement to keep quiet.

बोलने की क्षमता एक महान् क्षमता है, जो अल्लाह तआला ने इंसान को दी है। बोलने की क्षमता को अगर सही तौर पर इस्तेमाल किया जाए तो वह नेमत है और अगर बोलने की क्षमता का बेजा इस्तेमाल किया जाए तो वह उतनी ही बड़ी मुसीबत बन जाती है।

बोलने की क्षमता का सही इस्तेमाल यह है कि आदमी बोलने से पहले सोचे। ख़ुद कहने से पहले वह दूसरों की सुने। जो शब्द भी वह मुंह से निकाले यह सोच कर निकाले कि उसको अपने बोले हुए एक-एक शब्द का जवाब ख़ुदा के यहां देना है। जिसके पास बोलने के लिए हो उसके बावजूद वह चुप रहने को पसन्द करे। जो ज़िम्मेदारी के एहसास के तहत बोले न कि बोलने के शौक़ के तहत।

इसके विपरीत बोलने की क्षमता का ग़लत इस्तेमाल यह है कि आदमी सोचे बग़ैर बोले; उसको सिर्फ़ सुनाने का शौक़ हो; सुनने से उसको कोई दिलचस्पी न हो; मामले को गहराई के साथ समझे बग़ैर मामले पर भाषण झाड़ने के लिए खड़ा हो जाए; उसका बोलना दिखावे के लिए हो न कि सच्चाई प्रकट करने के लिए।

बोलना सबसे बड़ा सवाब (पुण्य) है और बोलना सबसे बड़ा गुनाह भी। जो आदमी इस हक़ीक़त को जान ले, उसका बोलना भी सार्थक होगा और उसका चुप रहना भी सार्थक।

कमाने वाला अपने को बड़ा न समझे

पैग़म्बर के सहाबी अनस (रज़ी.) कहते हैं कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के ज़माने में दो भाई थे। एक भाई रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के पास आया करता था और दूसरा भाई घर के लिए कमाई करता था। कमाई करने वाले ने रसूलुल्लाह (स.अ.व.) से अपने भाई की शिकायत की (कि वह काम नहीं करता, मुझको अकेले ही दोनों के लिए कमाना पड़ता है) आपने फ़रमाया, “शायद तुमको रोज़ी उसी की वजह से मिलती हो।” (सुनन अल-तिर्मिज़ी, हदीस संख्या 2345)

ख़ुदा की कृपा

हमारे घर में पहले एक मीटर बैंड का मामूली ट्रांज़िस्टर था। वह सिर्फ़ दिल्ली रेडियो स्टेशन पकड़ता था। हम उससे दिल्ली की ख़बरें सुन लेते थे। मगर दूसरे मुल्कों के स्टेशन सुनना उसके ज़रिए मुमकिन न था। कई साल तक यही छोटा ट्रांजिस्टर हमारे लिए रेडियो प्रसारण सुनने का ज़रिआ बना रहा।

उसके बाद हमने चार मीटर बैंड का बड़ा रेडियो सेट ख़रीदा। यह रेडियो सेट दुनिया भर के तमाम मुल्कों के रेडियो स्टेशन पकड़ता था। इसके ज़रिए जब हमने बी.बी.सी. और दूसरे विदेशी स्टेशनों को सुना तो मालूम हुआ कि हम कितनी बड़ी दौलत से महरूम थे। विभिन्न मुल्क हर रोज़ क़ीमतीं प्रोग्राम प्रसारित करते हैं। उनको सुनने से ज़बरदस्त वैचारिक और मालूमाती फ़ायदे होते हैं। मगर इस बौद्धिक ख़ज़ाने से फ़ायदा उठाना हमारे लिए उस वक़्त तक मुमकिन न हो सका, जबकि हमने बड़ा रेडियो सेट अपने लिए हासिल न कर लिया।

ख़ुदा और बन्दे का मामला भी ऐसा ही है। ख़ुदा का फ़ैज़ान (कृपा) जैसे एक असीम और अनन्त प्रसारण-केन्द्र है। उससे हर लम्हा ख़ुदा के रिज़्क़ का मेह बरसता रहता है। मगर आप इससे कितना पाएं, यह बात आपके अपने 'रेडियो सेट' पर है। अगर आपका रेडियो सेट छोटा है तो आप बहुत कम चीज़ें ग्रहण कर सकेंगे। और अगर आपका रेडियो सेट बड़ा है तो आपके ऊपर इतना ज़्यादा ख़ुदा का फ़ैज़ान बरसेगा जैसे कि आप ख़ुदाई फ़ैज़ान के अथाह समन्दर में नहा उठे हैं।

आजकल हर आदमी सीमितता का शिकार है। कोई शख़्स है जो किसी गिरोही कवच में बन्द है। कोई अपने आपको तुच्छ स्वार्थों में इस तरह गुम किए हुए है कि उसको आगे-पीछे की कोई ख़बर नहीं। किसी का सतही होना उसके लिए गहरी हक़ीक़तों को समझने में रुकावट बना हुआ है।

किसी की संकुचित दृष्टि ने उसको इस क़ाबिल नहीं रखा है कि वह व्यापक दायरे को समझ सके।

बन्द कोठरी में सूरज की रोशनी नहीं पहुंचती। इसी तरह बन्द ज़ेहन ख़ुदा का फ़ैज़ान पाने से महरूम रहता है। ख़ुदा का 'फ़ैज़ान' उसी को मिलता है, जो अपने ज़ेहन के दरवाज़े खोलने पर राज़ी हो जाए।

तहज़ीब की वापसी

जोयस ब्रदर्स (Dr Joyce Brothers) एक अमरीकी महिला हैं। उन्होंने कोलम्बिया यूनीवर्सिटी से सायकोलोजी (मनोविज्ञान) में पी.एच.डी. किया। वह मनोविज्ञानी डाक्टर (मनोचिकित्सक) की हैसियत से प्रैक्टिस करती हैं। उनकी ताज़ा किताब का नाम कामयाब महिला (The Successful Woman) है।

जोयस ब्रदर्स का एक लेख रीडर्स डाइजेस्ट (अप्रैल 1990) में छपा। इस लेख में उन्होंने बहुत से मर्दों और औरतों के क़िस्से लिखे हैं जो उनसे शादीशुदा (दाम्पत्य) ज़िन्दगी के बारे में सलाह करने के लिए मिले। उन्होंने अपने तज्रिबों का खुलासा इस तरह लिखा है:

शादीशुदा जोड़े मुझसे जो सवाल पूछते हैं उनमें हाल के वर्षों में बहुत बड़ी तब्दीली आई है। दस साल पहले यह हाल था कि जब मियां-बीवी में तअल्लुक़ात बिगड़ते तो पहला सवाल यह किया जाता था कि मुझे तलाक़ चाहिए। मगर आज जो मर्द और औरत मुझसे मिलते हैं वे ज़्यादातर यह चाहते हैं कि इज़दिवाजी (दाम्पत्य) तअल्लुक़ को किस तरह बरक़रार रखा जाए:

Many of the questions couples ask me have

> changed in recent years. A decade ago, the first reaction when a marriage hit rough times was, "I want a divorce." But today, the men and women I talk to are more likely to want permanent relationships (p. 61).

पश्चिमी दुनिया में इससे पहले आज़ादी को पसन्द किया जाता था। मर्द और औरत मुकम्मल आज़ादी को अपना हक़ समझने लगे थे। मगर तजुर्बे और अनुभव ने बताया कि असीमित आज़ादी आख़िकार अपने स्वार्थ की पूर्ति तक ले जाती है। और इस प्रविर्ती की बुनियाद पर कभी कोई अच्छा समाज नहीं बनाया जा सकता।

इस कड़वे तजुर्बे के बाद अब पूरी आज़ादी के बजाए महदूद और सीमित आज़ादी का नज़रिया अपनाया जाने लगा है। इसकी एक मिसाल ऊपर के जायज़े में नज़र आती है। पूरी आज़ादी ने घरों को उजाड़ा और ज़िन्दगी का सुकून छीना। अब इंसान यह मानने पर मजबूर हो रहा है कि सुकून भरी ज़िन्दगी के लिए महदूद और सीमित आज़ादी के तरीक़े को इख़्तियार करना पड़ेगा।

आदमी के लिए मुमकिन नहीं कि वह ज़यादा देर तक फ़ितरत यानी प्रकृति से अलग चले।

ग़लतफ़हमी

गर्म इलाक़ों में एक ख़ास क़िस्म का पतंगा पाया जाता है, उसको आम तौर पर इबादतगुज़ार मैन्टिस या उपासक मैन्टिस (praying mantis) कहा जाता है। ज़्यादा सही तौर पर उसका नाम शिकारी मैन्टिस (preying

mantis) होना चाहिए। क्योंकि वह कीड़ों-मकोड़ों का शिकार करके उनसे अपनी ख़ुराक हासिल करता है।

मैन्टिस की दुनिया भर में एक हज़ार क़िस्में खोजी गई हैं। वह एक इंच से सात इंच तक लम्बा होता है। अपने माहौल के लिहाज़ से उसके रंग अलग-अलग होते हैं। मसलन भूरा, लाल और हरा।

एक बार एक शख़्स ने अपने घर के पास खुली ज़मीन में अपना किचन गार्डन (kitchen garden) बनाया। छोटी-छोटी क्यारियों में धनिया, मिर्च, बैगन, टमाटर वग़ैरह लगाया। जब पौधे बड़े और खूब हरे-भरे हो गए तो एक दिन उसने देखा कि उसकी क्यारी के अन्दर बड़े-बड़े दो हरे रंग के कीड़े मौजूद हैं। उसको अन्देशा हुआ कि ये मेरी सब्ज़ियों को खाएंगे और उनको नुक़सान पहुंचाएंगे। उसने फौरन उन दोनों कीड़ों को पकड़ा और मार डाला।

शाम को उसका एक दोस्त उससे मिलने के लिए आया। वह शहर के कालिज में वनस्पति शास्त्र (botany) का अध्यापक था। उसने अपने दोस्त से कहा कि आज मेरे किचन गार्डन में दो बड़े-बड़े कीड़े आ गए। वे मेरी सब्ज़ियों को खाना चाहते थे। मगर इससे पहले कि वे मेरी सब्ज़ियों को नुक़सान पहुंचाएं मैंने उन्हें मार कर ख़त्म कर दिया।

इस बात को उसने कुछ ऐसे ढंग से बताया कि दोस्त को ख़याल आया कि वे नए कीड़े कौन से थे। उसने पूछा कि वे मरे हुए कीड़े क्या अब भी मौजूद हैं? मैं उन्हें देखना चाहता हूं। इसके बाद आदमी ने अपने दोस्त को दोनों कीड़े दिखाए। दोस्त ने कहा कि तुमने तो बड़ी नादानी की। तुम जानते नहीं, यह तो मैन्टिस है, और मैन्टिस सब्ज़ीखोर (herbivorous) नहीं। वह तो पूरी तरह एक गोश्तख़ोर यानी मासाहारी (carnivorous) है। वह यहां क़ुदरत की तरफ़ से तुम्हारी मदद के लिए आया था। वह तुम्हारी सब्जियों को ज़रा भी नुक़सान न पहुंचाता। वह सिर्फ़ उन कीड़ों को खाता जो सब्ज़ियों को नुक़सान पहुंचाते हैं और जिनको ख़त्म करना तुम्हारे लिए मुश्किल है।

तुम भी कैसे नादान निकले कि तुम अपने फ़ायदे और नुक़सान को न समझ सके। तुमने अपने एक क़ीमती चौकीदार को मार डाला।

दोस्त की यह बात सुनते ही आदमी की ज़ुबान बन्द हो गई। उसको अपने किए पर बेहद अफ़सोस हुआ। यहां तक कि वह बीमार पड़ गया और कई दिन तक काम करने के क़ाबिल न रहा।

यह एक मिसला है जिससे अन्दाज़ा होता है कि ग़लतफ़हमी किसी आदमी को कितनी बड़ी-बड़ी कोताहियों में डाल सकती है। यहां तक कि यह भी मुमकिन है कि एक शख़्स सख़्त ग़लतफ़हमी में पड़ कर दूसरे शख़्स की जान ले ले, हालांकि यह दूसरा शख़्स बिल्कुल बेक़ुसूर हो। वह एक आदमी को बेइज़्ज़त करने पर तुल जाए, हालांकि हक़ीक़त में वह ऐसा आदमी हो कि उसके साथ बेहद इज़्ज़त और सम्मान का बर्ताव किया जाए।

इसीलिए क़ुरान में यह हुक्म है कि राय क़ायम करने या किसी के ख़िलाफ़ कोई क़दम उठाने से पहले उसके मामले में पूरी जांच-पड़ताल करो। ऐसा हर्गिज़ मत करो कि किसी के ख़िलाफ़ कोई एक ख़बर सुनो और फ़ौरन उसको मान लो, और उसके ख़िलाफ़ कोई बड़ी कार्रवाई कर बैठो। हो सकता है कि तहक़ीक़ के बाद तुमको मालूम हो कि जो ख़बर तुमको पहुंची थी, वह ख़बर सरासर ग़लत और बेबुनियाद थी:

> ऐ ईमान वालो, अगर कोई फ़ासिक़ (पापी) तुम्हारे पास ख़बर लाए तो तुम अच्छी तरह जाँच कर लिया करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम किसी समूह को अज्ञानतावश कोई नुक़्सान पहुंचा दो, फिर तुम्हें अपने किए पर पछताना पड़े। (49:6)

ग़लत ख़बर को सुन कर उसके अंजाम से बचने की तदबीर निहायत आसान है – वह यह कि किसी बात को सुनने के बाद उस वक़्त तक उसे न माना जाए तब तक प्रत्यक्ष स्रोत से उसकी तहक़ीक़ न कर ली जाए।

कथनी के साथ करनी

28 अप्रैल 1990 को श्री कुलदीप सिंह गुजराल (पैदाइश 1940) से मुलाक़ात हुई। वह *अल-रिसाला* से बहुत दिलचस्पी रखते हैं और इसको निहायत पाबन्दी के साथ पढ़ते हैं।

गुजराल साहब के साथ जनाब राहत हाशमी साहब भी थे। उन्होंने बातचीत के दौरान कहा कि एक हफ़्ते पहले मैं गुजराल साहब के साथ दिल्ली में किसी सड़क पर चल रहा था। हमने देखा कि एक सरदार लड़का भीख मांग रहा है। गुजराल साहब फ़ौरन रुक गए। उन्होंने लड़के को बुलाया और कहा कि तुम सरदार हो कर भीख मांगते हो। उसको समझाया और फिर कहा कि यह मेरा पता है, कल तुम मेरे यहां आ जाओ। मैं तुमको किसी आफ़िस में ले चलूगा और वहां तुमको काम दिलाऊंगा।

यह बात आम तौर पर मशहूर है कि सरदार (सिख) भीख नहीं मांगता। मगर सरदार भीख क्यों नहीं मांगता, इसका राज़ मुझे उस वाक़िए को सुनने के बाद समझ में आया।

इस वाक़िए पर ग़ौर कीजिए। इस वाक़िए के दो हिस्से हैं। एक गुजराल साहब का लड़के से यह कहना कि तुम भीख क्यों मांगते हो? दूसरा है, लड़के से यह कहना कि तुम मेरे यहां आ जाओ। मैं तुमको किसी आफ़िस में काम दिला दूंगा।

आपको ऐसे बेशुमार लोग मिलेंगे जो भीख मांगने वालों की कतारें देख कर उनको बुरा कहें। उनके खिलाफ़ तक़रीर करें और मज़मून लिखें। मगर सिर्फ़ इस क़िस्म की तक़रीर और तहरीर से भीख मांगना ख़त्म नहीं हो सकता। भिखारियों को ख़त्म करने के लिए ज़रूरी है कि मालदार लोग निजी तौर पर यह ज़िम्मेदारी लें कि वे भीख के पेशे को ख़त्म करने के लिए अमली तौर पर अपना हिस्सा अदा करेंगे।

क़ौम के अन्दर कोई भिखारी न रहे, यह बड़ी अच्छी सोच है। मगर ऐसा उसी वक़्त हो सकता है जब कि कहने वाले अपनी कथनी के साथ-साथ अपनी करनी को भी शामिल करें। करनी के बिना कथनी का फ़ायदा सिर्फ़ कहने वाले को मिलता है। लेकिन कथनी के साथ करनी का फ़ायदा उन लोगों तक पहुंच जाता है, जिनके लिए कहने वाले ने अपनी बात कही थी।

सुधार का क्रेडिट सिर्फ़ उसको मिलता है, जो कहने के साथ करने के लिए भी तैयार हो।

कामयाबी की फ़ेहरिस्त

सय्यद मुहम्मद केरल में पैदा हुए। उनकी तालीम लन्दन में हुई। उनकी ग़ैरमामूली प्रतिभा और सलाहियतों को देख कर 80 वर्षीय अंग्रेज़ उस्ताद प्रोफ़ैसर स्टेवैन्स (Dr Cleveland Stevans) ने 1957 में कहा था, "ऐ नौजवान, एक दिन तुम अपने मुल्क के नुमाइन्दा बन कर आओगे। मगर उस वक़्त तुमको देखने के लिए मैं मौजूद नहीं रहूंगा।"

> Young man, one day you will come here to represent your country. But I would not be there to see you.

यह भविष्यवाणी 23 साल बाद पूरी हुई और मिस्टर सय्यद मुहम्मद हिन्दुस्तान के हाई कमिश्नर बन कर लन्दन गए।

सय्यद मुहम्मद ने बैरिस्टरी का आग़ाज़ किया। इसके बाद उन्हें बहुत से ओहदे मिले। वह अक़्वामे-मुत्तहदा (संयुक्त राष्ट्र) में भारत के प्रतिनिधि थे, केरल कैबिनेट में मंत्री हुए। माइनरिटीज़ कमीशन के चैयरमैन बने, वग़ैरह।

सय्यद मुहम्मद के ख़ास दोस्तों में एक मिस्टर खुशवन्त सिंह भी थे। उन्होंने सय्यद मुहम्मद के बारे में एक मज़मून लिखा, जो इस पैराग्राफ़ पर ख़त्म हुआः

> Seyid's passions were politics and law. He had applied for the Congress-I ticket to fight the last parliamentary elections. Going by his records he would have undoubtedly won it. Kerala State Congress bosses denied him the ticket. It broke Seyid's heart and a month later the setback took his life.

सय्यद मुहम्मद का शौक़ सियासत और क़ानून था। उन्होंने कांग्रेस (आई) के टिकट के लिए दरख़्वास्त दी थी, ताकि पार्लियामेन्टरी इलेक्शन लड़ सकें। अपने रिकार्ड के लिहाज़ से वह ज़रूर कामयाब होते। केरल कांग्रेस के ज़िम्मेदारों ने उन्हें टिकट देने से इन्कार कर दिया। इस वाक़ए ने सय्यद मुहम्मद का दिल तोड़ दिया। और एक महीने के बाद इस हादसे ने उनकी ज़िन्दगी ली। (हिन्दुस्तान टाइम्स, मार्च 1985)।

आज इंसान कामयाबियों की फ़ेहरिस्त में सिर्फ़ एक कमी को बर्दाश्त नहीं कर पाता। हालांकि इंसान पर वह दिन आने वाला है, जब कामयाबियों की पूरी फ़ेहरिस्त उससे छिन जाएगी। कैसा अजीब होगा वह दिन और कैसा अजीब होगा उस दिन इंसान का हाल!

पहला क़दम

नील आर्मस्ट्रांग पहले इंसान थे जिन्होंने चंद्रमा की सतह पर कदम रखा। 21 जुलाई 1969 को उन्होंने 'ईगल' नामक लूनर मॉड्यूल से उतरकर चंद्रमा

पर पहला क़दम रखा। उस वक़्त ज़मीन और चांद के बीच बराबर संचार सम्पर्क क़ायम था। चांद पर उतरने के बाद उन्होंने ज़मीन वालों को जो पहला पैग़ाम दिया वह यह था कि आदमी के लिए वह एक छोटा क़दम है, मगर इन्सानियत के लिए यह एक अज़ीम और महान छलांग है:

> That's one small step for man, but one giant leap for mankind.

आर्मस्ट्रांग का मतलब यह था कि मेरा इस वक़्त चांद पर उतरना वैसे तो सिर्फ़ एक शख़्स का चांद पर उतरना है, मगर वह एक नए कायनाती दौर का आग़ाज़ है। एक आदमी के सही-सलामत चांद पर उतरने से यह साबित हो गया कि इंसान के लिए चांद का सफ़र मुमकिन है। यह खोज आइन्दा आगे बढ़ेगी। यहां तक कि वह वक़्त आएगा जबकि आम लोग एक सय्यारे (ग्रह) से दूसरे सय्यारे तक उसी तरह सफ़र करने लगेंगे जिस तरह मौजूदा ज़मीन के ऊपर करते हैं।

हर बड़ा काम मौजूदा दुनिया में इसी तरह होता है। शुरू में एक आदमी या कुछ आदमी क़ुरबानी देकर एक खोज तक पहुंचते हैं। इस तरह वे इन्सानी सफ़र के लिए एक नया रास्ता खोलते हैं। यह शुरू का काम बेशक बेहद मुश्किल है। वह पहाड़ को अपनी जगह से खिसकाने के बराबर है। लेकिन जब यह शुरू का काम हो जाता है तो उसके बाद सारा मामला आसान हो जाता है। अब एक ऐसा खुला रास्ता लोगों के सामने आ जाता है कि इन्सानी क़ाफ़ले बड़ी तादाद में उस पर सफ़र कर सकें।

किसान जब ज़मीन में एक बीज डालता है तो वह गोया खेती की तरफ़ एक 'छोटा क़दम' होता है। लेकिन इस छोटे क़दम के साथ ही किसान के खेती के सफ़र का आग़ाज़ हो जाता है। यह सफ़र जारी रहता है, यहां तक कि वह समय आता है कि उसके खेत में एक फ़सल खड़ी हुई नज़र आए।

यही तरीक़ा तमाम इन्सानी मामलों के लिए भी दुरूस्त है, चाहे वह खेती और बाग़बानी का मामला हो या और कोई मामला।

कामयाबी की शर्त

जापान आज आर्थिक सुपर पावर (Economic Superpower) की हैसियत रखता है, इस बात से किसी को इन्कार नहीं। पारम्परिक तौर पर फ़ौजी ताक़त किसी क़ौम को सुपर पावर बनाती थी। मगर जापान ने अपनी मिसाल से साबित किया कि आर्थिक तरक़्क़ी के ज़रिए भी एक क़ौम सुपर पावर बन सकती है। फिर यह कि फ़ौजी ताक़त के बल पर सुपर पावर बनने वाली क़ौम एक हद के बाद अपनी ताक़त खो देती है, जबकि आर्थिक सुपर पावर के लिए इस क़िस्म की कोई हद नहीं।

जापान आर्थिक सुपर पावर कैसे बना? वह नारों की सियासत और मांग के हंगामों के ज़रिए सुपर पावर नहीं बना। बल्कि ख़ामोश अमल के ज़रिए सुपर पावर बना। इस ख़ामोश अमल का सबसे अहम हिस्सा यह था कि उसने अपने लिए छोटी हैसियत को तस्लीम किया। उसके बाद उसको बड़ी हैसियत मिली। टोकियो स्थित पत्रकार सुभाष चक्रवर्ती का एक जायज़ा *टाइम्स ऑफ़ इंडिया* (27 अप्रैल 1990) में छपा है। उसमें कहा गया है:

> Japan, having long recognised the U.S. as the most important external actor in Asia, seeks to share power and influence with it without compromising Japan's own self-interests or ambitions.

> जापान लम्बी मुद्दत तक अमरीका की यह हैसियत मानता रहा है कि वह एशिया में सबसे ज़्यादा अहम बाहरी कर्ता-धर्ता की हैसियत रखता है। इसके बाद अब वह वक़्त आया है कि जापान अपने स्वार्थों या अपनी आंकाक्षाओं के मामले में समझौता किए बैगर अमरीका के साथ ताक़त और असर में हिस्सेदार बनने की कोशिश करे (पेज 8)

यही मौजूदा दुनिया में तरक़्क़ी का उसूल है। यहां बड़ा बनने के लिए पहले छोटा बनना पड़ता है। असर हासिल करने के लिए पहले बेअसर बनने पर राज़ी होना पड़ता है। यहां आगे बढ़ना उसके लिए मुक़द्दर है, जो आगे बढ़ने से पहले पीछे हटने के मौक़े को बर्दाश्त करे।

इस दुनिया में खोना पहले है और पाना उसके बाद।

मुजरिम कौन

एक आदमी को गुलाब का फूल तोड़ना था। वह शौक़ के तहत तेज़ी से लपक कर उसके पास पहुंचा और झटके के साथ एक फूल तोड़ लिया। फूल तो उसके हाथ में आ गया, लेकिन तेज़ी के नतीजे में कई कांटे उसके हाथ में चुभ चुके थे। उसके साथी ने कहा कि तुमने बड़ी बेवकूफी की। तुमको चाहिए था कि कांटो से बचते हुए एहतियात के साथ फूल तोड़ो। तुमने एहतियात वाला काम बेएहतियाती से किया। इसी का नतीजा है कि तुम्हारा हाथ ज़ख्मी हो गया।

अब फूल तोड़ने वाला गुस्सा हो गया। उसने कहा कि सारा क़ुसूर तो इन कांटों का है। उन्होंने मेरी हथेली और मेरी उंगलियों से खून निकाल दिया। और तुम उल्टा मुझको मुजरिम ठहरा रहे हो। उसका साथी बोलाः मेरे दोस्त,

यह दरख़्त के कांटों का मामला नहीं, यह क़ुदरत के निज़ाम का मामला है। क़ुदरत ने दुनिया का निज़ाम इसी तरह बनाया है कि यहां फूल के साथ कांटे हों। मेरी और तुम्हारी चीख़ और पुकार ऐसा नहीं कर सकती कि इस निज़ाम को बदल दे। फूल के साथ कांटे का यह निज़ाम तो बहरहाल इसी तरह दुनिया में रहेगा। अब मेरी और तुम्हारी कामयाबी इसमें है कि हम सच्चाई को मानते हुए इससे बचने की तदबीर तलाश करें। और वह तदबीर यह है कि कांटों से बच कर फूल को हासिल करें। कांटों में न उलझते हुए फूल तक पहुंचने की कोशिश करें।

फूल के साथ कांटे का होना कोई सादा बात नहीं। यह फ़ितरत और क़ुदरत की ज़ुबान में इंसान के लिए सबक़ है। यह वनस्पति की ज़ुबान में इन्सानी हक़ीक़त का ऐलान है। यह उस तख़्लीक़ी और सृजानात्मक मन्सूबे का परिचय है, जिसके मुताबिक़ मौजूदा दुनिया को बनाया गया है। इसका मतलब यह कि इस दुनिया में वही क़दम कामयाब होता है जो बच कर चलने के उसूलों के मुताबिक़ हो।

जहां बचने की ज़रूरत हो वहां उलझना, जहां तदबीर की ज़रूरत हो वहां एजीटेशन करना सिर्फ़ अपनी नालायक़ी का ऐलान करना है, ख़ुदा ने जिस मौक़े पर बच कर चलने का तरीक़ा इख़्तियार करने का हुक्म दिया हो, वहां उलझने का तरीक़ा इख़्तियार करना ख़ुद अपने आपको मुजरिम बनाना है, चाहे आदमी ने दूसरों को मुजरिम साबित करने के लिए डिक्शनरी के तमाम अल्फ़ाज़ दुहरा डाले हों।

कामयाबी का टिकट

मौजूदा ज़माने में कामयाबी हासिल करने की सबसे ज़्यादा यक़ीनी और विश्वसनीय तदबीर तालीम है। जिन लोगों ने इस राज़ को जान लिया है वे इससे ज़बरदस्त फ़ायदा हासिल कर रहे हैं।

1. अमरीका में हर साल एक तालीमी मुक़ाबला होता है, जिसमें पूरे मुल्क के छात्र शरीक होते हैं। इसमें अमरीका के छह टॉप विज्ञान छात्र (Top 6 science students) का चयन किया जाता है। 1987 में जब इस क़िस्म के छह टॉप अमरीकी छात्रों का सिलेक्शन किया गया तो उनमें एक हिन्दुस्तानी लड़की केशानी भूषण का नाम भी शामिल था। उसको बाल्डविन कालेज (Mary Baldwin College) से एक हज़ार डालर महीने का वज़ीफ़ा दिया जाएगा (हिन्दुस्तान टाइम्स 30 अगस्त 1987)
2. दिल्ली के 21 मार्च के अख़बारों में एक ख़बर थी। इंडियन एक्सप्रेस (21 मार्च 1988) ने उसकी सुर्ख़ी इन लफ़्ज़ों में लगाई थीः अमरीकी विज्ञान प्रतियोगिता में हिन्दुस्तानी लड़के ने टाप कियाः

Indian boy tops in U.S. Science Competition

3. अमरीका में कई क़िस्म के साइंसी मुक़ाबले होते हैं। उनमें से एक ख़ास मुक़ाबला वह है जिसको वेस्टिंगहाउस साइंस टैलेंट सर्च (Westinghouse Science Talent Search) कहा जाता है। 1988 में इसका 47 वां सालाना मुक़ाबला हुआ। इस मुक़ाबले में जो छात्र अव्वल आया वह एक हिन्दुस्तानी छात्र था, जिसका नाम चेतन नायक है। उसको 20 हज़ार डालर सालाना तालीमी वज़ीफ़ा दिया जाएगा, ताकि वह अपनी तालीम अच्छी तरह जारी रख सके। पिछली वेस्टिंग हाउस साइंस टैलेंट सर्च में कामयाब होने वाले पांच छात्रों ने बाद में नोबेल प्राइज़ हासिल किया।

तालीम मौजूदा ज़माने में कामयाबी का टिकट है (ticket to

success) है। तालीम के डिगरी वाले निज़ाम ने कामयाबी के इस ज़ीने को हर आदमी के दरवाज़े तक पहुंचा दिया है। इससे फ़ायदा उठाने के लिए सिर्फ़ एक चीज़ की ज़रूरत है और वह मेहनत है। आदमी अगर मेहनत और सूझबूझ के साथ इस इमकान (संभावना) को इस्तेमाल करे तो हर जगह वह आलातरीन कामयाबी हासिल कर सकता है, चाहे वह अमरीका हो या हिन्दुस्तान या कोई और मुल्क।

शेर देख रहा है

जिम कार्बट (Jim Corbet) एक अंग्रेज़ था। वह 1907 में हिन्दुस्तान आया। उसको मालूम हुआ कि कुमाऊं (उत्तर प्रदेश) के जंगलों में बहुत से आदमख़ोर शेर हैं। वह अपनी राइफ़ल लेकर कुमाऊं के जंगल में पहुंच गया। 1907 में उसने पहले आदमख़ोर शेर को अपनी गोली का निशाना बनाया, जो 430 आदमियों को मार कर खा चुका था। जिम कार्बट ने कुमाऊं के जंगलों में 22 साल गुज़ारे। उसने अपनी जान को ख़तरे में डाल कर एक दर्जन से ज़्यादा आदमख़ोर शेरों को मारा। इस जान जोखिम काम का एकमात्र इनाम जिम कार्बट की यह रूहानी तस्कीन और आत्मिक शान्ति थी कि वह ज़मीन के एक छोटे से हिस्से को इस क़ाबिल बनाए कि एक लड़की महफ़ूज़ तौर पर वहां चल सके।

> Satisfaction at having made a small portion of
> the earth safe for a girl to walk on.

जिम कार्बट ने अपनी किताब, कुमाऊं के आदमख़ोर शेर (Man-eaters of Kumaon) में अपने उन तजुर्बों को तफ़सील के साथ लिखा

है जो आदमख़ोर शेरों से मुक़ाबला करते हुए उसके साथ पेश आए। एक जगह उसने लिखा है कि दिन की रोशनी में भी शेर के पास होने का एहसास, जबकि उसने आपको देखा भी न हो; ख़ून की रफ़्तार में हलचल पैदा कर देता है। फिर जब शेर एक आम शेर न हो, बल्कि व आदमख़ोर शेर हो, अंधेरी रात के 10 बजे हों, और आप जानते हों कि आदमख़ोर शेर आपको देख रहा है, उस वक़्त ख़ून की रफ़्तार एक तूफ़ान बन जाती है:

> The near proximity of a tiger in daylight, even when it has not seen you, causes turbulence in the bloodstream. When the tiger is not an ordinary one, however, but a man-eater and the time is ten o’clock on a dark night, and you know the man-eater is watching you, the flow of blood becomes a storm.

यह एहसास कि शेर मेरे क़रीब है और मुझे देखा रहा है, आदमी के ख़ून में तूफ़ान बरपा कर देता है फिर उस इंसान का क्या हाल होगा जिसके अन्दर यह यक़ीन आ जाए कि वह ख़ुदा जो तमाम शेरों का और तमाम ज़मीन और आसमान का बनाने वाला है, वह मेरे क़रीब है और मुझको इस तरह देख रहा है कि मेरी कोई चीज़ उससे छुपी हुई नहीं रह सकती।

ज़िन्दगी का राज़

बिल काज़बी एक अफ़्रीकी-अमेरिकी नागरिक हैं। वह 1937 में एक ग़रीब ख़ानदान में पैदा हुआ। शुरू में वह मुश्किल से एक हज़ार डालर सालाना कमाता था। आज उसकी सालाना आमदनी कई मिलियन डालर तक पहुंच

चुकी है। गोरे अमरीका में एक काले शख़्स को यह ग़ैर-मामूली कामयाबी कैसे हासिल हुई? जवाब यह है कि तालीम और सूझबूझ भरी जिद्दोजहद के ज़रिए। बिल काज़बी फ़्लाडालफ़िया के एक स्कूल में पांचवीं ग्रेड में था। वह स्कूल में अक्सर तमाशे किया करता था और पढ़ाई पर ज़्यादा ध्यान नहीं देता था। उसकी टीचर मिस नैजल (Miss Nagle) ने एक दिन उससे कहा कि अगर तुम जौकर बनना चाहते हो तब भी तुम्हे ऊंची तालीम हासिल करनी चाहिए। तालीम के बग़ैर तुम किसी भी मैदान में तरक़्क़ी नहीं कर सकते (*स्पान*, जनवरी 1987)।

बिल काज़बी ने इस नसीहत को पकड़ लिया। उसने पढ़ाई में मेहनत शुरू कर दी। यहां तक कि उसने एजूकेशन में डाक्टरेट कर लिया। उसके बाद उसने तफ़रीही प्रोग्रामों में हिस्सा लेना शुरू किया।

आख़िरकार उसको टेलीविज़न प्रोग्राम मिलने लगे। आज वह अमरीका का मशहूरतरीन कामेडियन (comedian) है। बिल काज़बी शो (Bill Cosby Show) अमरीकी टेलीविज़न का सबसे महंगा प्रोग्राम होता है। दूसरे बहुत से अमरीकियों के उलट उसने नस्ली भेदभाव की बातें करने से परहेज़ किया। उसने अपनी कहानियां वैश्विक घटनाओं पर बनाईं जो तमाम लोगों के लिए समझने में आसान हो सकें:

> Unlike many other black comedians, he avoided racial nuances and drew his stories from the kind of universal occurrences that could be understood by all. *Span*, January 1987.

अमरीकी आमतौर पर काले लोगों को पसंद नहीं करते। मगर वे बिल काज़बी के प्रोग्राम को निहायत शौक़ के साथ देखते हैं। बिल काज़बी ने गोरे लोगों की रिआयत की तो गोरे लोगों ने भी बिल काज़बी की रिआयत करना शुरू कर दिया। अगर आप चाहते हैं कि दूसरे आप में दिलचस्पी लें तो

आप भी दूसरों में दिलचस्पी लेना शुरू कर दीजिए। और इसके बाद आपको किसी से शिकायत न होगी।

महंगी कीमत

क़दीम रोमी शहंशाह आक्टैवियन (Octavian), जिसको आगस्टस (Caesar Augustus) भी कहा जाता है, 63 ईसा पूर्व पैदा हुआ, और 14 ईस्वी में मरा। वह हिकमत की बातों के लिए मशहूर है। उसका एक क़ौल (वचन) अंग्रेज़ी तर्जुमे में इस तरह आया हैः

> Whoever seeks to obtain small benefits at the risk of great dangers is like a fisherman using a hook of gold: should it come off, no catch would compensate the loss.

जो शख़्स बड़े नुकसानों का ख़तरा मोल ले कर छोटे फ़ायदे हासिल करना चाहता है उसकी मिसाल उस मछेरे जैसी है जो मछली पकड़ने के लिए सोने का कांटा इस्तेमाल कर रहा हो। अगर उसका कांटा निकल कर नदी में गिर जाए तो उसका शिकार चाहे कितना ही हो, उसके नुक़सान की भरपाई नहीं कर सकता।

हिकमत की यह बात अब से लगभग दो हज़ार साल पहले कही जा चुकी थी। मगर इंसान आज भी उसको पूरी तरह इख़्तियार न कर सका। आज भी बेशुमार लोग और गिरोह मिलेंगे जो छोटे फ़ायदे को हासिल करने के लिए बहुत बड़े-बड़े खतरों में कूद पड़ते हैं। वे चंद मछलियां पकड़ने की ख़ातिर सोने का कांटा खो देते हैं।

ग़लती की यह क़िस्म सबसे ज़्यादा जिन लोगों में पाई जाती है वे

क़ौम के लीडर हैं। एक लीडर अपने मामूली फ़ायदे के लिए क़ौम को ऐसी बरबादी में डाल देगा, जिसकी भरपाई सैकड़ों साल में भी न हो सके। वह अपनी वक़्ती मक्बूलियत व शोहरत के लिए क़ौम को मुस्तक़िल ज़िल्लत और बदनामी के गढ़े में धकेल देगा। वह अपने सिक्कों की ख़ातिर पूरी क़ौम की इक़्तिसादियात (अर्थतंत्र) को तहस नहस कर देगा। वह सस्ती शोहरत हासिल करने के लिए क़ौम के लोगों की ज़िन्दगी इतनी महंगी कर देगा कि वह उसके अन्दर पिस कर रह जाएं।

अगर किसी शख़्स की पतंग समंदर में गिर जाए तो वह उसको पकड़ने के लिए समंदर की मौजों में नहीं कूदेगा। वह एक पतंग की ख़ातिर अपनी ज़िन्दगी को ख़तरे में नहीं डालेगा। मगर मिल्लत और क़ौम के मामले में हर लीडर यही नादानी कर रहा है। कैसे अजीब हैं लीडर और कैसे अजीब हैं उनकी पैरवी करने वाले।

ख़्वाब में

श्री राम रतन कपिला रेफ्रिजरेटर और एयरकंडीशनर का व्यापार करते हैं। उनकी फ़र्म का नाम कैपसन्स है। नई दिल्ली में आसफ़ अली रोड पर इसका हैड आफ़िस है।

मिस्टर राम रतन कपिला को अपनी फ़र्म के लिए एक स्लोगन की ज़रूरत थी। उन्होंने अख़बार में विज्ञापन दिया कि जो शख़्स कम अल्फ़ाज़ में एक अच्छा स्लोगन बना देगा उसको अच्छा इनाम दिया जाएगा। बार-बार विज्ञापन देने के बावजूद कोई ऐसा शख़्स न मिला जो उन्हें अच्छा स्लोगन दे सके। कुछ लोगों ने कुछ लाइनें लिख कर भेजीं पर श्री कपिला को वे पसंद

नहीं आई। “स्लोगन को ज़ोरदार और असरदार होना चाहिए, पर ये स्लोगन ऐसे न थे,” 4 दिसम्बर 1983 की एक मुलाक़ात में उन्होंने कहा।

मिस्टर कपिला इसी उधेड़बुन में रात-दिन लगे रहे। वह लगातार इसके बारे में सोचते रहे। उनका दिमाग़ बराबर स्लोगन की तलाश में लगा हुआ था, पर कामयाबी नहीं मिल रही थी।

इस फ़िक्र में करीब छः साल बीत गए। इसके बाद ऐसा हुआ कि श्री कपिला ने एक रोज़ एक ख़्वाब देखा। ख़्वाब में उन्होंने देखा कि वह एक बाग़ में हैं। बेहद सुहाना मौसम है। तरह-तरह की चिड़ियां पेड़ों पर चहचहा रही हैं। यह नज़ारा देख कर वह बेहद ख़ुश हो गए। उनके मुंह से निकला: “वैदर (weather) हो तो ऐसा।”

यह कहते हुए उनकी आंख खुल गई। अचानक उन्हें लगा कि वह स्लोगन उन्होंने पा लिया है जिसकी तलाश में वह बरसों से परेशान थे। फ़ौरन उनके ज़ेहन में यह अंग्रेज़ी जुमला आ गया: KAPSONS: The Weather Masters.

स्वप्न इंसानी दिमाग़ की वह सरगर्मी है जिसको वह नींद की हालत में जारी रखता है। अगर आप अपने ज़ेहन को सारे दिन किसी चीज़ में लगाए रखें तो रात के वक़्त वही चीज़ ख़्वाब में आपके सामने आएगी। इतिहास की बहुत सी खोजें स्वप्न के ज़रिए दुनिया में आई में हैं। इसकी वजह यह थी कि खोज करने वाला (आविष्कारक) अपनी खोज में इतना डूब गया कि वह सोते में भी उसी का सपना देखने लगा। ख़्वाब दरअस्ल किसी चीज़ में ज़ेहनी तौर पर पूरी तरह खो जाने या लग जाने का नतीजा है। ऐसे आदमी के काम करने का वक़्त 12 घंटे के बजाय 24 घंटे हो जाता है। यही किसी मक़्सद में कामयाब होने का राज़ है। इस क़िस्म के गहरे लगाव के बिना कोई बड़ा काम नहीं किया जा सकता, न दुनिया का और न आख़िरत का।

हौसलामन्दी

सर सी. वी. रमन (1888-1970) एक मशहूर भारतीय वैज्ञानिक थे। उन्होंने प्रकाश की सांइस में एक नया सिद्धान्त खोजा जो उन्हीं के नाम पर रमन इफ़ेक्ट (Raman Effect) कहा जाता है। उनकी इस खोज पर उन्हें 1930 में फिजिक्स का नोबेल प्राइज़ दिया गया।

रमन तमिलनाडु के एक गांव में पैदा हुए। उन्होंने बहुत मेहनत के साथ पढ़ा। यहां तक कि बी.एससी. और एम. एससी. में उन्होंने मद्रास यूनिवर्सिटी में टाप किया। वह निहायत हौसलामन्द आदमी थे। उन्होंने कलकत्ता यूनिवर्सिटी के वाइस चान्सलर (तत्कालीन) सर आषुतोश मुखर्जी के सामने यह प्रण किया कि मैं नोबेल प्राइज़ को स्वेज़ के पूरब में ले आऊंगा।

I will bring the Nobel Prize east of the Suez.

इस संकल्प को पूरा करने के लिए उन्होंने बेपनाह मेहनत शुरू की। हालांकि रिसर्च की आसानियां उन्हें हासिल न थीं। मआशी और आर्थिक ज़रूरत के तहत उन्होंने कलकत्ता में एक सरकारी नौकरी कर ली थी। एक दिन वह ट्राम के ज़रिए बऊ बाज़ार (कलकत्ता) से गुज़र रहे थे। उन्होंने देखा कि एक इमारत पर एक बोर्ड पर यह लिखा हुआ था :

Indian Association for the Cultivation of Science.

यह बोर्ड देख कर वह चलती ट्राम से कूद पड़े। उस आफ़िस में जाकर उसके बारे में जानकारी हासिल की। पता चला कि यहां रिसर्च की सहूलियतें मौजूद हैं। इसके बाद वह सुबह-सवेरे वहां पहुंच जाते और आफ़िस के वक़्त तक लगातार अपनी रिसर्च और प्रैक्टिकल्स में लगे रहते। इसी तरह शाम को आफ़िस से छुट्टी पाते ही दोबारा वहां पहुंच जाते और रात तक वहां अपने

काम में लगे रहते। इस तरह पन्दरह साल की लगातार मेहनत से उन्होंने वह सिद्धान्त खोज निकाला, जिस पर उन्हें सबसे बड़ा इनाम (नोबेल प्राइज़) दिया गया।

जीत, जंग के बिना

मिस्टर रिचर्ड निक्सन 1968 से 1974 तक अमरीका के राष्ट्रपति थे। उन्होंने अपनी यादों पर आधारित एक किताब लिखी है, जिसका नाम है – 1999, जंग के बिना फ़तहः

Richard Nixon, *1999: Victory Without War.*

इस किताब में जो बातें कही गई हैं, उनमें से एक बात अमरीका और जापान के आपसी ताल्लुक़ के बारे में है। निक्सन लिखते हैं:

> अमरीकियों ने 1945 में जापान के बड़े हिस्से को तबाह कर दिया। फिर दूसरे विश्व-युद्ध के बाद उन्होंने ज़बरदस्त आर्थिक मदद के ज़रिए जापान की दोबारा तामीर (निर्माण) की। जापान के साथ उन्होंने यह मामला अपने निजी मक़्सद के लिए, एक आदर्श मुल्क बनाने के लिए किया। इससे उनका मक़्सद यह था कि इस कम्युनिस्ट नज़रिए को ग़लत साबित कर सकें कि ग़रीबी को पूंजीवादी व्यवस्था के तहत ख़त्म नहीं किया जा सकता।

इसलिए जापान में पुराने राजतंत्र की जगह लोकतंत्र लाया गया। अमरीकियों ने ख़ुद वहां का संविधान तैयार किया। उसका डिफेंस पूरी तरह वाशिंगटन के तहत कर दिया गया।

इस तजुर्बे के 35 साल बाद आर्थिक मतभेदों के कड़वे बादल अमरीका और जापान के ताल्लुक़ात पर छा गए। दोनों मुल्कों के बीच कारोबारी संतुलन बुरी तरह डगमगा गया। 1986 में अमरीका ने जितना सामान जापान के हाथ बेचा उसके मुक़ाबले में जापान ने साठ बिलियन डालर ज़्यादा का सामान अमरीका के हाथ बेचा। उस साल अमरीका का कुल व्यापारिक नुकसान 170 बिलियन डालर था। जापान इस पोज़िशन में आ चुका था कि उसने अमरीकी चावल की खरीदारी के लिए 180 डालर फ़ी टन की पेशकश को ठुकरा दिया, जबकि उसे अपने मुल्क में चावल पैदा करने के लिए 2000 डालर फ़ी टन ख़र्च करना पड़ता है। अब अमरीका को यह शिकायत है कि जापानियों ने अमरीकी सामान के लिए अपनी मार्केट को बन्द कर दिया है। (*टाइम्स आफ इंडिया*, 12 अप्रैल, 1989)

दूसरे विश्व युद्ध के बाद अमरीका की हैसियत फ़ातेह, विजेता और ताक़तवर मुल्क की थी और जापान की हैसियत हारे हुए व रौंदे हुए देश की थी। लेकिन विजेता ने जो काम अपने फ़ायदे के लिए किए उसको 'हारे हुए' ने अपने फ़ायदे में तब्दील कर लिया। यही मौजूदा दुनिया का इम्तिहान है। इस दुनिया में वे ही लोग कामयाब होते हैं जो दुश्मन के मुख़ालिफ़ मंसूबों में अपने लिए मुवाफ़िक़ (अनुकूल) पहलू तलाश कर लें, जो दुश्मन की तदबीरों को अपने लिए सीढ़ी बना कर आगे बढ़ जाएं।

इस दुनिया में हार भी जीत का दरवाज़ा खोलती है। यहां जंग के बिना भी कामयाब मुक़ाबला किया जा सकता है। लेकिन यह सब कुछ समझ रखने वालों के लिए है। नादानों के लिए ख़ुदा की इस दुनिया में कोई भी सच्ची कामयाबी नहीं मिलती। उनके लिए फ़तह भी शिकस्त है और शिकस्त भी शिकस्त।

ख़ुदा की मौजूदगी का तजुर्बा

अपोलो-15 में अमरीका के जो तीन अंतरिक्ष यात्री चांद पर गए थे, उनमें से एक कर्नल जेम्स इर्विन थे। उन्होंने एक इंटरव्यू में कहा कि अगस्त 1972 का वह लम्हा मेरे लिए बड़ा अजीब था, जब मैंने चांद की सतह पर क़दम रखा। मैंने वहां ख़ुदा की मौजूदगी (God's presence) को महसूस किया। उन्होंने कहा कि उस समय मेरी आत्मा में एक गहरी भावना जाग उठी और ऐसा महसूस हुआ जैसे खुदा मेरे बहुत करीब हो। ख़ुदा की अज़्मत और महानता मुझे अपनी आंखों से नज़र आ रही थी। चांद का सफ़र मेरे लिए सिर्फ एक साइंसी सफ़र नहीं था, बल्कि इससे मुझे रूहानी ज़िन्दगी नसीब हुई (ट्रिब्यून, 27 अक्तूबर 1972)।

कर्नल जेम्ज़ इर्विन का यह तजुर्बा कोई अनोखा तजुर्बा नहीं। हक़ीक़त यह है कि ख़ुदा ने जो कुछ पैदा किया है वह इतना हैरतनाक है कि उसको देखकर आदमी सृजनहार की कारीगरी में डूब जाए। रचना के सौन्दर्य में हर पल मुझे बनाने वाले (ख़ालिक़) का चेहरा नज़र आता है। मगर हमारे आसपास जो दुनिया है उसको हम बचपन से देखते-देखते आदी (अभ्यस्त) हो जाते हैं। उससे हम इतने हिल-मिल जाते हैं कि उसके अनोखेपन का हमको एहसास नहीं होता। हवा और पानी और दरख़्त और चिड़िया, मतलब यह कि जो कुछ भी हमारी दुनिया में है, सब का सब बेहद अजीब है। हर चीज़ अपने ख़ालिक का आईना है। मगर आदी होने की वजह से हम उसके अजूबेपन को महसूस नहीं कर पाते।

मगर एक शख़्स जब अचानक चांद के ऊपर उतरा और पहली बार वहां के रचना-संसार को देखा तो वह उसके सिरजनहार को महसूस किए बिना न रह सका। उसने तख़्लीक़ के कारनामे में उसके ख़ालिक़ को मौजूद पाया। हमारी मौजूदा दुनिया जिसमें हम रहते हैं, यहां भी ख़ुदा की मौजूदगी

का तजुर्बा उसी तरह हो सकता है, जिस तरह चांद पर पहुंच कर कर्नल इर्विन को हुआ। मगर लोग मौजूदा दुनिया को उस अजीब और उत्सुक निगाह से देख नहीं पाते, जिस तरह चांद का एक नया मुसाफ़िर चांद को देखता है। अगर हम अपनी दुनिया को इस नज़र से देखने लगें तो हर वक़्त हमको अपने पास 'ख़ुदा की मौजूदगी' का तजुर्बा हो। हम इस तरह रहने लगें जैसे कि हम ख़ुदा के पड़ोस में रह रहे हैं और हर वक़्त वह हमारी नज़रों के सामने है।

अगर हम एक अच्छे दर्जे की मशीन को पहली बार देखें तो उसी वक़्त हम उसके माहिर इंजीनियर की मौजूदगी को वहां महसूस करने लगते हैं।

ज़ुबान और दिल सबसे अच्छे भी हैं और सबसे ख़राब भी

लुक़मान हकीम एक हब्शी ग़ुलाम थे। उनके आक़ा ने एक रोज़ उनसे कहा कि एक बकरी ज़िब्ह करो और उसमें से दो बेहतरीन गोश्त के टुकड़े निकालो। लुकमान ने बकरी ज़िबह की और ज़ुबान और दिल निकाल कर आक़ा के सामने पेश किया। कुछ दिन के बाद आक़ा ने दोबारा कहा कि एक बकरी जिब्ह करो और उसमें से दो सबसे ज़्यादा ख़राब गोश्त के टुकड़े निकालो। लुकमान ने बकरी ज़िब्ह की और दोबारा ज़ुबान और दिल निकाल कर आक़ा के सामने रख दिए। आक़ा ने कहा कि मैंने तुम से दो सबसे अच्छे टुकड़े निकालने के लिए कहा तो तुमने ज़ुबान और दिल निकाले और जब मैंने तुम से दो सबसे ख़राब टुकड़े निकालने के लिए कहा तब भी तुमने ज़ुबान और दिल निकाले। ऐसा क्यों? लुकमान हकीम ने जवाब दियाः अगर ये दोनों दुरुस्त हों तो इनसे बेहतर कोई चीज़ नहीं, और अगर ये दोनों बिगड़ जाएं तो इनसे ज़्यादा ख़राब कोई चीज़ नहीं।

इसी तरह अगर हम दुनिया को और उसकी चीज़ों को गहराई के साथ देखें तो उसी वक़्त हम वहां ख़ुदा की मौजूदगी को पा लेंगे, ख़ालिक़ हमको इस तरह नज़र आएगा कि हम ख़ालिक़ और तख़्लीक़ को एक-दूसरे से जुदा न कर सकें।

मौजूदा दुनिया में इंसान की सब से बड़ी उपलब्धि यह है कि वह ख़ुदा को देखने लगे, वह अपने पास ख़ुदा की मौजूदगी को महसूस कर ले। अगर आदमी का एहसास ज़िन्दा हो तो सूरज की सुनहरी किरणों में उसको ख़ुदा का नूर जगमगाता हुआ दिखाई देगा। हरे-भरे दरख़्तों के हसीन मंज़र में वह ख़ुदा का रूप झलकता हुआ पाएगा। हवाओं के नर्म झोंके में उसको रब्बानी स्पर्श महसूस होगा। अपनी हथेली और अपनी पेशानी को ज़मीन पर रखते हुए उसको ऐसा महसूस होगा जैसे उसने अपना वजूद अपने रब के क़दमों में डाल दिया है। ख़ुदा हर जगह मौजूद है, बशर्ते कि देखने वाली निगाह आदमी को हासिल हो जाए।

बेमुल्क

अली ज़करिया अल-अन्सारी (60 साल) भारत में कुवैत के राजदूत हैं। उन्होंने अंग्रेज़ी में मास्टर डिग्री हासिल की है। वह कई मुल्कों में कुवैत के राजदूत रह चुके हैं। 2 अगस्त 1990 को अचानक उन्होंने यह ख़बर सुनी की इराक़ ने अपनी ताक़तवर फ़ौज कुवैत में दाख़िल कर दी और कुवैत पर क़ब्ज़ा करके उसको इराक़ में शामिल कर लिया। उनकी बीवी और दो बच्चे कुवैत में हैं और वे ख़ुद नई दिल्ली में संचार सम्पर्क टूट जाने से अपने घर वालों के बारे में बिल्कुल बेख़बर हैं।

टाइम्स ऑफ़ इंडिया (19 अगस्त 1990) के नुमाइन्दे राजघट्टा

(Chidanand Rajghatta) ने अली ज़करिया अल-अन्सारी से नई दिल्ली में उनकी आलीशान कोठी में मुलाक़ात की। रिपोर्टर के अल्फ़ाज़ में मिस्टर अल-अन्सारी सख़्त परेशान थे, क्योंकि वह महसूस करते हैं कि अब वह एक ग़ैर मौजूद मुल्क के राजदूत (Envoy of a non-existent country) बन कर रह गए हैं:

> उनके मुल्क के ख़िलाफ़ ताक़तवर इराक़ के अचानक हमले के बाद 60 वर्षीय राजदूत अभी इस सदमे से बाहर नहीं आ सके हैं, जो उन्हें एक रात के अन्दर अपने मुल्क को खो देने से पहुंचा है। उन्होंने कहा कि शाम को उनका मुल्क मौजूद था और अगले दिन वह न रहा:
>
> More than a week after mighty Iraq's sudden aggression against his country, the 60-year old envoy is yet to overcome the shock and trauma of losing his country overnight. One evening it was there and tomorrow ... it's gone (p. 20).

मौत से पहले इस दुनिया का हर आदमी मुल्क वाला बना रहता है, मगर मौत के बाद हर आदमी बेमुल्क बन जाता है। यह तजुर्बा आख़िरकार हर आदमी पर गुज़रने वाला है, किसी वक़्ती मुद्दत के लिए नहीं, बल्कि हमेशा-हमेशा के लिए। अक़्लमन्द वह है जो मौत से पहले मौत के बाद वाले हालात के लिए अपने आपको तैयार कर ले। जो दूसरों को बेमुल्क होते देख कर जान ले कि इसी तरह एक रोज़ मेरा 'मुल्क' भी मुझसे छीन लिया जाएगा।

विवाहित जीवन

अनुभव बताता है कि अक्सर शादी, शादी के बाद समस्या बन जाती है। एक व्यक्ति ने कहा कि मेरी शादी लव मैरिज थी, लेकिन व्यावहारिक रूप से ऐसा हुआ कि शादी से पहले मेरा जहाज आसमान में उड़ रहा था, और शादी के बाद मेरा जहाज क्रैश होकर जमीन पर गिर पड़ा। यह स्थिति इतनी आम है कि इसमें मुश्किल से कोई अपवाद ढूंढा जा सकता है। ऐसा क्यों होता है? इसका कारण यह है कि शादी से पहले इंसान अपने घर में निकट संबंधियों के बीच होता है। शादी के बाद अचानक उसे गैर-रक्त संबंधों (non-blood relationship) के बीच जीवन बिताना पड़ता है। लोग सामान्य रूप से इस बदलाव के साथ एडजस्ट नहीं कर पाते, इसलिए मतभेद उत्पन्न होते हैं, जो कभी-कभी टूटने (breakdown) की हद तक पहुंच जाते हैं।

सृष्टि-निर्माता ने मानव जीवन को जिस सिद्धांत पर बनाया है, उसमें समानता (uniformity) नहीं है, बल्कि असमानता (dis-uniformity) है। यह प्रकृति का नियम है। यह हर जगह और हमेशा मौजूद होता है। इस नियम का उद्देश्य यह है कि दो अलग-अलग इंसान अपनी विभिन्न क्षमताओं को मिलकर अधिक उपयोगी तरीके से सामाजिक जीवन का हिस्सा बन सकें। अगर लोग इस रहस्य को समझें तो वे अपनी उपयोगिता को दोगुना कर सकते हैं। वे अपनी क्षमताओं में बहुत अधिक वृद्धि कर सकते हैं। वे जीवन की गाड़ी को अधिक तेज़ गति से चलाने में सफल हो सकते हैं।

प्रकृति का यह नियम दो अलग-अलग क्षमताओं वाले व्यक्तियों को यह अवसर देता है कि वे अपनी भिन्न क्षमताओं को एक साथ मिलाकर समाज का अधिक उपयोगी अंग बन सकें। वे अपनी उपयोगिता को गुणा (multiply) कर सकते हैं। इस संदर्भ में एक प्रसिद्ध अंग्रेज़ी कहावत सही साबित होती है:

"If everyone thinks alike, no one thinks very much."
(अगर हर व्यक्ति समान रूप से सोचता है, तो कोई व्यक्ति बहुत ज़्यादा नहीं सोचता।)

क़ुदरत का पैग़ाम

जून 1989 में एक हफ़्ते के लिए मैं कश्मीर गया हुआ था। एक रोज़ की बात है। मैं कुछ कश्मीरी भाइयों के साथ श्रीनगर के बाहर एक ऐसी जगह पर गया जो बिल्कुल खुली हुई थी। हरीभरी घाटियों और बर्फ़ से ढके पहाड़ों के बीच हमारे चारों तरफ़ पानी के साफ़ सुथरे झरने बहते हुए नज़र आते थे। उनके बहने की आवाज़ क़ुदरत की धीमी सरगोशी की तरह हमारे कानों तक पहुंच रही थी।

मैं एक झरने के किनारे खड़ा हो गया। यह क़रीब दो फ़ुट की चौड़ाई में बह रहा था। मैंने देखा कि ठीक झरने के बीच में एक बड़ा-सा गोल पत्थर उभरा हुआ है। साफ़-सुथरा पानी बहता हुआ जब इस पत्थर तक पहुंचता है तो वह ऐसा नहीं करता कि वह पत्थर को तोड़ कर अपने लिए सीधा रास्ता बनाने की कोशिश करे। इसके बजाय पानी ऐसा करता है कि वह पत्थर के दाईं-बाईं तरफ़ से मुड़ कर निकल जाता है। वह पत्थर के साथ टकराव से बचते हुए अपना रास्ता बना लेता है।

मैंने अपने कश्मीरी दोस्तों से कहा कि इसको देखिए। इस तरह के दृश्य पूरे जम्मू और कश्मीर में हर तरफ़ फैले हुए हैं। यह आपके नाम जैसे क़ुदरत का पैग़ाम है। प्रकृति का यह जल्वा ख़ामोश ज़ुबान में आपको बता रहा है कि चट्टान से न टकराओ, बल्कि चट्टान से बचते हुए अपना रास्ता निकालो।

इस क़िस्म के झरने कश्मीर की घाटियों में साल भर जारी रहते हैं। इस

तरह क़ुदरत का यह रचनात्मक पैग़ाम कश्मीर में लाखों जगहों पर हर रोज़ प्रसारित किया जा रहा है। मगर आप लोग बिल्कुल उसी के बीच रहते हुए उसको नहीं सुनते, आप उससे कोई सबक़ नहीं लेते।

इस दुनिया में कामयाबी उसी के लिए है जो विवाद के मौक़े पर नज़रअन्दाज़ करने का तरीक़ा इख़्तियार करे, जो रास्ते की चट्टानों से टकराए बिना अपना सफ़र जारी रखे। ऐसा ही शख़्स इस दुनिया में अपनी मंज़िल की तरफ़ पहुंचता है। कश्मीर के लोगों को प्रकृति की अटल ज़ुबान में यह सबक़ देकर ख़ुदा ने उन्हें उस मुक़ाम पर खड़ा किया था कि वे इस सूझबूझ को इख़्तियार करके अपनी ज़िन्दगी की तामीर करें और फिर दुनिया को यह पैग़ाम दे कर दुनिया के मार्गदर्शक बनें। मगर कश्मीर के लोग ख़ुद बेराह होकर अपने को बरबाद कर रहे हैं, वे दूसरों को क्या राह दिखाएंगे।

अल्लाह के डर की वजह से कोड़ा हाथ से गिर पड़ा

पैग़म्बर मुहम्मद (स.अ.व.) के साथी हज़रत अबू मसऊद बदरी कहते हैं: एक रोज़ मैं किसी बात पर अपने गुलाम से ख़फ़ा हो गया और उसको कोड़े से मारने लगा। इतने में पीछे से आवाज़ सुनाई दी: "ऐ अबू मसऊद, जान लो।" मगर मैं गुस्से की हालत में था। आवाज़ को पहचान न सका। आवाज़ देने वाला जब मेरे क़रीब आ गया तो मैंने देखा कि वह पैग़म्बर मुहम्मद हैं। आप फ़रमा रहे थे: अबू मसऊद जान लो, तुमको जितना क़ाबू इस शख़्स पर है, उससे ज़्यादा क़ाबू अल्लाह को तुम्हारे ऊपर है।

यह सुन कर कोड़ा मेरे हाथ से गिर गया। मैंने कहाः "अब कभी मैं किसी गुलाम को न मारूंगा। मैं इस गुलाम को अल्लाह की खुशी के लिए आज़ाद करता हूं।" अल्लाह के रसूल ने फ़रमायाःअगर तुम ऐसा न करते तो आग की लपट तुमको छू लेती (सही मुस्लिम, 1659)।

रास्ते में

श्री दरबारा सिंह पंजाब के लीडर थे। वह पंजाब के मुख्य मंत्री भी रहे। 11 मार्च 1990 को 75 साल की उम्र में उनका देहान्त हो गया। 'हिन्दू' (12 मार्च 1990) की एक ख़बर में बताया गया है कि वह नई दिल्ली में थे। उन्हें दिल का तेज़ दौरा पड़ा। वह फ़ौरन बतरा अस्पताल में ले जाए गए। मगर रास्ते ही में उनकी मृत्यु हो गई।

He died on the way to hospital.

मैंने इस ख़बर को पढ़ा तो मुझे महसूस हुआ कि यह सिर्फ़ एक शख़्स की कहानी नहीं है, यही तमाम इन्सानों की कहानी है। हर आदमी कहीं जा रहा है, मगर हर आदमी 'रास्ते में' मर जाता है। हर आदमी अपने ख़्वाबों की एक दुनिया बनाना चाहता था, मगर किसी आदमी का ख़्वाब पूरा नहीं होता, और वह हसरतें और तमन्नाएं लिए हुए दुनिया को छोड़ कर दूसरी दुनिया में चला जाता है।

आज़मगढ़ में एक राजा हरखचन्द थे। 1947 से पहले के दौर में उन्होंने शहर में एक महलनुमा कोठी बनानी शुरू की। बरसों तक उसमें काम होता रहा। मगर उनकी ज़िन्दगी में कोठी मुकम्मल न हो सकी। वह उसको पूरे रूप में देखे बग़ैर दुनिया से चले गए। इसी तरह हर आदमी अपना एक दिलपसन्द 'मकान' बना रहा है। जिस आदमी के पास अपना मकान नहीं वह दूसरे के मकान पर क़ब्ज़ा करके मकान वाला बन जाना चाहता है।

मगर आख़िर में हर आदमी बेमकान रह जाता है। किसी का मकान खड़ा होने के बाद भूचाल के ज़रिए तोड़ दिया जाता है। किसी को मौत का फ़रिश्ता उसके मकान से अलग कर देता है। हर आदमी 'रास्ते में' ख़त्म हो रहा है। कोई भी अपनी पसन्दीदा मंज़िल तक नहीं पहुंचता।

इस दुनिया में आदमी के लिए यही मुक़द्दर है कि वह 'रास्ते में' मरे। यहां किसी भी शख़्स को उसकी मनचाही मंज़िल नहीं मिल सकती। इसकी वजह यह है कि यह दुनिया रास्ता है। यह दुनिया मंज़िल नहीं। इंसान की मंज़िल आख़िरत में है। अक़्लमन्द वह है जो दुनिया को रास्ता समझे और आख़िरत को अपनी मंज़िल बनाए। यही वह शख़्स है जो आख़िरकार अपनी पसन्दीदा मंज़िल तक पहुंचेगा।

एक आत्महत्या

श्रीमती पदमा देसाई मशहूर उद्योगपति राजाराम किर्लोस्कर की बेटी थीं। उनकी शादी भूतपूर्व प्रधान मंत्री मोरारजी देसाई के बेटे श्री कान्ति देसाई से हुई। इससे अन्दाज़ा किया जा सकता है कि उनकी हैसियत क्या थी। मगर 16 नवम्बर 1984 को उन्होंने अपनी पांचवीं मंज़िल के फ़्लैट से कूद कर ख़ुदकशी कर ली। उस वक़्त उनकी उम्र 51 साल थी। नीचे गिरने के फ़ौरन बाद वह अस्पताल ले जाई गईं। मगर डाक्टरों ने देख कर बताया कि वह अस्पताल पहुंचने से पहले मर चुकी हैं।

उन्होंने आत्महत्या क्यों की, इसकी वजह ख़बर में इन लफ़्ज़ों में बताई गई है:

> Padma committed suicide after hearing that the family has lost a case in Supreme court to retain their flat.
>
> पदमा ने यह ख़बर सुनने के बाद आत्महत्या कर ली कि उनका ख़ानदान अपने फ़्लैट को क़ब्ज़े में रखने का केस

सुप्रीम कोर्ट में हार गया है (हिन्दुस्तान टाइम्स, टाइम्स आफ़ इंडिया, 17 नवम्बर 1984)।

1977 में जनता पार्टी की कामयाबी के बाद मोरारजी देसाई प्रधानमंत्री बने। प्रधान मंत्री बनने के ढाई साल के अर्से में उनके बेटे शान्ति देसाई ने कई लेन-देन किए। उनमें से एक यह फ़्लैट भी था। मैरिन ड्राईव (बम्बई) में एक बड़ी बिल्डिंग जिसका नाम ओशियाना (Oceana) है। उसकी पांचवी मंज़िल पर यह फ़्लैट था। जनता सरकार के ख़त्म होने के बाद अदालत में यह केस चला कि कान्ति देसाई ने यह फ़्लैट ग़ैर कानूनी तौर पर हासिल किया था। अदालत ने इसके पक्ष में फ़ैसला दिया। श्रीमती पदमा देसाई को इस फ़ैसले की ख़बर टेलीफ़ोन से मिली। उसके बाद उन्होंने छलांग लगा कर आत्महत्या कर ली।

पदमा देसाई ने समझा कि वह आत्महत्या करके हमेशा के लिए अदालत के फ़ैसले से छुटकारा पा रही हैं। लेकिन अगर उन्हें मालूम होता कि वह आत्महत्या करके अपने को ज़्यादा बड़ी अदालत में पहुंचा रही हैं, जहां आत्महत्या करने का भी मौक़ा उनके लिए बाक़ी न रहेगा तो उनका फ़ैसला कुछ और होता।

आदमी की सबसे बड़ी कमज़ोरी जल्दबाज़ी है। वह फ़ौरी तौर पर एक सख़्त क़दम उठा लेता है, हालांकि अगर वह सोचे तो कभी ऐसा न करे।

ज़रूरी तैयारी

गांधीजी की ज़िन्दगी पर एक फ़िल्म बनाई गई है, जो ‘गांधी’ के नाम से काफ़ी मशहूर हो चुकी है। इस फ़िल्म में गांधीजी का रोल एक ब्रिटिश एक्टर किंग्स्ले ने निभाया था।

किंग्स्ले से ने अपने आपको गांधी के रूप में ढालने के लिए ग़ैरमामूली मेहनत की। हक़ीक़त में किंग्स्ले की ज़िन्दगी जीने का अन्दाज़ बहुत शाही है। उसकी खाने की मेज़ पर उससे भी ज़्यादा खाने का सामान होता है, जितना पहले राजाओं और नवाबों के दस्तरख़्वान पर होता था। मगर गांधी का रोल निभाने के लिए उसने अर्से तक आधा पेट खाना खाया।

किंग्स्ले एक मोटा आदमी था। जबकि गांधीजी एक दुबले-पतले आदमी थे, जो अपने हाथ में एक लाठी लेकर चला करते थे। अभिनय का तक़ाज़ा था कि जब किंग्स्ले स्क्रीन पर आए तो वह लोगों को दुबला-पतला बिलकुल गांधी की तरह दिखाई दे। इसलिए उसने लगातार कम खा कर या भूखे पेट रह कर अपने आपको दुबला किया। यहां तक कि उसका वज़न सात किलोग्राम कम हो गया। यही मेहनत और परहेज़ उस औरत (रोहिणी हट्टनगड़ी) को भी करना पड़ा, जिसने इस फ़िल्म में गांधी की बीवी कस्तूरबा का रोल किया है।

फिल्म की काल्पनिक कहानी में कृत्रिम रोल निभाना जितना मुश्किल है उससे बहुत ज़्यादा मुश्किल यह है कि कोई शख़्स सच्ची ज़िन्दगी में किसी क़ौम की रहनुमाई के लिए अपना किरदार अदा करे। मगर कैसी अजीब बात है कि क़ौमी रहनुमाई के मैदान में लोग इस तरह तैयारी के बग़ैर कूद पड़ते हैं जैसे कि यहां किसी तैयारी और मेहनत की ज़रूरत ही नहीं।

क़ौम की रहनुमाई बेशक तमाम कामों से ज़्यादा मुश्किल काम है। फ़िल्म में अपना किरदार अदा करने के लिए किंग्स्ले को अपने जिस्म को मारना पड़ा था। क़ौम का रहनुमा बनने के लिए आदमी को अपने मन को मारना पड़ता है। पहले काम में अदाकार को अपने जिस्म का मुटापा घटाना पड़ा था। दूसरे काम के क़ाबिल बनने के लिए एक रहनुमा को अपनी इच्छाओं और स्वार्थों का मुटापा कम करना पड़ता है, वग़ैरह वग़ैरह!

जो लोग इस ज़रूरी तैयारी के बग़ैर क़ौम की रहनुमाई के मैदान में दाख़िल हों वे क़ौम के मुज़रिम हैं न कि क़ौम के रहनुमा।

6 अप्रैल

कम्यूनिस्ट रूस के पहले सशक लेनिन की मृत्यु 1924 में हुई। उसके बाद जोज़ेफ़ स्टालिन रूस का प्रधान मंत्री बना। और मरते दम (1953) तक इस पद पर रहा। उसने लगभग 30 साल तक कम्यूनिस्ट रूस के ऊपर निरंकुश हुकूमत की। इस दौरान उसने बेशुमार ज़ुल्म किए। यहां तक कहा जाता है कि उसने लगभग पांच करोड़ इन्सानों को विभिन्न तरीक़ों से मार डाला (*टाइम्स आफ़ इंडिया*, 20 अप्रैल 1988)।

स्टालिन की हुकूमत के पूरे दौर में उसके ज़ुल्म इस तरह पूरी तरह छुपाए जाते रहे कि उसका एक लफ़्ज़ भी कम्यूनिस्ट रूस में कहीं भी छप नहीं सका। बाद के एक रूसी प्रधानमंत्री ख़्रुश्चेफ़ ने कम्यूनिस्ट पार्टी की बीसवीं कांग्रेस में बन्द कमरे के अन्दर उसके भयानक जुर्मों पर एक लम्बी रिपोर्ट पेश की। यह घटना 25 फ़रवरी 1956 की है। मगर इसके बावजूद ख़्रुश्चेफ़ की यह रिपोर्ट न रूस के अख़बारों में छपने दी गई और न बाहर के अख़बारों में। स्टालिन के ज़ुल्मों का रहस्य बदस्तूर रहस्य बना रहा।

मगर 6 अप्रैल 1989 को इस रहस्य की परतें खुल गईं और सच्चाई सबके सामने आ गई। उस घटना के 33 साल बाद, और असली ज़ुल्मों के आधी सदी से भी ज़्यादा बाद, इस रिपोर्ट को प्रकाशित कर दिया गया। मास्को से छपने वाले एक सरकारी माहनामा न्यूज़ (News) ने 6 अप्रैल 1989 को ख़्रुश्चेफ़ की यह रिपोर्ट पूरी की पूरी प्रकाशित की है, और उसका नाम है — व्यक्तिपूजा और उसके प्रभावः

On the Personality Cult and its Consequences.

मौजूदा दुनिया में आदमी सरकशी करता है। वह अपनी बड़ाई क़ायम रखने की ख़ातिर हक़ को मानने से इन्कार कर देता है। फिर भी उसको अपनी अस्ल हैसियत पर पर्दा डालने के लिए ख़ूबसूरत अल्फ़ाज़ मिल जाते हैं। वह समझता है कि मैंने हमेशा के लिए अपने काले कारनामों को छुपा लिया। मगर जिस तरह स्टालिन के लिए "6 अप्रैल" की तारीख़ तय थी और उस तारीख़ के आते ही वह सारी दुनिया के सामने बेनक़ाब हो गया, उसी तरह हर इंसान के लिए एक "6 अप्रैल" है। उसके आते ही हर आदमी की सच्चाई पहले पेज की ख़बर बन जाएगी, जिस तरह 6 अप्रैल 1989 को स्टालिन की सच्चाई पहले पेज की ख़बर बन गई।

यह दिन बहरहाल हर इंसान के लिए आने वाला है, चाहे वह आज आए या आज से 50 साल बाद।

ख़ुदा का सबूत

अगर एक इंसान का वजूद है तो ख़ुदा का वजूद क्यों नहीं? अगर हवा और पानी, दरख़्त और पत्थर, चांद और सितारे मौजूद हैं तो उनको वजूद देने वाले का वजूद संदिग्ध क्यों? हक़ीक़त यह है कि रचना की मौजूदगी रचना-प्रक्रिया का सबूत है। और इंसान की मौजूदगी इस बात का सबूत है कि यहां एक ऐसा रचयिता मौजूद है, जो देखे और सुने, जो सोचे और घटनाओं को प्रकट रूप दे।

इसमें शक नहीं कि ख़ुदा ज़ाहिरी आंखों से दिखाई नहीं देता। मगर इसमें भी शक नहीं कि इस दुनिया की कोई भी चीज़ ज़ाहिरी आंखों से

दिखाई नहीं देती। फिर किसी चीज़ को मानने के लिए देखने की शर्त क्यों ज़रूरी हो।

आसमान पर सितारे जगमगाते हैं। आम आदमी समझता है कि वह सितारों को देख रहा है, हालांकि ख़ालिस वैज्ञानिक नज़रिए से यह सही नहीं है। जब हम सितारों को देखते हैं तो हम सितारों को सीधे नहीं देख रहे होते हैं, बल्कि उनके उन प्रभावों को देख रहे होते हैं, जो सितारों से निकल कर करोड़ों साल के बाद हमारी आंखों तक पहुंचे हैं।

यही तमाम चीज़ों का हाल है। इस दुनिया की हर चीज़ जिसको इंसान 'देख' रहा है, वह सिर्फ़ अप्रत्यक्ष तौर पर उसे देख रहा है। सीधे तौर पर इंसान किसी चीज़ को नहीं देखता; और न अपनी मौजूदा सीमाओं के रहते हुए वह उसे देख सकता है।

फिर जब दूसरी तमाम चीज़ों के वजूद को अप्रत्यक्ष दलील की बुनियाद पर माना जाता है तो ख़ुदा के वजूद को अप्रत्यक्ष और बिलवास्ता दलील की बुनियाद पर क्यों न माना जाए?

हक़ीक़त यह है कि ख़ुदा उतना ही साबितशुदा है, जितनी इस दुनिया की कोई दूसरी चीज़। इस दुनिया की हर चीज़ अप्रत्यक्ष दलील से साबित होती है। इस दुनिया में हर चीज़ अपने प्रभाव से पहचानी जाती है। ठीक यही हालत ख़ुदा के वजूद की भी है।

ख़ुदा यक़ीनन सीधे तौर पर हमारी आंखों को दिखाई नहीं देता, मगर ख़ुदा अपनी निशानियों के ज़रिए यक़ीनन दिखाई देता है, और बेशक ख़ुदा के इल्मी (बौद्धिक) सबूत के लिए यही काफ़ी है।

हक़ीक़तपसन्दी

किसी ने कहा है "अपने हक़ से ज़्यादा चाहना अपने आपको अपने वास्तविक हक़ से भी वंचित कर लेना है।" कोई आदमी जब उतना ही चाहे जिसका व सचमुच हक़दार है तो हर चीज़ उसकी मांग का समर्थन कर रही होती है। और जब वह अपने वास्तविक हक़ से ज़्यादा चाहने लगे तो हर चीज़ उसके ख़िलाफ़ हो जाती है। यही वजह है कि पहला आदमी हमेशा कामयाब होता है, और दूसरा हमेशा नाकाम।

एक बड़ा संस्थान था। उसमें एक मैनेजर की ज़रूरत थी। एक आदमी के अन्दर मैनेजमेंट की सलाहियत थी। उसको वहां मैनेजर की हैसियत से रख लिया गया। संस्थान के डायरेक्टर ने मैनेजर के साथ काफ़ी रियायत का बर्ताव किया। अच्छी तनख़्वाह, रहने के लिए मकान, आने-जाने के लिए एक जीप और दूसरी कई चीजें उन्हें हासिल हो गई।

मगर कुछ दिनों के बाद उस आदमी के मन में ज़्यादा की चाह पैदा हो गई। 'मैनेजर' की हैसियत उसको कम लगी। उसने चाहा कि डायरेक्टर की सीट पर क़ब्ज़ा कर ले। अब मैनेजर ने चुपके-चुपके डायरेक्टर के ख़िलाफ़ मन्सूबा बनाया। मगर मन्सूबे की कामयाबी से पहले डायरेक्टर को उसकी ख़बर हो गई। उसने चटपट कार्रवाई करके उस आदमी को मैंनेजर की पोस्ट से हटा दिया। मकान और जीप वग़ैरह भी छीन ली गई। उनको ज़िल्लत के साथ संस्थान से बाहर निकाल दिया।

यह वही चीज़ है जिसको नैतिक भाषा में क़नाअत (संतुष्टि) और हिर्स कहा जाता है। अपनी वास्तविक हैसियत पर राज़ी रहने का नाम 'क़नाअत' है। और अपनी हैसियत से ज़्यादा चाहने का नाम 'हिर्स'। आदमी अगर 'क़नाअत' का तरीक़ा इख़्तियार करता तो वह न सिर्फ़ कामयाब रहता, बल्कि और भी तरक़्क़ी करता। मगर 'हिर्स' का तरीक़ा इख़्तियार करके

उसने अपने पाए हुए को भी खो दिया। और आइन्दा जो कुछ वह पा सकता था उसको भी।

जब आप अपने हक़ के बराबर चाहते हैं तो आप वह चीज़ चाह रहे होते हैं जो सच में आपकी है, जो इन्साफ़ के मुताबिक़ आप ही को मिलनी चाहिए। मगर जब आप अपने वास्तविक हक़ से ज़्यादा चाहें तो मानो आप ऐसी चीज़ चाह रहे हैं जो इन्साफ़ के मुताबिक़ आपकी चीज़ नहीं है, बल्कि दूसरे की चीज़ है, फिर दूसरा शख़्स क्यों आपको अपनी चीज़ देने पर राज़ी हो जाएगा।

जब भी आदमी अपने हक़ से ज़्यादा चाहे तो फ़ौरन उसका दूसरे से टकराव शुरू हो जाता है। दूसरे लोग उसकी राह में रुकावट बन कर खड़े हो जाते हैं। अब कशमकश और ज़िद पैदा हो जाती है। दोनों एक-दूसरे के प्रतिद्वंद्वी बन जाते हैं। इसके नतीजे में अक्सर ऐसा होता है कि आदमी अस्ल से ज़्यादा की चाह में अस्ल को भी खो बैठता है।

अपने हक़ से ज़्यादा की चाह करते ही यह होता है कि आदमी विरोधाभास में घिर जाता है। वह अपने हिस्से की चीज़ लेने के लिए एक दलील देता है, और दूसरे के हिस्से की चीज़ पर कब्ज़ा करने के लिए दूसरी दलील इस्तेमाल करता है। इस तरह वह अपने मुक़द्दमे को ख़ुद ही कमज़ोर कर लेता है। वह अपना निषेध आप कर देता है। दो क़िस्म की दलीलों से वह साबित करता है कि पहली चीज़ अगर उसकी है तो दूसरी चीज़ उसकी नहीं है, और अगर दूसरी चीज़ उसकी है तो पहली चीज़ उसकी नहीं हो सकती।

ऐसे आदमी के बारे में वह मिसाल दी जा सकती है कि जो शख़्स दो ख़रगोशों के पीछे दौड़े वह एक को भी पकड़ नहीं सकता। इसी तरह जो शख़्स अपने अस्ल हक़ के साथ और ज़्यादा को चाहने वाला बने वह अस्ल को भी खो देगा। और उसी के साथ 'और ज़्यादा' को भी।

हर आदमी जो दुनिया में पैदा होता है वह ख़ास योग्यता लेकर पैदा

होता है। हर आदमी को उसके पैदा करने वाले ने इसी लिए पैदा किया है कि वह एक कामयाब ज़िन्दगी हासिल करे। मगर हर आदमी की एक हद है। और हर आदमी को चाहिए कि वह अपनी हद को जाने। जब आदमी अपनी हद के अन्दर रहे तो दुनिया की तमाम ताक़तें उसको कामयाब बनाने के लिए उसका साथ देती हैं और जब वह अपनी हद से आगे बढ़ने लगे तो हर चीज़ उसका साथ छोड़ देती है। ऐसे आदमी के लिए नाकामी के सिवा और कोई अंजाम इस दुनिया में नहीं।

आल इंडिया रेडियो, नई दिल्ली से 19 अप्रैल और 26 अप्रैल 1990 को प्रसारित मौलाना वहीदुद्दीन ख़ान की वार्ता।

आज की साइंस

राबर्ट बॉयल एक मशहूर वैज्ञानिक था। वह 1627 में पैदा हुआ और 1691 में लंदन में उसकी मृत्यु हुई। उसने विज्ञान के अध्ययन को अपना विषय बनाया था। मगर विज्ञान के अध्ययन ने उसे मज़हब से दूर नहीं किया, बल्कि और क़रीब कर दिया। आख़िर में वह एक पक्का प्रोटेस्टेंट ईसाई बन गया। उसने शादी नहीं की और अपनी तमाम कमाई मसीही मज़हब के प्रचार में लगा दी। राबर्ट बॉयल ख़ुदा के वजूद को मानता था। उसके ख़्याल के मुताबिक़, सृष्टि की व्यवस्था एक घड़ी की तरह है। ख़ुदा ने उसको पैदा किया और उसको शुरुआती तौर पर चला दिया। अब वह द्वितीयक क़ानून (secondary laws) के तहत काम कर रही है जिसका साइंस के ज़रिए अध्ययन किया जा सकता है:

> In his view of divine providence, nature was a clocklike mechanism that had been made and

> set in motion by the Creation at the beginning and now functioned according to secondary laws, which could be studied by science (A Defence of Natural and Revealed Religion).

यह बीसवीं सदी से पहले की साइंस थी। उस वक़्त यह समझा जाता था कि सृष्टि में समरूपता (uniformity) है। सृष्टि के तमाम हिस्से एक ही क़ानून के तहत चल रहे हैं। मगर बीसवीं सदी में पहुंच कर यह नज़रिया बाक़ी न रह सका।

विशाल सृष्टि (macrocosm) के अध्ययन से ऐसा लगता है कि सृष्टि में समानरूपता है। मगर सूक्ष्म सृष्टि (microcosm) के अध्ययन ने इस नज़रिए को रद्द कर दिया। सौर-मंडल की सतह पर इंसान को जो समानता नज़र आती थी वह एटम की सतह पर पहुंच कर टूट गई।

हक़ीक़त यह है कि सृष्टि को ख़ुदा ही ने अपने हुक्म से बनाया है। और वही अपने हुक्म से उसको चला रहा। न कायनात को बनाने में कोई उसका साझेदार है और न कायनात को चलाने में कोई उसका साझीदार। एक ख़ुदा को छोड़ कर जो नज़रिया भी कायनात को समझने के लिए बनाया जाता है वह आख़िरकार टूट जाता है। यह बात साबित करने के लिए काफ़ी है कि एक ख़ुदा की व्याख्या ही सही व्याख्या है। उसके सिवा हर दूसरी व्याख्या सिर्फ़ इंसान की कपोल-कल्पना है, उसके बाहर उसका कोई वजूद नहीं।

हार में जीत

दूसरे विश्व युद्ध (1939-45) के शुरू में अमरीका प्रत्यक्ष तौर पर शामिल न था। फिर भी हथियार और सामान के रूप में उससे मिलने वाली मदद ब्रिटेन

और उसके साथियों की ताकत का ज़रिआ बनी हुई थी। लिहाज़ा जापान ने अमरीका के ख़िलाफ़ एक ख़ुफ़िया मन्सूबा बनाया। उसने दिसम्बर 1941 को अचानक अमरीका के समुद्री अड्डे पर्ल हारबर पर ज़बरदस्त हमला किया और उसको तबाह कर दिया। फिर भी अमरीका की हवाई ताक़त बदस्तूर बनी रही।

यह वह समय था जब अमेरिका में पहले परमाणु बमों का निर्माण पूरा होने वाला था। जैसे ही यह प्रक्रिया पूरी हुई, अमेरिका ने जापान से बिना किसी शर्त आत्मसमर्पण की मांग की, यह चेतावनी देते हुए कि यदि उसने ऐसा नहीं किया तो उसे पूरी तरह तबाह कर दिया जाएगा।

जापान को अमरीका की आधुनिक ताक़त का अन्दाज़ा न था। उसने उसको मंज़ूर नहीं किया। नतीजा यह हुआ कि 14 आगस्त 1945 को अमरीका ने दो औद्योगिक शहरों हीरोशिमा और नागासाकी पर एटम बम गिराए। एक पल में जापान की फौजी ताक़त तहस-नहस हो कर रह गई। जापान ने मजबूर होकर हथियार डालने की घोषणा कर दी।

उसके फ़ौरन बाद जनरल मैकार्थर (Douglas Macarthur) अमरीकी फ़ौजों के साथ जापान में गए। जापान के ऊपर पूरी तरह अमरीकी फ़ौजों का क़ब्ज़ा हो गया।

जापान हालांकि ख़ालिस हथियार के लिहाज़ से शिकस्त खा चुका था, पर जापानियों के बीच जंगी जुनून बदस्तूर बाक़ी था। जापानियों का जंगी जुनून उस ज़माने में इतना बढ़ा हुआ था कि वे अपने जिस्म में बम बांध कर जहाज़ों की चिमनियों में कूद जाते थे। अब जनरल मैकार्थर के सामने यह सवाल था कि इस जंगी जुनून का ख़ात्मा किस तरह किया जाए। जनरल मैकार्थर ने इसका हल इस तदबीर में तलाश किया कि जापानियों के रुझान को जंग से हटाकर, आर्थिक सरगर्मियों की तरफ़ फेर दिया जाए। एक अमरीकी समीक्षक एन्थोनी लुईस (Anthony Lewis) ने लिखा है:

> When Japan surrendered, 40 years ago, Gen. Douglas Macarthur undertook not just to occupy but to remake the Country. If he had been asked then what his most extravagant hope was. I think he might have said to channel the drive of these aggressive people away from militarism and into economic ambition.
>
> जब जापान ने 40 साल पहले हथियार डाले तो जनरल मैकार्थर ने न सिर्फ़ जापान पर फ़ौजी क़ब्ज़ा कर लिया बल्कि इसी के साथ उनकी मुहिम यह थी कि वह जापान का नए सिरे से निर्माण करें। अगर उस वक़्त उनसे पूछा जाता कि उनकी सबसे बड़ी ख़्वाहिश क्या है, तो मेरा ख़्याल है कि वह कहते कि जापान की जंगजू जनता के जोश को जंग के बजाय आर्थिक हौसलों की तरफ़ मोड़ देना (टाइम्स आफ इंडिया 26 अगस्त 1985)।

अब जापान के लिए एक सूरत यह थी कि वह अपने ज़ेहन को बाक़ी रखता। अगर खुले तौर पर जंग के मैदान में लड़ने के मौक़े नहीं थे तो खुफ़िया तरीक़े पर अमरीका के ख़िलाफ़ अपनी मोर्चाबन्दी को जारी रखता। आख़िरी दर्जे में वह उस काम को कर सकता था, जिसका नमूना हिन्दुस्तान के मुसलमानों में नज़र आ रहा है। यानी अपने काल्पनिक प्रतिद्वंद्वी के ख़िलाफ़ अल्फ़ाज़ की बेफ़ायदा जंग जारी रखना।

मगर जापान ने अमरीका की पेशकश को क़बूल करते हुए फ़ौरन अमल का रुख़ बदल दिया। उसने अमरीका से सीधे टकराव को पूरी तरह ख़त्म कर दिया और अपनी तमाम ताक़तों को साइंस और टेक्नालॉजी की तरक़्क़ी के रास्ते में लगा दिया।

उसका नतीज़ा ज़बरदस्त और शानदार कामयाबी के रूप में बरामद हुआ। जापान ने तेज़ी से आर्थिक तरक़्क़ी शुरू की। उसने 1971 में छः बिलियन डालर का व्यापारिक सामान अमरीका भेजा था, इसके बाद जापानी चीज़ों की लोकप्रियता अमरीका में बढ़ती रही, यहां तक कि मौजूदा अन्दाज़े के मुताबिक़ 1985 तक जापान के मुक़ाबले में अमरीका का तिजारती घाटा (trade deficit) लगभग 45 बिलियन डालर तक पहुंच गया।

न्यूज़वीक (12 अगस्त 1985) में एक रिपोर्ट 'जापानः 40 वर्षीय चमत्कार' (*JAPAN: The 40-year Miracle*) के शीर्षक से छपी। इसमें 1945 में जापान की पूरी तरह बरबादी के चालीस साल बाद उसकी ग़ैरमामूली तरक़्क़ी की जानकारी पेश करते हुए कहा गया है कि जापानी क़ौम किसी जादुई कहानी के परिन्दे की तरह ख़ुद अपनी राख के अन्दर से उठ खड़ी हुई:

> The nation rose like the mythical phoenix from its own ashes.

जापान को ख़ुद अपने विजेता के मुक़ाबले में यह कामयाबी इसलिए हासिल हुई कि उसने अपनी पराजय स्वीकार कर ली। हक़ीक़त को मान लेना ही इस दुनिया में कामयाबी का एकमात्र राज़ है। हालांकि बहुत से नादान लोग हक़ीक़त के इन्कार में कामयाबी का राज़ तलाश करने लगते हैं।

तकरार नहीं

श्री जोगिन्दर सिंह एम. ए. (जन्म 1924) ने 9 जुलाई 1985 की मुलाक़ात में अपनी एक घटना बताई। वह 1956 में प्रौफ़ेसर एस. पी. कुणाल के छात्र थे।

वह तीस साल तक यही विषय पढ़ाते रहे और दिल्ली यूनिवर्सिटी के रीडर होकर रिटायर हुए।

श्री जोगिन्दर सिंह ने बताया कि वह प्रौफ़ेसर के घर पहुंचे तो उन्होंने देखा कि वह यूनानी फ़िलासफ़ी पर एक किताब पढ़ रहे हैं। श्री जोगिन्दर सिंह को यह देखकर ताज्जुब हुआ। उन्होंने अपने उस्ताद से कहाः आपने तो यूनानी फ़िलासफ़ी में ऊंची शिक्षा हासिल की, फिर इस विषय को आप तीस साल से पढ़ा रहे हैं। प्रौफ़ेसर ने जवाब दिया:

> Every successive reading gives me a new thought.

हर बार पढ़ने पर मुझे एक नई सोच, एक नया दृष्टिकोण मिलता है। यदि इंसान की चेतना जागृत हो, अगर उसके मन में जागरूकता आ चुकी हो, तो उसका अध्ययन महज़ काग़ज़ पर लिखे हुए शब्दों का अध्ययन नहीं रह जाता — वह उन शब्दों के पार भी देखता है, उनका छिपा अर्थ समझता है और उसे जीवन से जोड़ लेता है। पढ़ने के दौरान उसका अपना ज़ेहन कुछ और अलिखित पहलुओं की तरफ़ जाता है। वह जितना पढ़ता है उससे ज़्यादा वह अपने लिए हासिल कर लेता है। इस तरह उसका अध्ययन लगातार उसके इल्म को बढ़ाता रहता है।

हक़ीक़त यह है कि ‘तकरार’ (पुनरावृत्ति) की शिकायत सिर्फ़ वे लोग करते हैं जिनके पास अपनी तरफ़ से शामिल करने के लिए कुछ न हो। जिनके पास अपनी तरफ़ से शामिल करने के लिए हो वह एक ही चीज़ को बार-बार पढ़ कर भी नहीं उकताते। क्योंकि हर बार अध्ययन से वे नई चीज़ हासिल करते हैं।

एक नास्तिक की स्वीकारोक्ति

बर्ट्रेंड रसेल (1872–1970) ईश्वर में विश्वास नहीं रखता था। उसके विचार में, मानव समाज को सुव्यवस्थित करने के लिए केवल मानव-निर्मित कानून ही पर्याप्त हैं — हालांकि, उसे इस पर पूरा यक़ीन नहीं था कि यह व्यवस्था पूरी तरह सफल हो सकती है। लेकिन जब कोई आस्तिक व्यक्ति उससे यह कहता कि "मैं तो इंसानी कानूनों से बच सकता हूँ, लेकिन ख़ुदा की अदालत से नहीं बच सकता," तब रसेल खुद को निरुत्तर पाता, जैसे उसकी तर्क की दीवार उस एक विश्वासपूर्ण वाक्य के आगे ढह जाती हो।

> I might escape the human magistrate, but I could not escape the punishment at the hands of the Divine magistrate.

बरट्रेंड रसेल ने जान लॉक (1632-1704) के विचारों की समीक्षा करते हुए लिखा है कि धार्मिक आस्थाओं के अनुसार ख़ुदा ने कुछ ख़ास नैतिक नियम बनाए हैं। जो लोग उनका पालन करते हैं वे जन्नत में जाएंगे और जो लोग इन नियमों को तोड़ते हैं वे जहन्नुम में डाल दिए जाने का ख़तरा मोल लेते हैं। ख़ुशी की खोज में लगे संयमी लोग इसी आधार पर नेक और बाअख़लाक़ (शिष्ट) बन जाएंगे। लेकिन पाप के कारण आदमी नर्क में जाएगा, इस विश्वास में कमी आने से यह बात और भी कठिन हो गई है कि कोई ऐसा तर्क दिया जाए जिससे आदमी खुद अपनी ज़िन्दगी नेक बनाए रखने के पक्ष में मजबूर हो सके।

बेन्थम, जो एक स्वतंत्र चिंतक था, उसने मानवीय क़ानून-निर्माता को वह स्थान दिया, जो ख़ुदा को प्राप्त था। उसकी नज़र में यह क़ानून और सामाजिक संस्थाओं का काम था कि वह और सार्वजनिक हितों के बीच

तालमेल पैदा करें ताकि हर आदमी अपना निजी सुख तलाश करते हुए सामूहिक सुख को बरक़रार रखने पर मज़बूर हो पर यह उतना सन्तोषजनक नहीं, जितना कि जन्नत और दोज़ख (स्वर्ग और नर्क) के विश्वास द्वारा निजी और सार्वजनिक हितों के बीच तालमेल पैदा होना। ऐसा इसलिए भी है कि मानवीय क़ानून निर्माता हमेशा अक़्लमंद और नेक नहीं होता, और इसलिए भी कि इंसानी हुकूमतें सर्वज्ञ नहीं होतीं:

> God has established certain moral principles; those who follow them will go to heaven, and those who break them risk going to hell. The prudent pleasure-seeker will, therefore, be virtuous. With the decay of the belief that sin leads to hell, it has become more difficult to make a purely self-regarding argument in favour of a virtuous life. Bentham, who was a free-thinker, substituted the human lawgiver in place of God: it was the business of laws and social institutions to make a harmony between public and private interests so that each man, in pursuing his own happiness, should be compelled to minister to the general happiness. But this is less satisfactory than the reconciliation of public and private interests effected by means of heaven and hell, both because lawgivers are not always wise and virtuous and because human governments are not omniscient.
>
> Bertrand Russell. A History of Western Philosophy, pp. 592-93.

कामयाब इंसान

ली आईकोका का जन्म 1924 में हुआ। उनके मां-बाप बहुत ग़रीब थे, और वे रोज़ी की तलाश में इटली छोड़कर अमरीका चले गए। आईकोका ने मेहनत से तालीम हासिल की और इंजीनियरिंग में मास्टर डिग्री ली। आईकोका को फ़ोर्ड मोटर कम्पनी में नौकरी मिल गई। वह तरक़्क़ी करते रहे, यहां तक कि वह फ़ोर्ड कम्पनी के प्रैसिडैन्ट हो गए। इसके बाद हेनरी फ़ोर्ड (द्वितीय) से उनका मतभेद हो गया। 1978 में उन्हें फ़ोर्ड कम्पनी को छोड़ देना पड़ा।

आईकोका को एक और कम्पनी की प्रैसिडेन्टशिप मिल गई, जिसका नाम क्रिस्लर कॉर्पोरेशन (Chrysler Corporation) था। यह कम्पनी उस वक़्त बिल्कुल दीवालिया हो गई थी। आईकोका ने तीन साल की ग़ैरमामूली मेहनत से इसको कामयाबी के साथ चलाया। और वह गर्व के साथ कहते थे:

I am the company.

आईकोका ने अपनी आत्मकथा लिखी है, जिसका नाम है: आईकोकाः एन आटोबायोग्राफ़ी (*Iacocca: An Autobiography*), इसमें बहुत से क़ीमती अनुभव उन्होंने लिखे हैं। एक अनुभव को उन्होंने इन शब्दों में बयान किया है:

> The key to success is not information. It's people. And the kind of people I look for to fill top management spots are the eager beavers. These are the guys who try to do more than they're expected to...
>
> कामयाबी की कुंजी जानकारी और डिग्रियां नहीं है। यह

> दरअस्ल लोग हैं। और मैं अपनी कम्पनी के बड़े ओहदों के लिए जिस क़िस्म के लोगों की तलाश में रहता हूं वे काम के शौकीन और लगनशील लोग हैं। ये वे आदमी हैं जो उससे ज़्यादा काम करने की कोशिश करते हैं, जितनी उनसे करने की उम्मीद की गई हो (टाइम्स ऑफ़ इंडिया, 22 सितम्बर 1985)।

उम्मीद से ज़्यादा काम करना संजीदा और मेहनती आदमी की पहचान है। जो लोग उम्मीद से ज़्यादा काम करने की कोशिश करें वे ही वे लोग हैं जो अपनी ज़िन्दगी में उम्मीद से ज़्यादा कामयाब होते हैं।

सच्ची ख़ुशी

एलिज़ाबेथ टेलर (Elizabeth Taylor) जब 28 साल के हुई तो वह एक तरह से अमरीका में शहज़ादी बन चुकी थी। फ़ोटोग्राफ़र हर वक़्त उसके पीछे लगे रहते थे, और उसके मुंह से निकला हुआ हर शब्द अख़बारों में प्रमुखता से छापा जाता था। उसने चौथी बार मई 1959 में एडी फ़िशर (Eddie Fisher) से शादी की। मगर अब भी उसे ख़ुशी नहीं मिली। एक मिलियन डालर से उसने अपनी मशहूर फ़िल्म क्लियोपैट्रा (Cleopatra) में हीरोइन का रोल करना शुरू किया, लेकिन एक दिन शूटिंग के वक़्त वह बेहोश हो गई और उसको अस्पताल में दाख़िल होना पड़ा।

आजकल सबसे ज़्यादा ख्याति उन लोगों को मिलती है जो राजनीति या फ़िल्म के स्टेज से जुड़े होते हैं। लेकिन राजनीति और फ़िल्म के इन अभिनेताओं और अभिनेत्रियों के अन्दरूनी हालात निहायत ख़राब होते हैं। अख़बारों में या टेलीविज़न के स्क्रीन पर वे हंसते हुए दिखाई देते हैं लेकिन

उनकी असली ज़िन्दगी इतनी दुख भरी होती है कि उन्हें रातों को नींद नहीं आती। उनमें से ज़्यादातर का यह हाल होता है कि वे गोलियां खाकर सोते हैं या जब गोली से भी नींद नहीं आती तो शराब और नशीली दवाओं के ज़रिए ग़म दूर करते हैं।

किसी ने कहा कि "सबसे ज़्यादा हंसने वाले चेहरे सबसे ज़्यादा दुखी चेहरे होते हैं। जो इंसान अपने दिल की हालत के मुताबिक़ हंसे उसका हंसना सच्चा हंसना होता है। लेकिन सियासी लीडर और फ़िल्मी हीरो वे लोग हैं जो दूसरों के लिए जीते हैं, जो दूसरों को दिखाने के लिए बोलते हैं। उनका हंसना हमेशा नक़ली होता है।"

सच्ची ख़ुशी उस आदमी के लिए है जो अपने आप में जीना जानता हो, जो ख़ुद अपने अन्दर ज़िन्दगी का राज़ पा ले। बाहर के लिए जीने वाले कभी सच्ची ख़ुशी हासिल नहीं कर सकते।

नकली ख़ुशी और असली ख़ुशी में वही फ़र्क़ है, जो प्लास्टिक के बच्चे में और ज़िन्दा बच्चे में है। नकली ख़ुशी आदमी के अस्तित्व के बाहर उभरती है और सच्ची ख़ुशी आदमी के वजूद के अन्दर। आदमी उसी चीज़ से ख़ुश हो सकता है जो अन्दर से मिले। बाहर से मिलने वाली चीज़ कभी आदमी को सच्ची ख़ुशी नहीं दे सकती।

ऊंची उड़ान

जापान एयरलाइन्स का एक जहाज़ (बोइंग 747) 12 अगस्त 1985 को टोकियो से उड़ा। उसे एक घंटे में ओसाका पहुंचना था। मगर उड़ान के सिर्फ़ दस मिनट बाद पायलट ने महसूस किया कि उसने जहाज़ पर अपना कंट्रोल खो दिया है। जहाज़ को 24 हज़ार फुट की बुलन्दी पर उड़ना था। मगर वह

उतरते-उतरते 9800 फुट की बुलन्दी पर आ गया। और आख़िरकार वह पहाड़ से टकरा कर तबाह हो गया।

उस जहाज़ के 520 मुसाफ़िर मर गए। इन मरने वालों में हिन्दुस्तान के एक इंजीनियर श्री कल्याण मुखर्जी और उनकी बीवी भी थीं, श्री मुखर्जी की उम्र 41 साल थी। वह एक व्यापारिक मुहिम पर हाल में जापान गए थे। जापान से उन्होंने अपने लड़के रंजन मुखर्जी (13 साल) के नाम ख़त लिखा कि वह अपनी पत्नी के साथ 12 अगस्त को एक तफ़रीही सफ़र (pleasure trip) पर टोकियो से ओसाका जा रहे हैं (*हिन्दुस्तान टाइम्स*, 14 अगस्त 1985)

जहाज़ को ऊंचाई पर उड़ाने का एक मक़्सद यह है कि वह पहाड़ों या ऊंची इमारतों से न टकराए। उस जहाज़ के लिए '24 हज़ार फुट' की ऊंचाई एक सुरक्षित ऊंचाई थी। मगर जब उसके इंजन में ख़राबी आ गई तो वह उस सुरक्षित ऊंचाई पर क़ायम न रह सका। वह उतरते-उतरते 9800 फुट की ऊंचाई पर आ गया, अब वह सुरक्षित ऊंचाई की सतह पर न रहा। इसलिए वह पहाड़ से टकरा कर तबाह हो गया।

यही मामला इन्सानी ज़िन्दगी का भी है। हमारी ज़िन्दगी का सफ़र बेशुमार इन्सानों के बीच होता है। अगर हम अपने विचारों के लिहाज़ से नीची सतह पर सफ़र करें तो बार-बार दूसरों से टकराव होता रहेगा। इसका एकमात्र हल यह है कि आदमी विचारों के लिहाज़ से अपने आपको इतनी ऊंचाई पर पहुंचा दे कि दूसरों से टकराव की संभावना ही उसके लिए ख़त्म हो जाए।

एराज़ (बच कर चलने) का इस्लामी उसूल आदमी को यही बुलन्दी अता करता है। एराज़ हक़ीक़त में वही चीज़ है जिसको कुछ चिन्तकों ने ज़िन्दगी के मसले का उच्च समाधान (superior solution) कहा है। बराबर की सतह पर सफ़र करने में दूसरों से टकराव का अन्देशा होता है।

इसलिए अक़्लमन्द आदमी अपने सफ़र की सतह को ऊंचा कर लेता है, ताकि दूसरों के साथ उसका टकराव न हो। इसी ऊंची सूझबूझ को अपनाने का नाम एराज़' है।

दुनिया के नेतृत्व का रहस्य

नवम्बर 1847 की चार तारीख़ थी। स्काटलैंड के एक डाक्टर के कमरे में उसका एक नौकर दाख़िल हुआ, तो उसने देखा कि डाक्टर और उसके दो साथी अपनी कुर्सियों से गिर कर फ़र्श पर औंधे मुंह बेहोश पड़े हैं। नौकर ने समझा कि शायद उन लोगों ने आज कोई तेज़ क़िस्म की शराब पी ली है। उसने उनके कपड़े दुरूस्त किए और ख़ामोशी से बाहर चला गया। मगर बात दूसरी थी। यह दरअस्ल सर जेम्स सिम्पसन (1811-1870) और उनके दो असिस्टेंट थे। उन्होंने इन्सानी जिस्म पर क्लोरोफ़ार्म के प्रभाव का प्रयोग करने के लिए पहली बार उसको सांस के ज़रिए अपने अन्दर दाख़िल कर लिया था।

सिम्पसन एक ग़रीब नानबाई के सात लड़कों में सबसे छोटा था। चार साल की उम्र में उसने अपने गांव के स्कूल में तालीम शुरू की। उसने पढ़ाई में इतनी ज़्यादा दिलचस्पी दिखाई कि उसका बाप और छः भाई इस बात पर तैयार हो गए कि ख़ुद अपने ऊपर कम से कम ख़र्च करके उसको ऊंची तालीम के लिए शहर भेजें। इस तरह वह एडनबरा यूनिवर्सिटी पहुंचा और डाक्टरी में उस वक़्त की सब से ऊंची डिग्री (एम. डी.) हासिल की।

डाक्टर सिम्पसन को अपने अध्ययन के दौरान मालूम हुआ कि क्लोरोफ़ार्म में बेहोश करने की क्षमता है। उसने उसकी जांच शुरू कर दी। वह इस नतीजे पर पहुंचा कि आपरेशन के वक़्त अगर मरीज़ को अस्थायी

रूप से क्लोरोफ़ार्म के ज़रिए बेहोश कर दिया जाए तो उसको चीर-फाड़ की भयानक तकलीफ़ से छुटकारा दिलाया जा सकता है। उसने अपनी खोज जारी रखी। यहां तक कि ख़ुद अपने आप पर प्रयोग करके यह साबित कर दिया कि क्लोरोफ़ार्म को सुरक्षित बेहोशी के लिए सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया जा सकता है। इस तरह ग़रीब नानबाई का यह लड़का इंसान को वह चीज़ दे सका जिसको डाक्टर ब्राउन ने इन शब्दों में कहा है - दुखी इन्सानों के लिए ख़ुदा का एक बेहतरीन तोहफ़ाः

One of God's best gifts to his suffering children.

आज की दुनिया में पश्चिम के नेतृत्व और उसकी प्रधानता का रहस्य उसके इस क़िस्म के हौसलामन्द लोग हैं; जिन्होंने अपने आपको खोया, ताकि इन्सानियत को दें। उन्होंने अपने आप को ख़तरे में डाला, ताकि वे दूसरों को ख़तरे से बचा सकें।

छत गिर पड़ी

1968 का वाक़िआ है, मैं आज़मगढ़ की एक दुकान में दाख़िल हुआ। वहां मेरे जाने-पहचाने बुज़ुर्ग बैठे हुए थे। मैंने उनको सलाम किया। मगर उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। मैंने दोबारा सलाम किया। मगर मैंने देखा कि अब भी वह ख़ामोश हैं। वह मेरी तरफ़ देख रहे थे, मगर कुछ बोल नहीं रहे थे। "क्या यह कोई दूसरे साहब हैं?" मैंने सोचा। मगर मेरी आंखें धोखा नहीं खा रही थीं। जो शख़्स मेरे सामने बैठा हुआ था, वह यक़ीनन वही शख़्स था जिसे मैं पन्दरह साल से जानता था। यह भी नहीं हो सकता था कि वह मुझको भूल गए हों।

दुकान के मालिक को जल्द ही मेरी हैरानगी का एहसास हो गया। उसने बताया कि बात यह है कि उनके साथ एक भयानक हादसा हो गया है, जिसकी वजह से वह अपने होशो-हवास खो बैठे हैं। वह अपना नया मकान बना रहे थे। दीवारें खड़ी हो गईं तो उनके ऊपर सांचा बना कर छत डलवाई गई, मगर एक महीने बाद जब सांचा खोला गया तो सारी छत धड़ाम से गिर पड़ी। इस हादसे का उनके दिमाग़ पर इतना असर हुआ कि वह आधे पागल हो गए। अब वह न कोई काम करते हैं, न खाना खाते हैं और न बोलते हैं। बस, बुत के तरह इधर-उधर पड़े रहते हैं, जैसा कि इस वक़्त आप उनको देख रहे हैं।

खोजबीन के बाद मुझे मालूम हुआ कि यहां कुछ लोगों ने यह कारोबार किया है कि सीमेंट के रंग की मिट्टी (पिंडोल) को बारीक पीस कर बोरियों में भर देते हैं। यह मिट्टी देखने में बिल्कुल सीमेंट जैसी होती है, इसलिए लोग इसको सीमेंट समझ कर ख़रीद लेते हैं। उन बुज़ुर्ग को भी इत्तिफाक़ से इसी क़िस्म की सीमेंट मिल गई। और इसी सिमेंट से उन्होंने अपनी छत बनवा दी। ज़ाहिर है ऐसी सीमेंट से बनी छत का वही अंजाम होना था, जो हुआ।

इसी तरह कोई दौलत को अपनी छत बनाए हुए है। किसी को अपने अल्फ़ाज़ पर भरोसा है। कोई समझता है कि उसके साथियों की मदद उसके लिए काफ़ी है। कोई बड़ों का सहारा पकड़े हुए है। मगर ये सब झूठे सहारे हैं। क़ियामत जब ज़ाहिरी सांचे को हटाएगी तो अचानक लोगों की छत उनके ऊपर इस तरह गिर पड़ेगी कि वहां कोई तिनका भी न होगा जो आदमी का सहारा बन सके।

आख़िरी अंजाम

जनरल नोरेगा (Manuel Antonio Noriega 1934-2017) ने 1983 में पनामा में फ़ौजी इन्क़िलाब करके हुकूमत पर कब्ज़ा कर लिया। इसके बाद वह पनामा के डिक्टेटर बन गए, उन्होंने सत्ता के साथ-साथ अपने लिए बेशुमार दौलत और जायदाद इकट्ठा कर ली। मगर अपनी पालिसियों से उन्होंने अमरीका को नाराज़ कर दिया। अमरीका ने दिसम्बर 1989 में पनामा में अपनी फ़ौजें दाख़िल कर दीं। जनरल नोरेगा अपना आलीशान महल छोड़कर भागे और वैटिकन के दूतावास में पनाह ली। मगर यह पनाह उनके काम न आ सकी। अमरीका ने वैटिकन पर दबाव डाला। यहां तक कि उसने 3 जनवरी 1990 को जनरल नोरेगा को अमरीकी सिपाहियों के हवाले कर दिया (*टाइम्स ऑफ इंडिया*, 6 जनवरी 1990)

3 जनवरी का वह दृश्य बेहद शिक्षाप्रद था जब जनरल नोरेगा वैटिकन मिशन से हारे हुए इंसान की हैसियत से बाहर निकले और अमरीकी सिपाहियों ने फ़ौरन ही उनके हाथ को हथकड़ियों में जकड़ लिया। ए.पी. के रिपोर्टर के शब्दों में, "जनरल नोरेगा का ख़ानदान, दोस्त, मुहब्बत करने वाले, दौलत और पसन्द करने वालों की भीड़ सब उनका साथ छोड़ चुके थे। कल तक जो शख़्स एक ताक़तवर इंसान था, आज उसके लिए दुनिया में कोई जगह न थी जहां वह जा सके।"

एक और समीक्षक के शब्दों में जनरल नोरेगा को शायद ऐसा महसूस हो रहा था कि वह एक अंधेरी सुरंग में दाख़िल हो रहे हैं। वह वैटिकन मिशन की इमारत में भी अकेले थे और उसके बाहर भी अकेले। उनके मेज़बानों ने उन्हें याद दिलाया कि वह उनके यहां सिर्फ़ एक नापसंदीदा मेहमान थे। पिछले एक हफ़्ते से जनरल नोरेगा वैटिकन मिशन के एक बन्द कमरे में ख़ामोश पड़े हुए थे। यहां उनके कान ऐसे गाने सुनने पर मजबूर थे, जिसमें

कहा गया था कि अब तुम्हारे लिए कहीं भागने की जगह नहीं, तुम्हारे लिए छुपने का कोई मुक़ाम नहीं:

Nowhere to run, nowhere to hide.

जनरल नोरेगा की यह कहानी हर इंसान की कहानी है। जो कुछ जनरल नोरेगा के साथ इस दुनिया में पेश आया वही तमाम इन्सानों के साथ आख़िरत में पेश आने वाला है। हर आदमी आख़िरकार गिरफ़्तार होकर ख़ुदा की अदालत में हाजिर किया जाने वाला है। हर आदमी पर वह वक़्त आने वाला है जबकि हर चीज़ उसका साथ छोड़ देगी। हर आदमी को यह सूरते-हाल पेश आनी है जब कि वह महसूस करेगा कि मेरे लिए न भागने की कोई सूरत है और न छुपने की कोई जगह।

ज्ञान का महत्व

जैफ़रसन (Thomas Jefferson) अमरीका का तीसरा राष्ट्रपति था। वह 1843 में पैदा हुआ और 1826 में उसकी मृत्यु हुई। वह 1801 से लेकर 1809 तक अमरीका का राष्ट्रपति रहा। जैफ़रसन बेहद क़ाबिल आदमी था। वह अंग्रेज़ी, लैटिन, यूनानी, फ्रेंच, स्पैनी, अताल्वी और एंग्लोसेक्सन भाषाएं जानता था। इतिहासकार उसके बारे में लिखते हैं कि वह एक बेहद ग़ैरमामूली क़िस्म का विद्वान था:

He was an extraordinary learned man.

उसने अपनी लम्बी उम्र में दर्शन और विज्ञान से लेकर मज़हब तक लगभग तमाम विषयों का गहरा अध्ययन किया। आख़िर उम्र में उसने यह कोशिश की कि वह इंजील का विश्लेषण करे और यह मालूम करे कि हज़रत

मसीह ने हक़ीक़त में क्या कहा था और बयान करने वालों ने उनके बारे में क्या बयान किया:

> He attempted an analysis of the New Testament in order to discover what Jesus really said as distinguished from what he was reported to have said.

जैफ़रसन ने आख़िर उम्र में यह वसीयत की थी कि उसके मरने के बाद उसकी क़ब्र पर जो पत्थर (कत्बा) लगाया जाए उसमें यह न लिखा जाए कि वह अमरीका का राष्ट्रपति था। बल्कि यह लिखा जाए कि वह वर्जीनिया यूनिवर्सिटी का संस्थापक था। इसलिए उसकी वसीयत के मुताबिक़ उसकी क़ब्र (Monticello) पर जो कत्बा लगा हुआ है उसमें ये शब्द लिखे हैं:

> Here was buried Thomas Jefferson... father of the University of Virginia

हक़ीक़त यह है कि ज्ञान सबसे बड़ी दौलत है। जो लोग ज्ञान की अहमियत को जान लें, उनको अमरीका के राष्ट्रपति का पद भी छोटा मालूम होगा।

ज्ञान सबसे बड़ी दौलत है। ज्ञान ही वह एकमात्र चीज़ है जिससे आदमी कभी नहीं ऊबता, जिसकी हद कभी किसी के लिए नहीं आती। ज्ञान हर मामले में कारगर है। वह हर मैदान में कामयाबी की सीढ़ी है। ज्ञान से आदमी को वह चेतना मिलती है, जिससे वह दुनिया को जाने जिससे वह बातों को उनकी गहराई तक समझ सके। ज्ञान ऐसा सिक्का है, जिससे आप दुनिया की हर चीज़ ख़रीद सकते हैं।

आर्थिक हमला

हवाई (Hawaii) प्रशांत महासागर का द्वीप है। इसके समुद्र के किनारे की एक जगह है जिसे पर्ल हार्बर कहते हैं। । अमरीका ने इसे एक सैन्य बंदरगाह के रूप में विकसित किया। यह प्रशांत महासागर में अमरीका का सब से ज़्यादा मज़बूत समुद्री अड्डा बन गया। दूसरे-विश्व-युद्ध के दौरान 7 दिसम्बर 1941 को जापान ने पर्ल हार्बर पर बम्बार हवाई जहाज़ों से हमला किया। उस वक़्त अमरीका के लगभग एक सौ जंगी जहाज़ यहां मौजूद थे। जापानी बम्बारी ने उन में से ज़्यादातर जहाज़ों को तबाह कर दिया।

इसका बदला अमरीका ने इस तरह लिया कि 6 अगस्त 1945 को उसने दो एटम बम जापान पर गिराए, जिसके नतीजे में जापान के दो बड़े औद्योगिक शहर बिल्कुल तबाह हो गए। फिर भी ये दोनों शहर हीरोशिमा और नागासाकी अब दोबारा ज़्यादा शानदार तौर पर तामीर कर लिए गए हैं। 1945 में वे जापान की बरबादी का प्रतीक थे। 1985 में वे जापान की ग़ैरमामूली तरक़्क़ी का प्रतीक बन गए।

दूसरे विश्व-युद्ध का ख़ात्मा जापान की मुकम्मल शिकस्त पर हुआ था। इतना ही नहीं अमरीका ने उसके ऊपर फ़ौजी और सियासी प्रभुत्व हासिल कर लिया। मगर जापान ने हैरत अंग्रेज़ तौर पर इसका सबूत दिया कि वह अपने आपको हालात के मुताबिक़ बदल लेने की सलाहियत रखता है। दूसरे विश्व-युद्ध से पहले वह हथियारों पर यक़ीन रखता था, मगर जंग के बाद उसने ख़ुद अपनी मर्ज़ी से हथियार अलग रख दिए, और पूरी तरह शान्तिपूर्ण अन्दाज़ में अपना नवनिर्माण शुरू कर दिया। जापान ने लड़ाई का मैदान छोड़ दिया जो उसके लिए बन्द हो गया था। उसने तामीर और निर्माण के मैदान को इख़्तियार कर लिया जो अब भी उसके लिए खुला हुआ था।

दूसरी तदबीर पहली से ज़्यादा कामयाब हुई। जापान तिजारत और

उद्योग-व्यापार में इतना आगे बढ़ गया कि आज वह दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी आर्थिक-औद्योगिक ताक़त समझा जाता है। अमरीका के मुक़ाबले में उसका ट्रेड सरप्लस 37 बिलियन डालर से ज़्यादा है। जंग जीतने वाले अमरीका को हारे हुए जापान ने आर्थिक मैदान में शिकस्त दे दी।

इस बात से अमरीका के लोग बेहद परेशान हैं। वे जापान के मौजूदा हमले को आर्थिक पर्ल हार्बर (Economic Pearl Harbour) का नाम देते हैं। अमरीका में एक किताब छपी है, जो इस वक़्त अमरीका और जापान में सबसे ज़्यादा बिकने वाली किताब बन गई है। इस किताब का नाम है: *जापान, नम्बर एक* (*Japan Number One*).

इस किताब में दिखाया गया है कि जापान और अमरीका के बीच व्यापार में जापान बहुत ज़्यादा आगे बढ़ गया है। विदेशी मुद्रा के लिहाज़ से आज जापान दुनिया की सबसे ज़्यादा दौलतमन्द क़ौम है। उसकी विदेशी मुद्रा 1984 के आख़िर में 74 बिलियन डालर थी (*टाइम्स ऑफ़ इंडिया,* 13-14 जून 1985)

जापान ने अपनी फ़ौजी शिकस्त को आर्थिक जीत में किस तरह तब्दील किया? जवाब यह है कि उसका राज़ यह था कि जापान ने नए सिरे से वहां से अपना सफ़र शुरू किया, जहां हालात ने उसको पहुंचा दिया था।

उसने उत्तेजना के बजाए सब्र और धीरज का तरीक़ा इख़्तियार किया। उसने टकराव के मैदान से हट कर शान्तिपूर्ण मैदान में अपनी ताक़तों को इस्तेमाल किया। जो संभावनाएं बरबाद हो गई थीं, वह उनका फ़रियादी नहीं बना। बल्कि जो संभावनाएं बाक़ी रह गयी थीं, उसने अपना सारा ध्यान उस पर लगा दिया।

ख़ुलासा यह कि जापान ने दूसरों को इल्ज़ाम देने के बजाए अपने आपको इल्ज़ाम दिया और इसके बाद फ़ौरन उसकी नई तारीख़ बननी शुरू हो गई।

आप इस दुनिया में अकेले नहीं हैं, बल्कि यहां दूसरे बहुत से लोग भी हैं। और वे सब बढ़ने और ऊपर उठने की कोशिश कर रहे हैं। इस हालत में आपका तरीक़ा दो क़िस्म का हो सकता है। एक यह कि जहां कोई दूसरा आपको अपनी राह में रोड़ा बना नज़र आए वहां आप उससे लड़ना शुरू कर दें। दूसरा तरीक़ा यह है कि टकराव से बच कर अपनी 'पोज़िटिव' तामीर करने की कोशिश करें।

इतिहास का अनुभव बताता है कि इस दुनिया में सिर्फ़ दूसरा तरीक़ा कामयाब तरीक़ा है। इसके उलट पहला तरीक़ा सिर्फ़ बरबादी का तरीक़ा है। समुद्री जहाज़ को अगर चलते हुए रास्ते में चट्टान मिल जाए तो वह उससे कतरा कर निकल जाता है। और अगर जहाज़ उससे लड़कर जाना चाहे तो वह टूट कर ख़त्म हो जाता है। ऐसे जहाज़ के लिए मंज़िल पर पहुंचना मुक़द्दर नहीं।

देखने वाला देख रहा है

11 फ़रवरी 1985 की बात है। नई दिल्ली के कनाट प्लेस के होटल ताज में एक समारोह था। यह समारोह दिल्ली के एक व्यापारी श्री एस.पी. सोनी ने अपने लड़के की शादी के मौक़े पर किया था। समारोह की व्यवस्था बहुत ख़ास थी। इसमें क़रीब चार सौ लोग शामिल थे, जो ऊंचे वर्ग से संबंध रखते थे।

लोग समारोह की चकाचौंध में खोए हुए थे कि अचानक एक महिला ने महसूस किया कि उसका पर्स चोरी हो गया है। यह श्रीमती संतोष सोनी का पर्स था। उसमें पचास हज़ार रुपये नक़्द रखे हुए थे। उसके अलावा उसमें शुद्ध मोतियों का एक क़ीमती हार भी था।

पर्स चोरी होते हुए न तो उस की मालकिन ने देखा और न किसी और ने इसको महसूस किया। यह पूरी तरह एक रहस्य था। चोरी करने वाला चोरी कर चुका था। चोरी का सामान मिलने की कोई उम्मीद दिखाई नहीं देती थी। होटल के कर्मचारी तो यह मानने के लिए भी तैयार न थे कि चोरी हुई है। उन्होंने कहा कि यह बनावटी बात है। हमारे यहां ऐसा नहीं हो सकता। होटल वालों की नज़र में यह क़िस्सा इतना बेबुनियाद था कि उन्होंने इसकी ज़रूरत भी नहीं समझी कि हाल के दरवाज़े बन्द करके लोगों की तलाशी लें।

इतने में कुछ लोगों को ख़्याल आया कि शादी के समारोह की शुरू से आख़िर तक वीडियो फिल्म बनी है, क्यों न उसका मुआइना किया जाए।

फ़ौरन सभी मौजूद लोगों और होटल वालों के सामने वीडियो टेप चलाया गया। इससे पहले सभी की निगाहें भव्य स्टेज पर लगी हुई थीं, जहां दूल्हा और दुल्हन बैठे हुए थे। मगर अब उनका ध्यान दूसरी तरफ़ था। जिस मंज़र को इससे पहले उन्होंने सिर्फ़ मनोरंजन की नज़र से देखा, अब उसको उन्होंने 'तफ़्तीश' की नज़र से देखना शुरु कर दिया।

बहुत जल्द लोगों की निगाहें एक औरत पर जम गईं, जो एक लड़के के साथ आया के रूप में हाल में दाख़िल हुई थी। शुरू में लोगों ने यह समझ कर उसे नज़र अन्दाज़ कर दिया था कि वह मेहमानों में से किसी मेहमान

वह नेकी नेकी नहीं जिससे फ़ख़्र और बड़ाई का जज़्बा पैदा हो

इब्ने अताउल्लाह सिकंदरी ने अपनी किताब 'अलहिकम' में कहा है कि ऐसा गुनाह जिससे इज्ज़ (विनम्रता) पैदा हो वह उस नेकी से बेहतर है जिससे घमंड पैदा हो।

के साथ आई है। मगर अब उसको एक संभावित मुजरिम की नज़र से देखा जाने लगा।

यह औरत जो आया के रूप में आई थी, वह इस बात से बिल्कुल बेख़बर थी कि यहां वीडियो कैमरा लगा हुआ है और उसकी नज़रें हर पल उसको देख रही हैं, वे उसकी हर हरकत को निहायत बारीकी के साथ रिकार्ड कर रहीं हैं। वह संदिग्ध अंदाज़ में इधर से उधर जा रही थी।

आख़िर लोगों ने देखा कि 'आया' ने शाल में छुपा हुआ हाथ बाहर निकाला और निहायत तेज़ी से उस पर्स को उठा कर ठीक उस वक़्त अपने कपड़ों के अन्दर छुपा लिया जबकि पर्स की मालकिन फोटो खिंचवाने में खोई हुई थी।

जो घटना लोगों की निगाह से ओझल थी, उसे वीडियो कैमरे की निगाह ने बता दिया, जो लगातार तस्वीर खींच रहा था। फ़ौरन पुलिस बुलाई गई और पुलिस के सामने फिल्म चलाई गई।

जुर्म साबित हो गया था। उस आया को पुलिस ने तलाश करके गिरफ़्तार कर लिया। उसका नाम अख़बार में शीला बताया गया, जो सुलतानपुरी की रहने वाली थी। *हिन्दुस्तान टाइम्स* (16 मार्च 1985) ने यह कहानी तफ़सील के साथ देते हुए यह अर्थपूर्ण वाक्य लिखा:

You can not only spot the thief but see her commit the crime.

आप न सिर्फ़ चोर को पकड़ सकते हैं बल्कि उसको जुर्म करते हुए देख भी सकते हैं।

यह दुन्यवी घटना आख़िरत की घटना का दर्पण है। यह घटना प्रतीक के रूप में बता रही है कि सबके ऊपर कोई देखने वाला है, जो हर किसी को देख रहा है। वह उन बातों को निहायत बारीकी के साथ रिकार्ड कर रहा है,

जिसकी ख़बर न करीब के लोगों को होती है और न दूर के लोगों को। वह उन बातों को भी जानता है, जिनको लोग नहीं जानते। वह उन चीज़ों को भी देखता है जिनको लोग नहीं देखते।

दुनिया की घटनायें आख़िरत की हक़ीक़तों का आईना हैं। आज जो कुछ हो रहा है, उसमें उन घटनाओं को देखा जा सकता है जो कल के दिन पेश आने वाली हैं। मगर इसे देखने के लिए बसीरत (अंतर्दृष्टि) की निगाह दरकार है। और यह वह चीज़ है जो आंख वालों के पास भी अक्सर नहीं होती।

आधा आदमी

एक साहब से बात करते हुए मैंने कहा - मौजूदा ज़माने में जिस आदमी का भी मैंने तजुर्बा किया उसको मैंने आधा आदमी पाया। कोई पूरा आदमी मुझको नहीं मिला। हर आदमी ''मिस्टर फ़िफ़्टी पर्सेंट' था। कोई आदमी भी 'मिस्टर हंड्रेड पर्सेंट' न था।

हर आदमी उस सच्चाई को जानने का माहिर था, जिसकी चोट दूसरे के ऊपर पड़ रही हो। जिस सच्चाई की चोट ख़ुद अपने आप पर पड़े उसको जानने के लिए कोई आदमी भी माहिर नहीं, हर आदमी सिर्फ उस वक्त तक ख़ुशअख़्लाक़ था जब तक उसकी पसंद के मुताबिक बातें की जाएं, पसंद के खिलाफ बातें करने के बाद कोई आदमी भी ख़ुशअख़्लाक़ नहीं। अपने स्वार्थ को समझने के मामले में हर आदमी होशियार था, पर दूसरों के स्वार्थ को समझने के मामले में हर आदमी बेवकूफ़!

आज दुनिया में हर आदमी उसूल की बातें करता है, पर अमली तौर पर हर आदमी बेउसूल बना हुआ है। बातों के मैदान में हर आदमी आगे है, और अमल के मैदान में हर आदमी पीछे।

हर आदमी ज़ालिम है, पर हर आदमी अपने को मज़लूम बता रहा है। हर आदमी स्वार्थ के लिए दौड़ रहा है, पर हर आदमी सच्चाई का ताज अपने सिर पर रखे हुए है। हर आदमी झूठ पर खड़ा हुआ है, पर हर आदमी सच का पौशाक पहन कर लोगों के सामने आता है। हर आदमी संजीदगी का मुखौटा अपने चेहरे के ऊपर डाले हुए है। हर आदमी सिर्फ़ अपने लिए काम कर रहा है, पर हर आदमी एलान कर रहा है कि वह सिर्फ़ धर्म और समाज की ख़िदमत के लिए उठा है।

हर आदमी अंधेरा बिखेर रहा है, पर हर आदमी उजाले की बातें करता है। हर आदमी तोड़फोड़ की स्कीम चला रहा है, पर हर आदमी निर्माण का झंडा बुलन्द किये हुए है। हर आदमी लोगों को मौत की गुफ़ा में धकेल रहा है, पर हर आदमी अपने आपको ज़िन्दगी का घुड़सवार बनाये हुए है।

अगर लोग वही कहें, जो उन्हें करना है, और वही करें, जो उन्होंने कहा है तो कम से कम वे सच बोलने का क्रेडिट पा लें। पर मौजूदा हालत में तो लोगों को किसी भी क़िस्म का कोई क्रेडिट मिलने वाला नहीं।

आह, वह दुनिया जहां हर आदमी आधा हो, पर हर आदमी अपने आपको पूरा बता रहा हो।

ख़ादिम की कोताहियों पर उसे माफ़ करना

अब्दुल्लाह विन उमर कहते हैं कि एक देहाती रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पास आया और आपसे पूछा, "ऐ ख़ुदा के रसूल, मैं अपने ख़ादिम (सेवक) को कितनी बार माफ़ करूं?" आपने फ़रमायाः सत्तर बार माफ़ करो (सुनन अल-तिरमिज़ी, हदीस संख्या 5164)

ज़िन्दगी का सवाल

ग्रेटा गार्बो (Greta Garbo) 18 सितम्बर 1905 को स्वीडन में पैदा हुई। 15 अप्रैल 1990 को अमरीका में उसका निधन हुआ। उसको शोहरत और दौलत की तमन्ना थी। इसके लिए वह फिल्मी दुनिया में गई। यहां उसको इतनी कामयाबी मिली कि वह फिल्मी देवी (screen goddess) कही जाने लगी।

फिल्म ने ग्रेटा गार्बो को दौलत और शोहरत दी। पर उसने उसकी अपनी शख़्सियत को उससे छीन लिया। वह पूरी तरह फिल्म कंपनी के कंट्रोल में थी। ऐसा बाल काटो, ऐसा कपड़ा पहनो, इस तरह बोलो, इस तरह चलो। उसके चेहरे को मेक-अप के ज़रिए बार-बार बदला जाता। उसकी नियमित मालिश की जाती, ताकि उसकी शारीरिक कोमलता बाक़ी रहे। वग़ैरह। इन चीज़ों से वह इतना घबरा उठी कि अपने अकेलेपन में वह अक्सर रोती और चीख़ती। लेकिन वह फिल्मी लोगों के हाथों में बिल्कुल बेबस थी।

आख़िरकार 1941 में उसने फिल्मी ज़िन्दगी को पूरी तरह छोड़ दिया। उसके बाद से उसने बाकी ज़िन्दगी अपने घर के अन्दर बिल्कुल तन्हा गुज़ारी। यहां तक कि 84 साल की उम्र में उसका निधन हो गया। शोहरत की ज़िन्दगी गुमनामी की मौत पर ख़त्म हो गई।

ग्रेटा गार्बो गुमनाम मर जाना चाहती थी। एंटोनी ग्रोनोवेज़ ने बड़ी मुश्किल से उसको तैयार किया कि वह उसको अपनी ज़िन्दगी के हालात लिखने की इजाज़त दे और उसको अपने हालात बताए। ग्रेटा गार्बो ने बहुत ज़्यादा आग्रह के बाद इस शर्त पर उसे इजाज़त दी कि उसके बारे में जो किताब लिखी जाए वह उसके मरने के बाद छपे। इस तरह एक किताब तैयार हुई। लेकिन लेखक का निधन 1985 में 71 साल की उम्र में हो गया, जबकि

ग्रेटा गार्बो के मरने के बाद 1990 में यह किताब अमरीका से प्रकाशित की गई है। उसका नाम है:

Garbo: Her Story by Antoni Gronowicz

टाइम्स ऑफ़ इंडिया (9 सितम्बर 1990) में इस किताब का एक अंश छपा है। इसके मुताबिक़ ग्रेटा गार्बो ने अपनी उम्र के अंतिम दिनों में कहा:

> I have lost belief in people, in a God who put me in this situation without replying clearly to my questions. I am floating on the waters of life without direction, without a goal, without the knowledge of why and how long. (p.15)
>
> मुझे लोगों पर यक़ीन नहीं रहा है। ख़ुदा पर भी मुझे यक़ीन नहीं रहा है, जिसने मुझे इस हाल में रखा, बग़ैर इसके कि वह मेरे सवालों का साफ़-साफ़ जवाब दे। मैं ज़िन्दगी के पानी में बिना किसी दिशा के बह रही हूं। मेरी कोई मंजिल नहीं। मुझे यह भी नहीं मालूम कि क्यों और कब तक मेरा यह सफ़र जारी रहेगा।

यह एक ऐसी औरत की कहानी है जिसने ख़ुदा को छोड़ कर ग़ैर-ख़ुदा को अपने ध्यान का केन्द्र बनाया, फिर उसको उसमें संतुष्टि न मिल सकी। यहां तक कि पचास साल बेचैनी की हालत में रह कर उसने अपनी जान दे दी।

ग्रेटा गार्बो की कहानी आम लोगों की ज़िन्दगी से हट कर ज़रूर है, लेकिन कम या ज़्यादा यही बात हर किसी के साथ हो रही है। हर आदमी ख़ुदा को छोड़े हुए है। हर आदमी किसी न किसी ग़ैर-ख़ुदा को हासिल करने के लिए दौड़ रहा है। पर जब वह उसको पा लेता है तो उसको मालूम होता है

कि वह उसकी तलब का जवाब न था। उसने ग़लतफ़हमी में एक ऐसी चीज़ को अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया जो हक़ीक़त में उसका लक्ष्य न था।

हर आदमी इस हौसले के साथ अपनी ज़िन्दगी का सफ़र शुरू करता है कि वह अपनी मंज़िल की तरफ़ तेज़ी से बढ़ रहा है। पर जब मंज़िल आती है तो मालूम होता है कि वह मंजिल न थी, बल्कि एक गड्ढा था, जिसमें वह अपनी तमाम आकान्छाओं और कामनाओं को लिए हुए जा गिरा।

प्रतिक्रिया का नतीजा

श्री घनश्याम दास बिड़ला (1894-1983) भारत के महान उद्योगपति होने के अलावा आज़ादी की लड़ाई में महात्मा गांधी के क़रीबी साथियों में से थे।

श्री बिड़ला के अन्दर राष्ट्रीय आज़ादी के विचार कैसे पैदा हुए, इस सिलसिले में वह ख़ुद लिखते हैं: "जब मेरी उम्र सोलह साल की थी, मैंने कलकत्ता में दलाल (broker) की हैसियत से अपना एक स्वतंत्र कारोबार शुरू किया। इस तरह मेरा सम्पर्क अंग्रेज़ों से बढ़ा जो उस वक़्त मेरे ग्राहक या मेरे अफ़्सर थे। उनसे संपर्क के दौरान मैंने उनके ऊंचे व्यापारिक तौर-तरीक़े देखे। उनकी व्यवस्थात्मक योग्यता और उनकी बहुत-सी विशेषताओं का अनुभव हुआ। लेकिन उनका घमंड मेरे लिए असहनीय था। मुझे यह इजाज़त नहीं थी कि मैं उनके आफ़िस में जाने के लिए लिफ्ट इस्तेमाल करूं। न मुझे इजाज़त थी कि इंतिज़ार के वक़्त उनकी बैंच पर बैठूं। यह अपमान (insult) मेरे लिए बहुत तकलीफ़देह था। इसके नतीजे में मेरे अन्दर राजनीति में दिलचस्पी पैदा हुई, जो 1912 से लेकर आख़िर तक पूरी तरह क़ायम रही।

हिन्दुस्तान टाइम्स (12 जून 1983) के संपादक ने इस घटना का ज़िक्र करते हुए लिखा था कि यह उनके राष्ट्रवाद की शुरुआत थी :

This was the beginning of his nationalism.

श्री बिड़ला का देश-प्रेम अंग्रेज़ से नफ़रत के नतीजे में पैदा हुआ। इसी तरह मौजूदा ज़माने के मुस्लिम लीडरों का इस्लाम-प्रेम भी किसी न किसी दुश्मन या प्रतिद्वंद्वी के ख़िलाफ नफ़रत के तहत पैदा हुआ। हालांकि दोनों अलग-अलग शब्द बोलते थे, पर दोनों ही प्रतिक्रिया (रद्दे-अमल) की पैदावार थे। सकारात्मक मामला न एक का था न दूसरे का।

एक है सकारात्मक प्रेरणा के तहत उठना, दूसरा है नकारात्मक प्रेरणा के तहत उठना। सकारात्मक प्रेरणा के तहत उठने का नाम 'अमल' है और नकारात्मक प्रेरणा के तहत उठने का नाम 'रद्दे-अमल'। कोई सच्चा नतीजा हमेशा सच्चे अमल के ज़रिए हासिल होता है। रद्दे-अमल कोई सच्चा अमल ही नहीं। इसलिए इसका कोई सच्चा नतीजा भी निकलने वाला नहीं।

आलोचना

लोग अपनी आलोचना से इतने ज़्यादा भड़क क्यों उठते हैं? इसकी वजह यह है कि वे आलोचना को अपमान समझ लेते हैं। अगर वे आलोचना को मतभेद के अर्थों में लें तो कभी आलोचना को सुन कर भड़कें नहीं।

आदमी के अन्दर सबसे ज़्यादा ताक़तवर भावना यह है कि वह अपने आपको सम्मानित देखना चाहता है। वह किसी हाल में अपनी बेइज़्ज़ती को पसंद नहीं करता। जब वह अपनी आलोचना को सुनता या पढ़ता है तो उपरोक्त मानसिकता की वजह से आलोचना उसको अपनी इज़्ज़त और प्रतिष्ठा पर हमला मालूम होती है। यही कारण है कि वह आलोचना को सुनते ही फौरन उत्तेजित हो जाता है। वह चाहता है कि अपना सारा गुस्सा आलोचक के ऊपर उंडेल दे।

आलोचना बेशक इंसान के लिए सबसे ज़्यादा कड़वी चीज़ है। उसमें ख़ास और आम का कोई फ़र्क़ नहीं। सिर्फ़ दो क़िस्म के इंसान हैं जो आलोचना के मौके पर असंतुलित होने से बच सकते हैं।

एक वह इंसान जो ख़ुदा से बहुत ज़्यादा डरने वाला हो। यह वह इंसान है जो ख़ुदा की महानता को इतनी गहराई के साथ पाता है कि अपना अस्तित्व उसकी नज़र में बिल्कुल अर्थहीन हो जाता। वह ख़ुदा को बड़ा मान कर अपने आपको छोटा बना चुका होता है। उसका यह स्वभाव इस बात में रुकावट बन जाता है कि वह आलोचना को सुन कर बिफर उठे। आलोचना अगर उसको छोटा करे तो वह क्यों नाराज़ होगा, जबकि इससे पहले वह ख़ुद अपने आपको छोटा कर चुका है।

दूसरा इंसान जो आलोचना से उत्तेजित नहीं होता, वह है जिसके अन्दर सही अर्थों में वैज्ञानिक मिज़ाज पैदा हो गया हो। विज्ञान नाम है भौतिक सच्चाइयों के अध्ययन का। वैज्ञानिक का ज़ेहन यह होता है कि सच्चाई वह है जो भौतिक जगत में पाई जाती है, न कि वह जो उसके अपने ज़ेहन के अन्दर मौजूद है। यह वैज्ञानिक स्वभाव आदमी से उसकी ख़ुदपसंदी छीन लेता है और उसको पूरी तरह यथार्थवादी बना देता है। इस ख़ास स्वभाव का नतीजा यह होता है कि जब वैज्ञानिक के सामने कोई आलोचना की बात कही जाती है तो वह अपने आपको अलग करके उसे देखता है।

जिसकी शरारत का असर उसके बाद भी रहे

एक हकीम का कहना है कि बरकत उसके लिए है कि जब वह मरा तो उसके गुनाह भी उसके साथ मर गए। और तबाही उसके लिए है कि जब वह मरे तो उसके बाद उसके गुनाह भी बाक़ी रहें।

उसका ध्यान उसकी असलियत की तरफ़ चला जाता है न कि इस तरफ़ कि वह उसकी अस्मिता को चोट पहुंचा रही है।

जो इंसान आलोचना सुनकर भड़क उठे वह सिर्फ़ यह साबित कर रहा है कि उसके अन्दर न तो आत्म संयम है और न व्यावहारिक स्वभाव। अगर उसकी आलोचना की गई तो वह सचमुच इसी क़ाबिल था कि उसकी आलोचना की जाती।

मिठास का इज़ाफ़ा

टाइम्स ऑफ़ इंडिया के परिशिष्ट (The Neighbourhood Star) 18-24 मार्च 1989 (पेज 6) में सबक़ हासिल करने लायक़ एक घटना छपी है। ईरान के पारसी जब पहली बार भारत में आए तो वे भारत के पश्चिमी तट पर उतरे। उस वक़्त यादू राणा गुजरात का राजा था। पारसी गिरोह का पेशवा राजा से मिला। और उससे दरख़्वास्त की कि वह उन लोगों को अपनी रियासत में ठहरने की इजाज़त दे। राजा ने इसके जवाब में दूध से भरा हुआ एक गिलास पारसी पेशवा के हाथ पर रख दिया। इसका मतलब यह था कि हमारी रियासत पहले ही से आदमियों से भरी हुई है। इसमें और ज़्यादा लोगों के ठहरने की गुंजायश नहीं।

पारसी ने लफ़्ज़ों में इसका कोई जवाब नहीं दिया। उसने सिर्फ़ यह किया कि एक चम्मच शक्कर लेकर दूध में मिलाया और गिलास को राजा की तरफ़ लौटा दिया। यह इशारे की भाषा में इस बात की अभिव्यक्ति थी कि हम लोग आपके दूध पर क़ब्ज़ा करने के बजाय उसको मीठा बनाएंगे। हम आपकी रियासत की ज़िन्दगी में मिठास का इज़ाफ़ा करेंगे। इसके बाद राजा ने उन्हें गुजरात में ठहरने की इजाज़त दे दी।

इस बात को एक हज़ार साल हो गए हैं। इतिहास बताता है कि पारसियों के नेता ने जो बात कही थी उनको पारसी क़ौम ने पूरा कर दिखाया। पारसी इस देश में मांग और एजीटेशन का झंडा लेकर खड़े नहीं हुए, बल्कि उन्होंने अपनी ख़ामोश मेहनत से इस मुल्क की तरक़्क़ी में इज़ाफ़ा किया। पारसियों ने दूसरों से ज़्यादा मेहनत की। वे शिक्षा, व्यापार और उद्योग में आगे बढ़े। उन्होंने मुल्क की दौलत और मुल्क की तरक़्क़ी को बढ़ाया।

इस मुल्क में जहां बहुत से लोग लेने वाले गिरोह (taker group) की हैसियत रखते हैं, पारसियों ने अपने कामों के ज़रिए देने वाले गिरोह (giver group) का दर्जा हासिल किया है - यही ज़िन्दगी का राज़ है। इस दुनिया में देने वाला पाता है। यहां उस आदमी को सम्मानपूर्ण जगह मिलती है जो लोगों के ‘दूध’ में अपनी तरफ़ से ‘मिठास’ का इज़ाफ़ा करे। इसके बरअक्स जिन लोगों के पास दूसरों को देने के लिए सिर्फ़ कड़वापन हो, उन्हें भी इस दुनिया में वही चीज़ मिलती है जो उन्होंने दूसरों को दी।

बन्द ज़ेहन

यूनानी दार्शनिक अरस्तू (332-384 ईसापूर्व) ने लिखा है कि गोल दायरा स्तरीय दायरा है और वह रेखा गणित की सम्पूर्ण सूरत है। इस कल्पना के तहत अरस्तू (Aristotle) ने कहा कि नेचर का हर काम चूंकि स्तरीय होता है इसलिए फ़ितरत आसमानी पदार्थों को जिन दायरों में घुमा रही है, वे सिर्फ़ गोल दायरे ही हो सकते हैं।

अरस्तू का यह नज़रिया पुराने ज़माने में तमाम लोगों के दिमाग़ों में छाया हुआ था। क़दीम ज़माने में खगोल शास्त्र के जो सिद्धान्त बनाए गए,

सब में यह माना गया था कि आकाशीय पिंड सबके सब अंतरक्षि के अन्दर गोल दायरों में घूमते हैं।

केपलर (Johannes Kepler) पहला शख़्स है, जिसने इसके ख़िलाफ़ सोचा। उसने हिसाब लगा कर 1609 में बताया कि मंगल ग्रह सूरज के चारों तरफ़ गोल दायरे में नहीं घूमता। बल्कि वह अंडाकार दायरे (elliptical orbit) में घूमता है। उसने भविष्यवाणी की कि दूसरे तमाम गृह जो सूरज के गिर्द घूमते हैं, वे भी अंडाकार शक्ल में घूमते हैं। केपलर का यह नज़रिया आज एक साबित सच्चाई बन गया है।

पुराने खगोलशास्त्री हज़ारों साल तक गोल दायरों की कल्पना में गुम रहे। वे गृहों के घूमने के दायरों के बारे में दूसरी तरह से सोच न सके। इसकी वजह अरस्तू के नज़रिये की महानता थी। इस नज़रिये को उन्होंने बिना किसी बहस के एक पूरी सच्चाई मान लिया। इसीलिए उनका ज़ेहन किसी और अन्दाज़ में काम नहीं कर पाता था।

यह सिर्फ़ पुराने ज़माने की बात नहीं, यह हर दौर की बात है। हर ज़माने में ऐसा होता है कि कुछ ख़यालात आदमी के दिमाग़ पर इतना ज़्यादा छा जाते हैं कि उनसे निकल कर स्वतन्त्र रूप से सोचना आदमी के लिए नामुमकिन हो जाता है। यह मज़हबी दायरे में भी होता है और ग़ैर-मज़हबी दायरे में भी। यह बन्द ज़ेहन हर क़िस्म की तरक़्क़ी में सब से बड़ी रुकावट है।

ज़्यादा बड़ी वापसी

डाक्टर गोपाल सिंह 29 नवम्बर 1918 को एबटाबाद में पैदा हुए। 8 अगस्त 1990 को नई दिल्ली में उनका देहान्त हुआ। वह कई भाषाएं जानते थे। वह बल्ग़ारिया और ब्रिटिश गाइना में भारत के राजदूत थे। आख़िर में वह

नागालैंड और गोवा के राज्यपाल बने। इसके अतिरिक्त भी बहुत से पदों पर रहे।

डाक्टर गोपाल सिंह ने अपनी मौत से सिर्फ़ चन्द दिन पहले एक लेख लिखा था, जिसमें उन्होंने अपने वे कड़वे अनुभव लिखे हैं जो उन्हें बतौर राज्यपाल हासिल हुए। उनका यह लेख *हिन्दुस्तान टाइम्स* (12 अगस्त 1990) में इस शीर्षक के साथ छपाः An Ex-Governor Speaks Out.

मिसाल के तौर पर उन्होंने लिखा है कि मुझे नागालैंड में राज्यपाल की हैसियत से भेजा गया। नागालैंड में 97 फ़ीसद ईसाई हैं। वहां प्रगति-कार्य रुका हुआ था। मैंने बहुत से काम शुरू कराए। बिजली की सप्लाई का इन्तिज़ाम किया। काग़ज़ की मिल बनवाई, जिस पर 87 करोड़ रुपये ख़र्च हुए। चीनी मिल को तरक़्क़ी दी। एक नई यूनीवर्सिटी क़ायम की। वह लिखते हैं कि मैं राज्य की तरक़्क़ी के लिए मेहनत करने में लगा हुआ था, मगर मैं अपने पद की अवधि पूरी करने से पहले वापस बुला लिया गयाः

But, I was recalled, before time.

डाक्टर गोपाल सिंह गवर्नरी के ओहदे से वापस बुलाए जाने की शिकायत लिख रहे थे, मगर उन्हें मालूम न था कि इसके चन्द दिन बाद वह ख़ुद मौजूदा दुनिया से वापस बुलाए जाने वाले हैं। कैसा अजीब है इंसान का यह मामला। वह एक वापसी को जानता है, मगर दूसरी ज़्यादा बड़ी वापसी की उसे ख़बर नहीं।

हर इंसान जो दुनिया में आया है वह एक दिन यहां से वापस जाने वाला है। आदमी इस दुनिया में इसी लिए पैदा होता है कि वह मर कर दोबारा यहां से चला जाए, वह आख़िरत की दुनिया में अपनी कथनी और करनी का हिसाब देने के लिए हाज़िर कर दिया जाए। यही किसी आदमी का सबसे बड़ा मसला है, मगर यही वह मसला है जिसकी फ़िक्र किसी को नहीं।

दिमाग़ी मेहनत

श्री कमाल अलीग (पैदाइश 1958) ने 1 फ़रवरी 1989 की मुलाक़ात में अपना एक अनुभव बताया। वह पहले सिगरेट पीते थे। 1984 से उन्होंने सिगरेट बिल्कुल छोड़ दी। 1976 से 1981 तक वह शिक्षा के सिलसिले में मुस्लिम यूनिवर्सिटी अलीगढ़ में थे। उस ज़माने में वह 'चेन स्मोकर' थे। एक दिन की बात है। इम्तिहान क़रीब था । वह रात को देर तक पढ़ने में लगे रहे। यहां तक कि रात को एक बजे का वक़्त हो गया। उस वक़्त उन्हें सिगरेट की तलब हुई, देखा तो दियासलाई ख़त्म हो चुकी थी। हीटर भी बिगड़ा हुआ था। एक तरफ़ अन्दर से सिगरेट की सख़्त तलब उठ रही थी, दूसरी तरफ़ कोई ऐसी चीज़ मौजूद न थी, जिससे सिगरेट जलाई जा सके।

क़रीब आधा घंटे तक उनके दिमाग़ पर यह सवाल छाया रहा। वह इसी सोच में पड़े रहे कि सिगरेट को किस तरह जलाया जाए। आख़िर एक तरकीब उनके ज़ेहन में आई। उनके कमरे में बिजली का सौ वाट का बल्ब लटक रहा था। उन्होंने सोचा कि इस जलते हुए बल्ब में अगर कोई हल्की चीज़ लपेट दी जाए तो कुछ देर के बाद गर्म होकर वह जल उठेगी। उन्होंने एक पुराना कपड़ा लिया और उसका टुकड़ा फाड़ कर जलते हुए बल्ब के ऊपर लपेट दिया। क़रीब 5 मिनट गुज़रे होंगे कि कपड़ा जल उठा। कमाल साहब ने फ़ौरन उससे अपना सिगरेट सुलगाया और उससे कश लेने लगे।

इसी का नाम 'दिमाग़ी मेहनत' है। आम लोग मेहनत के नाम से सिर्फ़ शारीरिक मेहनत को जानते हैं। मगर मेहनत की ज़्यादा बड़ी क़िस्म वह है जिसका नाम दिमाग़ी मेहनत है। दुनिया की तमाम बड़ी-बड़ी तरक़्क़ियां वही हैं जो दिमाग़ी मेहनत के ज़रिए हासिल की गई हैं। शारीरिक मेहनत फावड़ा चलाने या हथोड़ा मारने का काम अंजाम दे सकती है। मगर एक साइंटिफ़िक फ़ार्म या एक आधुनिक ढंग का कारख़ाना बनाने का काम सिर्फ़

दिमाग़ी मेहनत के ज़रिए हो सकता है। जिस्मानी मेहनत अगर आपको एक रुपया फ़ायदा दे सकती हो तो आप दिमाग़ी मेहनत के ज़रिए एक करोड़ रुपया कमा सकते हैं। शारीरिक मेहनत सिर्फ़ यह कर सकती है कि वह दौड़ कर बाज़ार जाए और एक दियासलाई ख़रीद लाए और उसके ज़रिए से अपनी सिगरेट सुलगाए। मगर दिमाग़ी मेहनत ऐसी हैरतअंगेज़ ताक़त है जो दियासलाई के बग़ैर आपके सिगरेट को सुलगा दे, जो प्रत्यक्ष आग के बग़ैर आपके घर में उजाला कर दे।

गृहस्थ जीवन

एक शादीशुदा जोड़े से मेरी मुलाकात हुई। उन्हें नसीहत देते हुए मैंने कहा कि वैवाहिक जीवन यह है कि दो व्यक्ति एक गंभीर निर्णय लेते हैं कि वे मिलकर जीवन की साझा यात्रा तय करेंगे। यह यात्रा पूरी तरह से अनुभवों के रूप में गुजरती है। कभी सुखद अनुभव और कभी असुखद अनुभव।

आप दोनों के लिए मेरी नसीहत केवल एक है। जब इस साझा यात्रा में आपको कोई सुखद अनुभव हो, तो उस पर अल्लाह का शुक्र अदा करें और अपनी यात्रा को सकारात्मक सोच के साथ जारी रखें। इसके विपरीत, यदि इस यात्रा में आपको कोई असुखद अनुभव हो, तो उससे कोई सबक लेने की कोशिश करें। क्योंकि हर असुखद अनुभव हमेशा एक नया सबक लेकर आता है। वह इसलिए होता है ताकि आप यात्रा के अगले चरण को और बेहतर तरीके से गुजार सकें।

वैवाहिक जीवन सामूहिकता की इकाई है। आप व्यक्तिगत जीवन अपनी मर्ज़ी के मुताबिक जी सकते हैं। लेकिन सामूहिक जीवन में दूसरों के साथ तालमेल बिठाना ज़रूरी हो जाता है। दूसरों के साथ निभाने का

हुनर सीखे बिना सामूहिक जीवन सफल नहीं हो सकता, चाहे वह वैवाहिक जीवन हो या कोई और सामाजिक जीवन।

वैवाहिक जीवन केवल शादी के लिए नहीं होता। बल्कि वह अनुभव सीखने के लिए होता है। वह इसलिए होता है ताकि व्यक्ति यह सीखे कि दूसरों के साथ सफल जीवन जीने का तरीका क्या है। अनुभव हमेशा कई प्रकार का होता है। अनुभवों के जीवन में सुखद घटनाएं भी आती हैं और असुखद भी। लेकिन हर अनुभव में कोई न कोई सबक अवश्य मौजूद होता है। कभी वह एक नए सिद्धांत की खोज के रूप में होता है, और कभी किसी व्यावहारिक मार्गदर्शन के रूप में, और दोनों निस्संदेह समान रूप से लाभदायक हैं। जिस व्यक्ति का जीवन अनुभव से खाली हो, उसका जीवन बुद्धिमत्ता (wisdom) से खाली होगा।

बड़ा काम

विलियम ब्लैक (William Blake) ने कहा है कि महान काम उस वक़्त होते हैं जबकि इंसान और पहाड़ मिलते हैं। कोई महान काम सड़क पर धक्कम-धक्का करने से नहीं होताः

> Great things are done when man and mountains
> meet. This is not done by jostling in the street.

विलियम ब्लैक की यह बात सौ फ़ीसद सही है। यह एक हक़ीक़त है कि बड़े काम के लिए बड़ा अमल ज़रूरी होता है। पहाड़ों की कठिन चढ़ाई के बाद आदमी चोटी पर पहुंचता है। सड़कों पर शोर-ग़ुल करने या सभाओं में शब्दों के दरिया बहाने से कोई बड़ा मक़्सद कभी हासिल नहीं होता।

हक़ीक़त यह है कि कोई बड़ा अंजाम पाने के लिए ज़रूरी होता है कि हालात को बेहद गहराई के साथ समझा जाए। अपने साधनों और सम्भावनाओं को ध्यान में रखते हुए मन्सूबाबन्दी की जाए। सफ़र शुरू किया जाए तो इस हक़ीक़त को पूरी तरह ध्यान में रखते हुए किया जाए कि रास्ते में दूसरे बहुत से मुसाफ़िर मौजूद हैं।

फिर यह भी ज़रूरी है कि आदमी हर वह क़ुर्बानी दे जो उसका मक़्सद उससे तक़ाज़ा करे। कहीं वह माल की क़ुर्बानी दे और कहीं वक़्त की। कहीं वह राय की क़ुर्बानी दे और कहीं जज़्बात की। कहीं वह दूसरों से अपना मामला तय करे और कहीं वह ख़ुद अपना जायज़ा ले। कहीं वह चले और कहीं जल्दबाज़ी के बावजूद रुक जाए।

पहाड़ की चढ़ाई जैसी मेहनत किए बग़ैर कोई बड़ा काम अंजाम नहीं पाता। हर बड़ा काम अनथक कोशिश चाहता है। ऐसा काम जो इतिहास के रूख़ को मोड़ दे, बेपनाह मेहनत चाहता है। ऐसे काम के लिए अथाह सूझबूझ चाहिए। यही वजह है कि इस क़िस्म का काम वही लोग कर पाते हैं जो हक़ीक़त में पहाड़ की चढ़ाई जैसे अमल का सबूत दें। इसके बरअक्स जो लोग सड़कों पर शोर-ग़ुल करने को काम समझें वे सिर्फ़ समाज में गन्दगी बढ़ाते हैं। वे इतिहास को कोई सच्चा तोहफ़ा देने की सामर्थ्य नहीं रखते।

ख़ुदा सब कुछ

दुनिया के माने हुए गणितिज्ञ सर माइकेल फ्रांसिस अतिया हाल ही में बम्बई आए थे। उन्होंने कहा कि ख़ुदा एक गणितिज्ञ है। ख़ुदा को गणितिज्ञ कहने का नज़रिया नया नहीं है। लगभग 50 साल पहले सर जेम्स जीन्स ने कहा था कि कायनात एक गणितिज्ञ का कारनामा है। इससे भी सदियों पहले पैथागोरस ने

कहा था कि तमाम चीज़ें दरअस्ल गिनतियां हैं। पिकासो के लिए ख़ुदा एक आर्टिस्ट है। उसने कहा, "ख़ुदा हक़ीक़त में दूसरा आर्टिस्ट है। उसने जिराफ़ ईजाद किया। उसने हाथी बनाया, उसने बिल्ली बनाई।" आइन्सटाइन ने कहा था कि ख़ुदा लतीफ़, कोमल व सूक्ष्म है। वह बहुत तेज़ व होशियार है हालांकि वह किसी का बुरा चाहने वाला नहीं:

> The distinguished mathematician, Sir Michael Francis Atiyah, who was recently in Bombay said that "God was a mathematician." The idea of God being a mathematician is not new. About 50 years ago, Sir James Jeans suggested that the universe was the handiwork of a mathematician. And centuries before him Pythagoras said all things are numbers. To Picasso God was an artist. "God is really another artist," he said. "He invented the giraffe, the elephant and the cat." Einstein has said that the Lord is subtle and, though not malicious, very clever.

जो शख़्स भी कायनात को ज़्यादा गहरी नज़र से देखता है, उसको एक चीज़ का निश्चित एहसास होता है कि यहां कोई और है जो सब से बड़ा है, और ख़ुद उसकी अपनी ज़ात से भी। गणितिज्ञ को कायनात में ऐसी ऊंची गणित नज़र आती है, जहां वह अपनी गणित भूल जाता है। वह पुकार उठता है कि ख़ुदा बहुत बड़ा गणितिज्ञ है। एक आर्टिस्ट जब कायनात को अपनी नज़र से देखता है तो यहां उसको इतना बड़ा आर्टिस्ट नज़र आता है कि उसका अपना आर्ट उसकी निगाह में छोटा हो जाता है। और वह कह उठता है कि ख़ुदा सबसे बड़ा आर्टिस्ट है। एक अक़्ल वाला आदमी जब कायनात

पर नज़र डालता है तो वह यह देख कर हैरान रह जाता है कि यहां कोई और है जो तमाम अक़्लों से ज़्यादा बड़ी अक़्ल वाला है।

हक़ीक़त यह है कि ख़ुदा सब से बड़ा गणितिज्ञ, सबसे बड़ा आर्टिस्ट, सबसे बड़ा अक़्लमन्द है और इसी के साथ वह और भी बहुत कुछ है। जो शख़्स कायनात में ख़ुदा के निशान को न देखे वह अन्धा है और जो शख़्स देखकर भी उसको न माने वह पागल है।

अपनी ग़लती

एक साहब का हाल मुझे मालूम है। वह बेहद तन्दुरुस्त थे। अल्लाह तआला ने उन्हें अच्छा ज़ेहन दिया था। मगर वह अपनी ज़िन्दगी में कामयाब न हो सके। उन्होंने जो काम भी किया वह नाकामी पर ख़त्म होता रहा। यहां तक कि उनका मानसिक संतुलन बिगड़ गया। इसी हाल में वह एक दिन सड़क पर एक जीप से टकरा गए। इस हादसे में वह जान से हाथ धो बैठे।

उनकी नाकामी की सादा-सी वजह यह थी कि उन्होंने अपनी प्रतिभा और क्षमताओं को कामयाबी के रास्ते में इस्तेमाल नहीं किया। अपनी नाकामी का ज़िम्मेदार वह हमेशा दूसरों को ठहराते थे। लेकिन सच्चाई यह है कि अपनी नाकामी के वह ख़ुद ही ज़िम्मेदार थे।

उन्होंने स्कूल में दाख़िला लिया। मगर वह मैट्रिक तक पहुंचे थे कि उन्हें पालिटिक्स से दिलचस्पी हो गई। नतीजे में वह दसवीं के इम्तिहान में फ़ैल हो गए। इसके बाद उनकी शिक्षा आगे जारी न रह सकी। उन्होंने एक दुकान शुरू की पर उसका कोई वक़्त तय न था। जिस वक़्त चाहते वह अपनी दुकान खोलते, और जब चाहते उसको बन्द कर देते। नतीजा यह हुआ कि उनकी दुकान ख़त्म हो गई। उन्होंने एक नौकरी की। वह नौकरी

उनकी आकांक्षा से कम थी। इसलिए वह लगातार झुंझलाहट में रहते और अक्सर अपने मालिक से लड़ जाते। आख़िरकार मालिक ने तंग आकर उन्हें नौकरी से निकाल दिया।

इसी तरह वह कई काम करते रहे और कोई भी काम अंजाम तक नहीं पहुंच सका। वह हमेशा दूसरों की शिकायत करते रहते - फलां पक्षपाती है, फलां ने दुश्मनी की वजह से मेरे साथ ऐसा मामला किया है। फलां मुझको तरक़्क़ी करते हुए देखना नहीं चाहता। इसी तरह वह अपनी हर नाकामी को दूसरों के ऊपर डालते रहे। वह सारी ज़िन्दगी दूसरों को ग़लत साबित करते रहे। मगर आख़िरी नतीजा यह हुआ कि वह ख़ुद ग़लत होकर रह गए।

दूसरों को अपनी बरबादी का ज़िम्मेदार ठहराना वैसे तो बहुत अच्छा मालूम होता है। मुश्किल सिर्फ़ यह है कि इसकी क़ीमत बहुत महंगी देनी पड़ती है।

तीन मिनट

9 सितम्बर 1988 की घटना है। वियतनाम एयरलाइन्स का एक हवाई जहाज़ हनोई से उड़ा। उसकी पहली मंज़िल बैंकाक थी, जहां उसको डोन मोंग (Don Muang) एयरपोर्ट पर उतरना था। इस जहाज़ में स्टाफ़ के पांच लोगों को मिला कर कुल 81 मुसाफ़िर थे, जिनमें ग्यारह भारतीय थे।

जहाज़ बैंकाक के क़रीब पहुंच कर नीचे आने लगा। एनाउंसर ने ऐलान किया कि थोड़ी देर के बाद हमारा जहाज़ बैंकाक के हवाई अड्डे पर उतरेगा। जिन मुसाफ़िरों की मंजिल बैंकाक थी, उनके चेहरों पर एक नई रोशनी चमक उठी। हर एक ख़यालों में उन लोगों को देखने लगा जो हवाई अड्डे पर मुस्कराते हुए चेहरे के साथ उसके स्वागत के लिए खड़े हुए थे। हर एक के

ज़ेहन में अपने उस घर का नक़्शा आ गया जहां पहुंच कर वह अपने लोगों के बीच ख़ुशी और सुकून के लम्हे हासिल करेगा।

यह दोपहर से कुछ पहले का वक़्त था। उस वक़्त बैंकाक में तेज़ बारिश हो रही थी। जहाज़ को हवाई अड्डे तक पहुंचने में सिर्फ़ तीन मिनट बाक़ी थे कि ज़बरदस्त कड़क और चमक पैदा हुई। एक चश्मदीद गवाह ने बताया कि ठीक उस वक़्त जहाज़ पर बिजली गिर पड़ी जबकि वह बैंकाक एयरपोर्ट के क़रीब पहुंच चुका था। जहाज़ में फौरन आग लग गई। वह हवाई अड्डे के पास धान के खेत में गिर पड़ा। जहाज़ के 75 मुसाफ़िर उसी वक़्त मारे गए, छः मुसाफ़िर झुलसी हुई हालत में ज़िन्दा बचे, जो इस वक़्त अस्पताल में हैं (*हिन्दुस्तान टाइम्स,* 11 सितम्बर 1988)।

इस तरह की घटनाएं वास्तव में ख़ुदा की निशानी हैं। वह कुछ लोगों की मिसाल की रोशनी में तमाम आदमियों का हाल बताता है। हक़ीक़त यह है कि जो अंजाम ' 'वियतनाम एयरलाइन्स' के मुसाफ़िरों का हुआ वही अंजाम तमाम इन्सानों का होने वाला है। हर आदमी के साथ यह घटना घटने वाली है कि उसके 'जहाज़' पर ठीक उस वक़्त मौत की बिजली गिर पड़े जब कि वह अपनी मंज़िल से सिर्फ़ तीन मिनट के फ़ासले पर हो।

फ़ासिले पर रहो

सड़क पर एक ही वक़्त में बहुत-सी सवारियां दौड़ती हैं। आगे से, पीछे से, दाएं से बाएं से। इसलिए सड़क के सफ़र को सुरक्षित रखने के लिए बहुत से नियम बनाए गए हैं। यातायात के ये नियम (Traffic rules) सड़क के किनारे हर जगह लिखे हुए होते हैं, ताकि सड़क से गुज़रने वाले लोग उन्हें पढ़ें और उनके निर्देश पर अपना सफ़र तय करें।

दिल्ली की एक सड़क से गुज़रते हुए इसी क़िस्म का नियम लिखा हुआ दिखाई दिया। उसके शब्द ये थे–फ़ासला बनाए रखो :

Keep Distance

मैंने उसको पढ़ा तो मैंने सोचा कि इन दो शब्दों में बहुत बड़ी बात कही गई है। यह अपने आप में एक सम्पूर्ण सूझबूझ है। इसका ताल्लुक़ सड़क के सफ़र से भी है और ज़िन्दगी के आम सफ़र से भी। मौजूदा दुनिया में कोई आदमी अकेला नहीं। हर आदमी को दूसरे बहुत से इन्सानों के बीच रहते हुए अपना काम करना पड़ता है। हर आदमी के सामने उसका निजी स्वार्थ है। हर आदमी अपने भीतर एक अहं लिए हुए है। हर आदमी दूसरे को पीछे करके आगे बढ़ जाना चाहता है।

यह स्थिति तक़ाज़ा करती है कि हम ज़िन्दगी के सफ़र में 'फ़ासिले पर रहो' के उसूल को हमेशा पकड़े रहें। हम दूसरे से इतनी दूरी पर रहें कि उससे टकराव का ख़तरा मोल लिए बिना हम अपना सफ़र जारी रख सकें।

इसी सूझबूझ को क़ुरान में ए'राज़ कहा गया है। अगर आप ए'राज़ की इस सूझबूझ पर अमल न करेंगे तो आपका स्वार्थ दूसरे के स्वार्थ से टकरा जाएगा। कहीं आपका एक कड़वा शब्द दूसरे के भड़कने का कारण बन जाएगा, कहीं आपकी असावधानी आपको ग़ैर-ज़रूरी तौर पर दूसरों से उलझा देगी।

इसके बाद वही होगा जो सड़क पर होता है यानी दुर्घटना। सड़क-दुर्घटना आदमी के सफ़र को रोक देती है, कभी-कभी तो ख़ुद मुसाफ़िर की जान ले लेती है। इसी तरह ज़िन्दगी में उपरोक्त नियम पर न चलने का नतीजा यह होगा कि आपकी तरक़्क़ी का सफ़र रुक जाएगा। यह भी हो सकता है कि आप ख़ुद अपनी ज़िन्दगी से हाथ धो बैठें, आप इतिहास के पृष्ठ से एक ग़लत शब्द की तरह मिटा दिए जाएं।

भुलाने की ज़रूरत

खुजली को खुजाने से खुजली बढ़ती है। लेकिन जिस आदमी को खुजली हो वह खुजाए बिना रह नहीं सकता। ऐसा ही कुछ मामला कड़वे अनुभवों का है। कड़वे अनुभवों को याद करना सिर्फ़ अपने नुक़सान को बढ़ाना है। लेकिन ज़्यादातर लोग कड़वे अनुभवों को अपनी यादों से निकालने के लिए तैयार नहीं होते।

इस दुनिया में हर आदमी को कड़वे अनुभवों से गुज़रना पड़ता है। ज़िन्दगी एक तरह से अशोभनीय घटनाओं का दूसरा नाम है। ऐसी हालत में कड़वाहटों और अशोभनीय बातों को याद रखना अपने ज़ेहन पर ग़ैर-ज़रूरी बोझ डालना है। जो घटना अतीत में घटी उसे वर्तमान में याद रखना सिर्फ़ अपने दुख के सिलसिले को जारी रखना है। उसको किसी तरह अक़्लमन्दी नहीं कहा जा सकता।

आप के साथ बुरा बर्ताव दूसरा आदमी करता है, पर उस बुरे बर्ताव की याद ख़ुद आपके बस की चीज़ है। फिर जो कुछ आपके दुश्मन ने किया, वही आप ख़ुद अपने खिलाफ़ क्यों करें।

बीते वक़्त की कड़वाहटों को याद रखना अपने ज़ेहन को अस्त-व्यस्त करना है। वह आदमी की सेहत को बरबाद करता है। वह आदमी से उसका हौसला छीन लेता है। वह आदमी को इस क़ाबिल नहीं रखता कि वह दिल लगाकर अपना काम कर सके। फिर आदमी क्यों अपने आपको इस दुहरे नुक़सान में डाले।

इस दुनिया में कामयाबी हासिल करने की यह ज़रूरी शर्त है कि आदमी भुलाने की आदत डाले। वह बीते हुए कड़वे अनुभवों को भूल जाए। वह खोई हुई चीज़ों के ग़म में अपने आपको न घुलाए। लोगों की उत्तेजक बातों को सुनकर अपने सुकून को बरबाद न होने दे। इसी क़िस्म की तमाम

चीज़ों से बेअसर रह कर अपना काम करना, यह ज़िन्दगी के राज़ों में से एक राज़ है। और जो लोग इस राज़ को जानें वे ही इस दुनिया में कोई सच्ची कामयाबी हासिल करते हैं।

खोए हुए की भरपाई अपने बस में नहीं, पर खोए हुए को भुला देना तो अपने बस में है। अशोभनीय शब्दों के वातावरण से निकालना अपने बस में नहीं, लेकिन यह आपके बस में है कि अशोभनीय शब्दों को अपने ज़ेहन से निकाल दें। फिर आप ऐसा क्यों न करें कि 'नामुमकिन' से अपना ध्यान हटा लें और 'मुमकिन' को पाने में अपना सारा ध्यान लगा दें?

ज़्यादा फ़र्क़ नहीं

एस. आर. रॉबिन्सन (Sugar Ray Robinson) अमरीका के बाक्सिंग के खिलाड़ी थे। उनको सबसे बड़ा बाक्सर (Greatest boxer) कहा जाता है। 14 अप्रैल 1989 को लास एंजेल्स में उनका देहांत हो गया। देहांत के वक़्त उनकी उम्र 67 साल थी। अपने 25 साल के कैरियर में उन्होंने 201 मुक़ाबलों में हिस्सा लिया। उनमें से 174 मुक़ाबलों में वह कामयाब रहे।

बाक्सिंग में रॉबिन्सन का कमाल इतना बढ़ा हुआ था कि वर्ल्ड चैम्पियन मुहम्मद अली ने भी उनकी महानता को माना। मुहम्मद अली ने टेलीफ़ोन पर रायटर के संवाददाता को बताया कि रॉबिन्सन सब में ज़्यादा बड़ा (सर्वकालीन सर्वश्रेष्ठ) फ़ाइटर था। वह अकेला शख़्स है जो कि मुझसे बेहतर था। उसके न रहने का मुझे एहसास रहेगा:

> He was the greatest fighter of all time. He’s the only one who was better than me. I’ll miss him.

रॉबिन्सन दिल के मरीज़ थे। अपनी ज़िन्दगी का आख़िरी साल उन्होंने आराम कुर्सी पर गुज़ारा। आख़िरी उम्र में बीमारी की वजह से उनकी याददाश्त ख़त्म हो गई थी। अपने चोटी के दिनों को वह बिल्कुल भूल चुके थे। वह अपने अतीत को याद करने के क़ाबिल नहीं रहे थे:

> He spent the last years of his life confined to an armchair, his memories of his glory days taken away by Alzheimer's disease. He could no longer remember the past.

यही मौजूदा दुनिया में हर आदमी का हाल है। एक शख़्स हर क़िस्म की जद्दोजहद और क़ुर्बानी के बाद ऊंचाई का मुक़ाम हासिल करता है। मगर ऊंचाई पर रहने के ये दिन सिर्फ़ उसकी यादों में होते हैं। अगर बुढ़ापा या बीमारी या हादसा उसकी याद को उससे छीन ले तो उसकी अज़मत और महानता के तमाम क़िस्से उसके लिए ग़ैर-मौजूद हो जाएंगे।

जो महानता इतनी बेक़ीमत हो उसकी क्या वास्तविकता? उसका पाना भी उतना ही बेहक़ीक़त है, जितना उसका न पाना। यहां मिलने और न मिलने में बहुत ज़्यादा फ़र्क नहीं।

अख़लाक़ का फल

बदरुद्दीन अहमद (पैदाइश 1938) मुरादाबाद के रहने वाले हैं। उन्होंने मुरादाबाद के फ़साद के बारे में कई सबक़ लेने लायक़ घटनाएं बताईं। यह फ़साद 13 अगस्त 1980 को शुरू हुआ था और रुक-रुक कर अगले महीने तक जारी रहा।

फ़साद के दौरान कर्फ़्यू लगा हुआ था। हर तरफ़ ख़राब हालात थे।

लोगों के घरों में खाने-पीने की चीज़ें ख़त्म हो गई थीं। बदरुद्दीन साहब ने बताया कि उस ज़माने में हम लोगों को दूध नहीं मिलता था। इसलिए हम लोग बग़ैर दूध की चाय और गर्म पानी करके पी लिया करते थे।

पुलिस के एक अफ़सर मिस्टर शर्मा ने एक मकान से पीतल के कुछ खिलौने (शो पीस) ख़रीदे। उसको इन खिलौनों पर पालिश करवाना था, वह पालिश के लिए बद्रुद्दीन साहब के यहां आया। उन्होंने खिलौनों पर पालिश कर दी, मगर उसका कोई पैसा नहीं लिया।

इस अख़्लाक़ का नतीजा यह हुआ कि पुलिस अफ़सर जब रोज़ाना राउंड पर निकलता तो बदरुद्दीन साहब के यहां अपनी गाड़ी रोक कर उतरता और हाल पूछता कि कोई परेशानी तो नहीं है। हमारी कोई ज़रूरत हो तो बताइए। इस तरह वह रोज़ाना कम से कम एक बार आता रहा।

एक दिन मिस्टर शर्मा आए तो बदरुद्दीन साहब अपने छोटे बच्चे (नजमुद्दीन अहमद) को गोद में लिए हुए थे। मिस्टर शर्मा ने पूछा कि यह बच्चा तो दूध पीता होगा? बदरूद्दीन साहब ने कहा कि हां। मिस्टर शर्मा ने कहा कि फिर आपको दूध मिलने में कोई परेशानी तो नहीं? बदरूद्दीन साहब ने कहा कि परेशानी तो है, इसलिए कि कर्फ़्यू लगा हुआ है। उसके बाद मिस्टर शर्मा चले गए। अगले दिन आए तो उनके साथ ग्लैक्सो मिल्क के दो डिब्बे भी थे। उन्होंने ये दोनों डिब्बे बदरुद्दीन साहब को देते हुए कहा, “यह आपके बच्चे के लिए मेरी तरफ़ से तोहफ़ा है।”

अख़लाक़ के अन्दर अल्लाह तआला ने सबसे ज़्यादा तस्ख़ीरी (सम्मोहक) ताक़त रखी है। यह ताक़त इतनी ज़्यादा है कि वह किसी को भी अपने असर में ले लेती है। अख़्लाक़ एक ऐसा ख़ामोश हथियार है जो हर आदमी पर कारगर साबित होता है, यहां तक कि कट्टर दुश्मन के ऊपर भी।

ख़ाली ज़िन्दगी

सॉल्ज़ेनित्सिन (Aleksandr Solzhenitsyn) एक रूसी उपन्यासकार है। उसको रूस की जनता के दुखों का एहसास हुआ और उसको उसने अपनी कहानियों में प्रतीकों के रूप में उजागर करना शुरू किया। नतीजे में यह रूस की कम्युनिस्ट सरकार की नज़र में नापसंदीदा आदमी बन गया। उसने अपना वतन छोड़ कर अमरीका में शरण ले ली। वह अमरीका की एक बस्ती (Vermont) में ख़ामोशी की ज़िन्दगी गुज़ारने लगा और अपने विचारों को किताबों के रूप में प्रकट करने लगा।

मई 1982 में सॉल्ज़ेनित्सिन को अमरीकी सरकार का एक निमंत्रण मिला। उसके सम्मान में वाशिंगटन के व्हाइट-हाउस में एक सरकारी समारोह आयोजित हो रहा था, जिसमें दूसरे प्रतिष्ठित लोगों के अलावा अमरीकी राष्ट्रपति भी मौजूद होते। इतना ही नहीं इस बीच अमरीकी राष्ट्रपति और सॉल्ज़ेनित्सिन के बीच पन्द्रह मिनट की एक ख़ास मुलाक़ात भी शामिल थी।

साल्ज़ेनित्सिन ने अमरीकी राष्ट्रपति के नाम 3 मई 1982 को एक जवाबी पत्र लिखा और इस समारोह में शामिल होने में असमर्थता जताई। उसने लिखा कि ज़िन्दगी के जो थोड़े बहुत क्षण मेरे पास रह गये हैं, वे मुझे इस बात की इजाज़त नहीं देते कि मैं रस्मी मुलाक़ातों में अपना वक़्त व्यर्थ करूं:

> The life span at my disposal does not leave any time for customary meetings.

सॉल्ज़ेनित्सिन के सामने एक स्पष्ट उद्देश्य था—रूसी जनता के दुःखों से भरी ज़िंदगी को उपन्यास के रूप में प्रस्तुत करना। यह मक़सद उसकी ज़िंदगी पर इस कदर हावी हो गया कि उसे अमेरिका के राष्ट्रपति का निमंत्रण

भी ठुकराना पड़ा। आदमी के सामने अगर कोई निश्चित उद्देश्य हो तो उसका यही हाल होता है।

लेकिन जब आदमी की ज़िन्दगी उद्देश्य से ख़ाली हो जाए तो उसकी नज़र में अपने वक़्त की कोई क़ीमत नहीं रहती। वह अपना अन्दाज़ा ख़ुद अपनी राय से करने के बजाय दूसरों की राय से करने लगता है। वह रस्मी सभा-समारोहों की शोभा बनता रहता है। वह अपने लक्ष्य के लिए जीने के बजाय दूसरों के लिए जीने लगता है। यहां तक कि उसकी उम्र पूरी हो जाती है। देखने में व्यस्तताओं से भरी हुई एक ज़िन्दगी इस तरह गुज़र जाती है कि उसके पास एक ख़ाली ज़िन्दगी के सिवा कोई पूंजी नहीं होती।

सृष्टि की संभावनाएं

लोहे का एक टुकड़ा चुम्बक के पास ले जाएं तो लोहा अपने आप चुम्बक की तरफ़ खिंच उठेगा। यह एक सादा-सी मिसाल है जिससे अन्दाज़ा होता है कि सृष्टि की हर चीज़ में ईश्वर ने कुछ ख़ास गुण (properties) रख दिए हैं। इन्हीं गुणों की वजह से यह हो सका कि आदमी इन चीज़ों को विभिन्न रूपों में बदल कर उन्हें अपने मक़्सद के लिए इस्तेमाल करे और अपने लिए एक शानदार सभ्यता का निर्माण कर सके। आख़िरत (परलोक) सृष्टि की इन्हीं संभावनाओं का विस्तार है। सृष्टि की संभावनाएं आज 'सभ्यता' का रूप धारण कर रही हैं। यही संभावनाएं जब 'जन्नत' का रूप धारण कर लें तो उसी का नाम आख़िरत है।

सभ्यता (तमद्दुन) वह रचनात्मक नतीजा है जो इंसान की कोशिशों से प्रकट होता है। स्वर्ग वह रचनात्मक दुनिया है जो ख़ुदा के फ़रिश्तों के ज़रिए

आख़िरी स्तरीय रूप में बनाई जाएगी। पहली घटना मौजूदा दुनिया में हो रही है, दूसरी घटना आने वाली आख़िरत की दुनिया में होगी।

हज़ार साल पहले इंसान ने जो घोड़ा गाड़ी बनाई, वह भी सृष्टि की संभावनाओं का एक इस्तेमाल था। आज का इंसान जो ऑटोमैटिक मोटर कार बनाता है वह भी सृष्टि की संभावनाओं का एक इस्तेमाल है। हालांकि दोनों में बहुत ज़्यादा फ़र्क़ है। इसी तरह इन संभावनाओं का एक और ज़्यादा बड़ा इस्तेमाल अभी बाक़ी है, और वह जन्नती दुनिया का निर्माण है। यह आख़िरी दुनिया मौत के बाद आने वाली ज़िन्दगी में बनाई जाएगी। यह उन ख़ुशनसीब लोगों को मिलेगी जिन्होंने मौजूदा इम्तिहान की ज़िन्दगी में अपने अन्दर इसकी योग्यता पैदा की हो।

प्रकृति की संभावनाओं का बार-बार बेहतर दुनिया में ढल जाना एक ऐसा तथ्य है, जिसका तजुर्बा आज ही इंसान को हो रहा है। इससे साबित होता है कि प्रकृति की ये संभावनाएं और ज़्यादा बेहतर दुनिया में ढल सकती हैं। वे एक नई, शानदार और बेहतर दुनिया की रचना कर सकती हैं। इस ज्ञात संभावना को जब मज़हब की ज़ुबान में व्यक्त किया जाए तो इसी का नाम जन्नत है।

सब्र का हथियार

6 सितंबर 1980 की बात है। श्रीमती कमलेश (22 साल) शाहदरा (दिल्ली) की एक सड़क पर चल रही थीं। उनके गले में सोने की जंजीर थी। अचानक अशोक नाम का एक व्यक्ति जिसकी उम्र 25 साल थी झपटा और श्रीमती कमलेश की जंजीर खींच कर भागा। पुलिस कांस्टेबिल किशन चंद त्यागी (42 साल) उस वक़्त ड्यूटी पर घूम रहे थे। किसी ने उनको इस घटना की

सूचना दी। वह तलाश करते हुए एक वाल्मीकि मंदिर में पहुंचे, जहां मुजरिम मौजूद था। पुलिस की वर्दी देखते ही वह उठ खड़ा हुआ। किशन चंद ने उसका पीछा किया। मुजरिम के पास एक रिवाल्वर था। उसने फ़ायर किया तो उसकी गोली किशन चंद की आंख के नीचे उनके चहरे और गर्दन को ज़ख्मी करती हुई गुज़र गई। उन्होंने चिल्ला कर कहा, "एक बार तूने मुझे मार दिया, पर दोबारा तू नहीं मार सकता। मुझे मालूम नहीं था कि तेरे पास रिवाल्वर है।" अब वह चौकन्ना हो गए। मुजरिम ने दोबारा गोली चलाई। पर हर बार वह निहायत फ़ुर्ती के साथ बैठ गया और उसके वार को ख़ाली कर दिया। किशन चंद बिना किसी डर के अकेले मुजरिम का पीछा करते रहे, जबकि 'दुश्मन' के पास रिवाल्वर था और उनके अपने पास लाठी भी नहीं थी। दौड़ते-दौड़ते आख़िरकार साढ़े चार फुट की एक चारदीवारी सामने आ गई। मुजरिम उस के पार कूद गया। किशन चंद ने भी फौरन छलांग लगाई और दूसरी तरफ़ जाकर उसको पकड़ लिया।

"एक सशस्त्र मुजरिम को दौड़ाते हुए आपको डर नहीं लगा?" एक अख़बार के संवाददाता ने किशन चंद से पूछा। "नहीं।" उन्होंने जवाब दिया, "मैं जानता था कि जब उसका रिवाल्वर ख़ाली हो चुका होगा तो मैं उसको पकड़ लूंगा।" मुजरिम के पास तीन गोलियां थीं। किशन चंद ने बहुत होशियारी के साथ उसकी तीनों गोलियां ख़ाली करा दीं। फिर मुजरिम को उन्होंने पकड़ लिया (*हिन्दुस्तान टाइम्स* 1980)।

इस छोटी-सी घटना में बहुत बड़ा सबक़ है। ज़्यादातर प्रतिद्वंद्वी से मुक़ाबले का बेहतरीन तरीक़ा यह होता है कि शुरू में उसके वार को ख़ाली कर दिया जाए, यहां तक कि उसके हथियार की 'तीन गोलियां' ख़त्म हो जाएं। फिर उससे मुक़ाबला करना निहायत आसान होगा। मसलन एक व्यक्ति आपसे ज़्यादा ताक़तवर है और वह आपकी किसी बात पर उत्तेजित हो जाता है। जब वह आप पर बिगड़ना शुरू करे तो पहले आप उसके वार

को ख़ाली करने की कोशिश करें, यानी बिल्कुल चुप होकर उसकी बात सुनते रहें, यहां तक कि जब उसके शब्द ख़त्म हो जाएं और उसकी भड़ास निकल जाए उस वक़्त गंभीरता के साथ स्थिति के बारे में उसको बताएं। अगर आप शुरू में इस किस्म का सब्र दिखाएं तो आप निश्चित रूप से सफल रहेंगे क्योंकि अब वह अपने हथियार की तीन गोलियां ख़त्म कर चुका हैं और अब बहुत आसानी के साथ उसका मुक़ाबला किया जा सकता है।

इसी तरह कुछ लोग हैं, जो आपके ख़िलाफ़ एकजुट होकर आ गए हैं और आपको मिटा देना चाहते हैं। ग़ौर कीजिए तो यह एकजुटता सिर्फ़ इस आधार पर होगी कि आप उनके सामने उनके प्रतिद्वंद्वी बनकर खड़े हुए हैं। अगर आप सूझ-बूझ का तरीक़ा इख़्तियार करें और कुछ देर के लिए अपने को निशाने से हटा दें तो आप देखेंगे कि उनकी एकजुटता टूट रही है। उनकी एकजुटता के हथियार की गोली आपका प्रतिद्वंद्वी बनकर खड़ा होना था। जब आपने अपने को प्रतिद्वंद्वी के मुकाम से हटा दिया तो जैसे आपने उनकी तीनों गोलियां ख़ाली करा दीं। अब वे अपने आप बिखर जाएंगे और जो गिरोह मतभेद और फूट में पड़ जाए उसको ख़त्म करने के लिए कुछ करने की जरूरत नहीं। ऐसा गिरोह ख़ुद अपने ही हाथों अपने को ख़त्म कर लेता है।

कोई प्रतिद्वंद्वी जब सामने आता है तो आदमी जोश में आकर उससे लड़ने लगता है। नतीजा यह होता है कि पहले ही चरण में वह प्रतिद्वंद्वी की ताक़त का निशाना बन जाता है। अगर आदमी सब्र और सूझबूझ से काम ले और मुक़ाबले के पहले ही चरण में प्रतिद्वंद्वी के वार को ख़ाली जाने दे तो बहुत जल्द ऐसा होगा कि प्रतिद्वंद्वी ख़ुद अपनी कार्रवाइयों के नतीजे में अपने को शस्त्रहीन कर चुका होगा। याद रखिए, कोई भी शख़्स जो आपके मुक़ाबले में आता है उसके पास हमेशा 'तीन' ही गोलियां होती है। अनगिनत गोलियां किसी के पास नहीं होतीं। अगर आप यह होशियारी

दिखाएं कि मुक़ाबले की शुरूआत में किसी तरह अपने को निशाने से हटा लें तो इसके बाद निश्चित रूप से ऐसा होगा कि दुश्मन अपनी 'तीन गोलियों' को ख़त्म करके ख़ाली हाथ हो चुका होगा। अब ज़्यादा बेहतर तौर पर वह वक़्त आ जाएगा कि आप उसको परास्त कर सकें। यह कामयाबी हर प्रतिद्वंद्वी और हर शत्रु के ऊपर हासिल की जा सकती है। बशर्ते कि मुक़ाबले के दौरान आदमी अपने होशो-हवास न खोए।

ख़ुदा जल्दी नहीं चाहता

एक शख़्स अपने ईसाई दोस्त से मिलने गया। जब वह दोस्त के यहां पहुंचा तो उसने देखा कि वह अपने घर के सामने बेताबी से टहल रहे हैं। "आज मैं आपको परेशान देख रहा हूं। आख़िर बात क्या है?" उसने पूछा। ईसाई दोस्त अचानक संजीदा हो गए। उन्होंने कहाः

I am in hurry, but God isn't.

मैं जल्दी में हूं, पर ख़ुदा जल्दी में नहीं है। उसके बाद उन्होंने अपने आंगन में एक मुरझाए हुए आम के पेड़ की तरफ़ इशारा करते हुए कहा, "मैंने इसको बड़ी उम्मीदों के साथ पिछले हफ़्ते लगाया था। पर अब वह सूख कर ख़त्म हो चुका है।"

"यह पेड़ तो काफ़ी बड़ा है, फिर एक हफ़्ते पहले कैसे आपने इसे लगा लिया था?" आदमी ने पूछा "यही तो असली बात है", ईसाई दोस्त ने कहा, "मैंने चाहा कि मैं अचानक एक बड़ा पेड़ अपने यहां खड़ा कर दूं। पर ख़ुदा की इस दुनिया में ऐसा होना मुमकिन नहीं। मैंने आम का छोटा पौधा बोने के बजाए यह चाहा कि पांच साल का पेड़ लाकर अपने आंगन में लगाऊं

और इस तरह पांच साल का सफ़र एक दिन में तय कर लूं। मैंने पेड़ तो कहीं न कहीं से लाकर लगा लिया, पर वह अगले ही दिन सूख गया। और अब उसकी जो हालत है वह तुम अपनी आंखों से देख रहे हो।

इसके बाद ईसाई देस्त ने कहा, “इस दुनिया में किसी चीज़ को अस्तित्व में लाने के लिए ख़ुदा का एक क़ानून है। हम उस क़ानून का पालन करके ही उस चीज़ को अपने लिए अस्तित्व में ला सकते हैं। अगर हम क़ुदरत के उसूल की पैरवी न करें और अपनी इच्छाओं पर चलने लगें तो हमारे हिस्से में ‘सूखा पेड़’ आएगा न कि ‘हरा-भरा बाग़।

लकड़ी की एक नाव का इतिहास अगर छोटे पौधे से शुरू किया जाए तो हम कह सकते हैं कि हर नाव वाला इंतिज़ार करता है कि प्रकृति एक पेड़ उगाए, ज़मीन और आसमान की तमाम व्यवस्थाएं उसके विकास के लिए अपना योगदान दें। यह काम सौ वर्ष तक होता रहे। यहाँ तक कि जब निरंतर विकास के नतीजे में नन्हा पौधा पूरे एक पेड़ की उम्र को पहुंच जाता है। उस वक़्त नाव वाला उसको काटता है। उसके तख़्ते बनाता है और फिर उन तख़्तों को लोहे की कीलों से जोड़ कर वह नाव तैयार करता है, जो इंसानों को पानी के ऊपर सफ़र करने के काबिल बनाए।

निजी मामलों में हर आदमी इस बात को जानता है। पर जब समाज व मिल्लत का मामला हो तो वह चाहता है कि जल्दी से एक शानदार नाव नदी में उतार दे। चाहे उसके पास नाव के नाम पर काग़ज़ की नाव ही क्यों न हो। याद रखिए, यह दुनिया ख़ुदा की दुनिया है। इसको ख़ुदा ने बनाया है। और वह उसी ख़ुदा के क़ानून के तहत चल रही है। हम उसके साथ तालमेल करके ही अपनी ज़िन्दगी का निर्माण कर सकते हैं। अगर हम उसके साथ तालमेल न करें तो हमें इस दुनिया में कुछ मिलने वाला नहीं।

जिस तरह पेड़ का क्रमिक विकास होता है, उसी तरह इन्सानी ज़िन्दगी के मामले भी क्रमशः और आहिस्ता-आहिस्ता विकसित होते हैं। अगर

आप अपनी ज़िन्दगी का निर्माण करना चाहते हैं तो सबसे पहले क़ुदरत के इस क्रमबद्ध क़ानून को जानिए और उसके साथ तालमेल करते हुए अपना सफ़र शुरू कीजिए। इसके सिवा इस दुनिया में कामयाबी का कोई रास्ता नहीं। बाक़ी तमाम रास्ते खड्ड की तरफ़ जाते हैं न कि किसी मंज़िल की तरफ़।

क़ुरआन में बार-बार सब्र की सीख दी गई है। सब्र का मतलब बे-अमली या निष्क्रियता नहीं है, सब्र दरअसल योजनाबद्ध कार्य का दूसरा नाम है। बेसब्र आदमी तुरंत प्रतिक्रिया के तहत बेसोचे-समझे कार्रवाई करता है। इसके उलट सब्र वाला आदमी अपने जज़्बात और भावनाओं को रोक कर पूरे मामले पर सोच-विचार करता है। वह अपनी ताक़त और दूसरे की ताक़त का अन्दाज़ा करता है। वह हालात का जायज़ा लेता है। वह क़ुदरत के क़ानून को समझता है, जिसके दायरे में उसको अपना अमल करना है।

इसी तरह सोच-विचार के बाद काम का नक़्शा बनाने के लिए अपनी भावनाओं को लगाम देनी पड़ती है, इसलिए इसको इस्लाम में सब्र कहा गया है। मौजूदा ज़माने में इसी को मन्सूबाबन्द अमल या योजनाबद्ध कार्य कहते हैं। इस दुनिया में सब्र वाला अमल हमेशा कामयाब होता है, और बिना सब्र वाला अमल हमेशा नाकाम।

फ़र्ज़ी तस्वीर

पाकिस्तान के अख़बार *'नवा-ए-वक़्त'* (1 अप्रैल 1990) ने लिखा है, "साबिक़ एयर मार्शल असगर खां ने कहा है कि इस्लामी जम्हूरी इत्तिहाद और मुस्लिम लीग दोनों जमाअतें अपने-अपने जलसों की वीडियो फ़िल्में

बना कर अमरीका भेज रही हैं, ताकि अमरीका को समझा सकें कि हमारा जलसा बड़ा था, इसलिए पाकिस्तानी अवाम की हिमायत हमें हासिल है।

लेकिन हॉलीवुड अमेरिका में है, जहां स्टंट फ़िल्में बनाई जाती हैं। इसलिए, अमेरिका यह अच्छी तरह जानता है कि कैमरा ट्रिक की मदद से चंद सौ लोगों की भीड़ को लाखों में बदला जा सकता है, और पानी की किसी छोटी-सी नाली को कैमरे के जरिए दरिया की शक्ल दी जा सकती है। ऐसे में, अगर ये वीडियो फिल्में अमेरिका भेजी भी जाएं, तो वह उन पर भरोसा नहीं करेगा। बल्कि, वह खुद अपने कैमरामैनों द्वारा बनाई गई फिल्मों को देखेगा और अपने दूतावासों की रिपोर्ट पढ़कर ही कोई फैसला करेगा। (पेज 10)

यह समीक्षा मैंने अख़बार में पढ़ी तो अचानक मुझे याद आया कि बहुत से लोग आख़िरत के मामले में भी वही अमल कर रहे हैं, जो आज के समय में बहुत सी पार्टियाँ अपनी दुनिया के मामले में कर रही हैं।

बहुत से लोग अपनी हैसियत और अपने काम के बारे में बढ़ा-चढ़ा कर तस्वीरें बनाते हैं। उनका सूचना-प्रसारण विभाग इस क़िस्म की रिपोर्टें तैयार करने और छापने में व्यस्त है, जिनको पढ़ कर लोग समझें कि वह हिमालयाई क़िस्म की धार्मिक सेवा कर रहे हैं।

मगर खुदा के यहां किसी की धार्मिक हैसियत का फ़ैसला उसकी अपनी रिपोर्टों पर नहीं होगा, बल्कि उस रिपोर्ट पर होगा, जो फ़रिश्तों ने उसके बारे में तैयार की होगी और फ़रिश्ते जो रिपोर्टें तैयार करते हैं, वह सच्चाई के ठीक मुताबिक़ होती हैं, न उससे कम और न उससे ज़्यादा।

हर शख़्स को जानना चाहिए कि उसका मामला आख़िरी तौर पर जहां पेश होना है वह ख़ुदा है। आदमी अगर ख़ुदा के सामने कामयाब साबित न हो सके तो इन्सानों के सामने कामयाब होना इतना अर्थहीन है कि उसकी

क़ीमत उस सियाही के बराबर भी नहीं, जो बढ़ा-चढ़ा कर उसकी तस्वीर बनाने के लिए इस्तेमाल की गई थी।

दृष्टिकोण की अहमियत

अमरीका की एक संस्था ने अपने जायज़े (*टाइम्स ऑफ इंडिया*, अक्तूबर 1989) में पाया है कि उनके सवाल नामे का जवाब देने वाले अमरीकियों में 63 फ़ीसद ऐसे लोग थे जिनका ख़याल था कि अमरीका की विदेशनीति के लिए सबसे बड़ा चैलेंज अब सोवियत यूनियन का फ़ौजी ख़तरा नहीं है, बल्कि सबसे बड़ा चैलेंज वह आर्थिक ख़तरा है, जो जापान जैसे मुल्कों की तरफ़ से पेश आ रहा है:

> A recent survey by the American Insight Group of Cambridge found that 63 per cent of their respondents felt that the biggest foreign policy challenge is no longer a military threat from the Soviet Union, but an economic threat from countries like Japan.

मगर दौलत और ताक़त का इतना बड़ा भंडार जमा कर लेने के बावजूद जापान विश्व स्तर पर वह अहमियत हासिल न कर सका जो उसे हासिल करनी चाहिए। इसकी वजह क्या है? इसकी वजह यह है कि जापान के पास नज़रिया नहीं। यही बात है जो अमरीकी बैंकर मिस्टर मर्फ़ी (W. Taggart Murphey) ने जापान के बारे में यह टिप्पणी की कि वह एक ऐसी समाज है जिसकी ताक़त तो है, लेकिन कोई स्पष्ट उद्देश्य नहीं—Power without

purposeI उनके अनुसार, जापान के पास दुनिया को देने के लिए कुछ खास नहीं है, सिवाय अपने बारे में एक विशेष और अनोखी छवि की धारणा के:

> Japan has nothing to offer the world, only the idea of its uniqueness.

सियासी ताक़त या फ़ौजी ताक़त ऊपर से बहुत बड़ी चीज़ मालूम होती। मगर हक़ीक़त यह है कि नज़रिए की ताक़त इससे भी ज़्यादा बड़ी है। भौतिक ताक़त नज़रिए के बग़ैर बेहक़ीक़त है। जबकि नज़रिए का मामला यह है कि वह भौतिक ताक़त के बग़ैर भी अटूट ताक़त की हैसियत रखता है। जिस गिरोह के पास एक नज़रिया हो जो इन्सानों को एक ऊंचे उद्देश्य की अवधारणा दे सकता हो, वह सबसे बड़ी चीज़ का मालिक है। वह ख़ुद अपनी बुनियाद पर खड़ा हो सकता है, वह हर चैलेंज का मुक़ाबला करके आगे बढ़ सकता है। नज़रिया दूसरी चीज़ों पर नेतृत्व करता है, दूसरी चीज़ें, नज़रिए के ऊपर नेतृत्व नहीं कर सकतीं।

इंसान की महानता

स्टीफ़न हॉकिंग 1942 में अमरीका में पैदा हुआ। एम.एस.सी. करने के बाद वह पी-एच.डी. के लिए रिसर्च कर रहा था कि उस पर एक ख़तरनाक बीमारी का हमला हुआ। अपने हालात बताते हुए उसने लिखा है कि मैं रिसर्च का एक छात्र था। मैं बेहद निराशा के साथ इस इंतिज़ार में था कि मुझे पी-एच.डी. की थीसिस पूरी करनी थी। दो साल पहले डाक्टरों ने बताया था कि मुझे एक जानलेवा बीमारी हो चुकी है और मेरे पास अब ज़िन्दा रहने के लिए सिर्फ़ एक साल या दो साल और हैं। इन हालात में मेरे लिए पी-एच.डी.

पर काम करने का ज़्यादा वक़्त नहीं था। क्योंकि मैं इतने समय तक ज़िन्दा रहने की उम्मीद नहीं कर सकता था। मगर दो साल गुज़रने पर भी मेरा हाल ज़्यादा ख़राब नहीं हुआ था। हक़ीक़त यह है कि मेरी हालत पहले से बेहतर होती जा रही थी:

> I was a research student desperately looking forward to completing my Ph.D. thesis. Two years before, I had been diagnosed as suffering from ALS, commonly known as Lou Gehrig's disease, or motor neuron disease, and given to understand that I had only one or two more years to live. In these circumstances, there did not seem to be much point in working on my Ph.D.— I did not expect to survive that long. Yet two years had gone by, and I was not that much worse. In fact, things were going rather well for me. Stephen W. Hawking, *A Brief History of Time,* p. 53.

डाक्टरों के अन्दाज़े के ख़िलाफ़ स्टीफ़न हॉकिंग ज़िन्दा रहा। उसने अपनी तालीम मुकम्मल की। उसने अपनी मेहनत से इतनी योग्यता पैदा की कि कहा जाता है कि वह आइन्सटाइन के बाद सबसे बड़ा भौतिक वैज्ञानिक है। आज वह कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी में गणित का प्रोफ़ेसर है। यह वह कुर्सी है जो अब तक सिर्फ़ बड़े वैज्ञानिकों को दी जाती रही थी। उसकी सिर्फ़ एक किताब (ए ब्रीफ़ हिस्ट्री ऑफ़ टाइम) 1988 में छपी तो वह इतनी लोकप्रिय हुई कि पहले ही साल उसके चौदह एडीशन छापे गए।

इंसान की मानसिक क्षमताएं उसकी हर कमज़ोरी की क्षतिपूर्ति हैं।

उसकी इच्छा शक्ति हर क़िस्म की रुकावटों पर हावी हो जाती है। वह हर नाकामी के बाद अपने लिए कामयाबी का नया रास्ता निकाल लेता है।

जीव वैज्ञानिक भाईचारा

सारी इन्सानियत एक है या आदम की सारी संतान एक है- इस सच्चाई का एलान चौदह सौ साल पहले पैग़म्बरे इस्लाम ने किया था. अब आधुनिक खोजों के नतीजे में वह एक वैज्ञानिक सच्चाई बन चुकी है।

मौजूदा समय में आणविक जीव विज्ञान ? (Molecular Biology) ने बहुत तरक़्क़ी की है। डी एन ए (DNA) के ज़रिए गहरे नस्ली रहस्यों को जानना मुमकिन हो गया है। अमरीका में आनुवंशिकी विशेषज्ञों (Geneticists) की एक टीम ने यह काम अपने ज़िम्मे लिया कि वह इंसान के पूर्वज (Common ancestor) की खोज करें। डी एन ए की पद्धति से पहले बाप (Great grandfather) की खोज करना ज़्यादा मुश्किल था। उन्होंने पहली मां (Great grandmother) का पता लगाने में अपना पूरा ध्यान केन्द्रित कर दिया।

इन जीव वैज्ञानिकों ने विभिन्न क्षेत्रों की 147 गर्भवती औरतों को तैयार किया कि वे अपने अजन्मे बच्चे के बीजाण्डासन (Placentas) उन्हें प्रदान करें। इन बीजाण्डासनों पर कई साल तक अमरीका की एयरकंडीशंड प्रयोगशालाओं में ये वैज्ञानिक प्रयोग करते रहे, जो बर्कले में स्थित थीं। उन्होंने इनसे जिस्मानी ऊतकों (Body Tissue) के नमूने निकाले और उन पर तरह-तरह के प्रयोग किए।

आख़िरकार उन्होंने घोषणा की कि उन्होंने पहली औरत (First Woman) या धार्मिक शब्दावली में ‘हव्वा’ (Eve) को खोज निकाला।

वैज्ञानिकों के अनुसार यह औरत 200 हज़ार साल पहले धरती पर आबाद थी। वह तमाम इन्सानों की मां (Great grandmother) है। वह हम सब की लगभग 10,000 वीं दादी है।

रिसर्च से पता चलता है कि वे तमाम बाहरी फ़र्क़ जिनके आधार पर नस्ली भेदभाव या ऊंची नस्ल और नीची नस्ल की धारणा बनाई गई थी, बे-बुनियाद और सतही थे। मिसाल के तौर पर त्वचा का रंग महज़ आबो-हवा से अनुकूलता का नतीजा होता है। अफ्रीका में काला रंग सूरज से बचाव के लिए है और युरोप में सफेद रंग पराबैंगनी (अल्ट्रा-वायलेट) किरणों को जज़्ब करने के लिए है, जिससे विटामिन डी के निर्माण में सहायता मिलती है। त्वचा का रंग बदलने में सिर्फ़ कुछ हज़ार साल लगते हैं:

> Skin colour, for instance, is a minor adaptation to climate, black in Africa for protection from the sun. White in Europe absorbs ultraviolet radiation that helps produce vitamin D. It takes only a few thousand years of evolution for skin colour to change (Best Science Writing: Readings & Insights, p. 43).

वैज्ञानिकों ने अपनी खोजों के आधार पर घोषणा की है कि तमाम बच्चों के डी एन ए आख़िरकार एक औरत तक जा पहुंचते हैं। पहली नज़र में यह बात अविश्वसनीय और अकल्पनीय लग सकती है कि तमाम इन्सानों का जीव वैज्ञानिक आधार केवल एक औरत थी। पर यह संभाव्यता के नियमों के तहत प्राप्त होने वाला एक स्थापित नतीजा है:

> All the babies' DNA could be traced back, ultimately, to one woman... At first glance, it may seem inconceivable that the source of all

> mitochondrial DNA was a single woman, but it's a well-established outcome of the laws of probability. (*Best Science Writing: Readings & Insights,* p. 44).

बर्कले के जीव-वैज्ञानिकों (Geneticists) की उपरोक्त टीम के अलावा एमोरी यूनिवर्सिटी की टीम ने भी इस सिलसिले में काम किया है। इस टीम के संरक्षक प्रोफेसर डगलस (Doug las Wallace) थे। इस टीम ने यह संभावना भी ज़ाहिर की है कि पहली औरत (हव्वा) संभव है एशिया के किसी भाग में रहती हो।

> Eve might have lived in Asia (Best Science Writing: Readings & Insights, p. 45)

यह नतीजा उन्होंने आनुवंशिक प्रमाणों (Genetic evidence) के आधार पर निकाला है, जो विभिन्न महाद्वीपों के सात सौ आदमियों के खून की विशेष जांच के बाद प्राप्त किए गए। यह खोज विशुद्ध वैज्ञानिक स्तर पर यह साबित कर रही है कि पूरी मानव जाति, बाहरी भेदों व भिन्नताओं के बावजूद, एक महान परिवार (Great family) की हैसियत रखती है। (पृष्ठ 43-44)

इसी ढंग की खोजें फ्रांस और इंग्लैंड में भी हो रही हैं। इन प्रयोगों पर अमरीका की कई विज्ञान-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित हो चुके हैं। इस सम्बन्ध में शोध-लेखों का सार-संक्षेप अंग्रेजी साप्ताहिक 'न्यूज़ वीक' (11 जनवरी 1988) में सात पृष्ठों में छपा है।

इन खोजों के अनुसार आनुवंशिक प्रमाणों (Genetic evidence) ने उस पुराने विचार का खंडन कर दिया है कि मानव जाति अलग-अलग शाखाओं या अलग-अलग जाति समूहों या अलग-अलग नस्लों से मिल

कर बनी है। इससे सिद्ध हुआ है कि आदम की पूरी संतान एक कुटुम्ब (बिरादरी) है, एक ही नस्ल है। हारवर्ड यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर स्टीफन जे गोल्ड (Stephen Jay Gould) ने कहा:

> This idea is tremendously important. It makes us realize that all human beings, despite differences in external appearance, are really members of a single entity that's had a very recent origin in one place. There is a kind of biological brotherhood that's much more profound than we ever realized—*All that the Prophets Have Spoken*- John R. Cross.

यह विचार बहुत ही आश्चर्यजनक रूप से महत्वपूर्ण है। यह हमें विश्वास दिलाता है कि तमाम इंसान, ऊपरी तौर पर भिन्नता के बावजूद, वास्तव में एक ही और मात्र एक ही नस्ल के लोग हैं, जो निकट अतीत में एक जगह पर शुरू हुई थी। यहां एक ही क़िस्म का जीव-वैज्ञानिक बन्धुत्व और भाईचारा है जो उससे ज़्यादा गहरा है जो अब तक हमने समझा था।

वह रिश्ता और भाईचारा जो जीव वैज्ञानिक घटना के तौर पर पहले से पाया जा रहा है, उसको सामाजिक स्तर पर अपना लेना ही मानव एकता का एकमात्र उपाय है। यह एकता और भाई चारे का वह स्वाभाविक नुस्खा है जिसका संकेत स्वयं हमारी पैदाइशी बनावट में मौजूद है। इस खोज ने एक तरफ़ उन तमाम नज़रियों को गलत साबित कर दिया है जो रंग और नस्ल के फ़र्क के आधार पर मानवता को अलग-अलग वर्गों में बांटे हुए थे। दूसरी तरफ़ उसने बता दिया कि इंसानों के बीच एकता क़ायम करने का कुदरती उपाय क्या है।

निस्स्वार्थता

अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि.) बयान करते हैं कि अबूबक्र (रजि०) के ज़माने में अकाल पड़ा और लोग सख्त परेशान हो गए। अबूबक्र (रजि।) ने कहा, "तुम लोग न घबराओ, अल्लाह जल्द ही तुम्हारे लिए खुशहाली पैदा कर देगा।" इसके बाद ऐसा हुआ कि उस्मान (रज़ि.) का व्यापारिक काफ़िला सीरिया से आया। इसमें एक हज़ार ऊंट थे और सब के सब गेहूं और अन्य खाने की चीज़ों से लदे हुए थे। यह खबर मदीने में फैली तो शहर के व्यापारी उस्मान (रज़ि.) के घर पहुंचे। उन्होंने दरवाजा खटखटाया। वह बाहर आए। उनके पास एक चादर थी, जिसको वह अपने कंधे पर इस तरह डाले हुए थे कि उसका एक सिरा सामने की तरफ़ लटक रहा था और दूसरा सिरा पीछे की तरफ़।

उस्मान (रज़ि.) ने पूछा कि तुम लोग क्यों आए हो और मुझसे क्या चाहते हो? व्यापारियों ने कहा "हम को यह बात पता चली है कि आपके पास एक हज़ार ऊंट, गेहूं और खाने का सामान आया है। हम उनको खरीदना चाहते हैं। आप हमें यह खाद्य सामग्री बेच दें, ताकि हम इसको मदीने के जरूरतमंदों तक पहुंचा सकें।"

उस्मान (रज़ि.) ने कहा कि अन्दर आओ, घर में बैठ कर बात करो करते हैं। वे लोग घर में दाखिल हुए तो देखा कि खाद्य सामग्री के एक हज़ार ढेर घर के अन्दर पड़े हुए हैं।

अब बातचीत शुरू हुई। उस्मान (रज़ि.) ने कहा, "मेरी शाम (सीरिया) की खरीदारी पर तुम मुझको कितना ज़्यादा नफ़ा दोगे?" उन्होंने कहा, "दस दिरहम पर बारह दिरहम" उस्मान (रज़ि.) ने कहा, "मुझे इससे ज़्यादा क़ीमत मिल रही है।"

व्यापारियों ने कहा, “दस दिरहम पर चौदह दिरहम।” हज़रत उस्मान ने कहा, “मुझे इससे ज़्यादा कीमत मिल रही है।”

उन्होंने कहा, “अच्छा, दस दिरहम पर पन्दरह दिरहम।” हज़रत उस्मान ने कहा कि उन्हें इससे भी ज़्यादा मिल रहा है। व्यापारियों ने कहा, “कौन आपको इससे ज़्यादा दे रहा है, जबकि मदीने के जितने व्यापारी हैं सब यहां जमा हैं।”

हज़रत उस्मान ने कहा, “मुझे हरेक दिरहम के बदले दस दिरहम मिल रहे हैं। क्या तुम मुझे इससे ज़्यादा दे सकते हो ?” उन्होंने कहा, “नहीं।”

हज़रत उस्मान बोले, “अल्लाह ने अपनी किताब में फ़रमाया है कि जो शख्स नेकी लेकर आएगा तो उसके लिए इसका दस गुना बदला है। (सूरह अल-अनआम: 160) तो ऐ मदीने के व्यापारियो, गवाह रहो कि मैंने यह तमाम खाने का सामान अल्लाह के लिए शहर के ज़रूरतमंदों पर सदक़ा (दान) कर दिया।”

यह घटना ख़ुदा के वादे पर यक़ीन की बेहतरीन मिसाल है। ख़ुदा पर ईमान (विश्वास) आदमी में इसी तरह का यक़ीन और विश्वास पैदा करता है। और जिस आदमी में इस तरह का यक़ीन और विश्वास पैदा हो जाए वह स्वार्थ और लाभ-हानि से ऊपर उठ जाता है। उसके हौसले इतने बुलंद हो जाते हैं कि बड़ी से बड़ी क़ुरबानी भी उसके लिए मुश्किल नहीं लगती।

तक़वा और शुक्र

हज़रत अबू उमामा कहते हैं कि पैग़म्बर मुहम्मद ने फ़रमाया कि मेरे रब ने मेरे सामने यह पेशकश की कि मक्का की घाटी को तुम्हारे लिए सोना बना दिया जाए। मैंने कहा कि ऐ मेरे रब, नहीं, बल्कि मुझे यह पसंद है कि मैं एक

दिन खाऊं और एक दिन भूखा रहूं। बस ताकि जब मुझे भूख लगे तो मैं तेरी तरफ़ आजिज़ी करूं और तुझको याद करूं और जब मुझे सेरी (तृप्ति) हासिल हो तो मैं तेरी हमद (तारीफ़) करूं और तेरा शुक्र अदा करूं। (सुनन अल-तिरमिज़ी, हदीस संख्या 2347)

अल्लाह तआला अपने बन्दों से दो चीज़ें चाहता है। एक यह कि वह अल्लाह की क़ुदरत को स्वीकार करके उसके आगे अपने इज्ज़ (बेबसी), विनम्रता का इज़हार करें। दूसरे यह कि वह अल्लाह की नेमतों को महसूस करके उस पर शुक्र करने वाले बन जाएं। ये दोनों बातें निहायत साफ़ तौर पर क़ुरआन और हदीस में बताई गई हैं। मगर इसका सबसे बड़ा अमली तजुर्बा वह है जो भूख और तृप्ति की सूरत में इंसान के साथ पेश आता है। जब आदमी को भूख लगती है, जब उसको प्यास लगती है, उस वक़्त उसको आख़िरी हद तक इस हक़ीक़त का एहसास होता है कि वह कितना कमज़ोर और मुहताज है। इसी तरह जब भूख और प्यास की शिद्दत के बाद उसको खाना और पानी मिलता है। तो उस वक़्त उसको आख़िरी तौर पर महसूस होता है कि खाना और पानी कितनी कीमती चीज़ें हैं।

इस दुनिया में आदमी को भूख का तजुर्बा भी होना चाहिए और तृप्ति का भी। उसे इस हालत से भी गुज़रना चाहिए कि उसका हल्क़ प्यास की वजह से सूख से गया हो और इसी के साथ यह कैफ़ियत भी कि उसने ठंडा पानी पिया और उसके बाद उसका वह हाल हो गया, जिसको हदीस में इन अल्फ़ाज़ में बयान किया गया है: "प्यास चली गई और रगें तर हो गईं।" (मुसनद अहमद, हदीस संख्या 2357)

ऊपर वाली हदीस से मालूम होता है कि हालात के बगैर कैफ़ियत (अनुभूतियां) पैदा नहीं होतीं। रोज़ा इस क़िस्म के हालात पैदा करने की एक सालाना योजना है। रोज़े के ज़रिए आदमी को भूख और तृप्ति दोनों का तजुर्बा कराया जाता है, ताकि वह ख़ुदा के आगे आजिज़ी करने वाला,

विनम्रता दिखाने वाला और गिड़गिड़ाने वाला भी बने और इसी के साथ उसका शुक्र करने वाला भी।

क़ुरआन में रोज़े का हुक्म देते हुए कहा गया है कि, ईमान वालो, तुम पर रोज़ा फ़र्ज किया गया जिस तरह तुमसे पहले के लोगों पर फ़र्ज़ किया गया था, ताकि तुम परहेज़गार बनो। ...रमज़ान का महीना जिसमें क़ुरआन उतारा गया। पस तुम में से जो शख़्स इस महीने को पाए, वह इसके रोज़े रखे...और अल्लाह की बड़ाई करे। इस पर कि उसने तुमको राह बताई, और ताकि तुम उसके शुक्रगुज़ार बनो (अल-बक़रह, 183, 185)।

इन आयतों में रोज़े के दो ख़ास फ़ायदे बताए गए हैं। एक यह कि रोज़ा आदमी के अन्दर तक़्वा (संयम) पैदा करने का ज़रिआ है। दूसरे यह कि इससे आदमी के अन्दर यह सलाहियत पैदा होती है कि वह अपने रब का शुक्र करने वाला बने।

क़ुरआन में जिस रूहानी हालत के लिए तक़वा (अल्लाह का डर) और शुक्र का लफ्ज़ इस्तेमाल हुआ है, उसी को हदीस में 'तज़र्रो' और शुक्र कहा गया है। यही दोनों हालतें बन्दगी की जान हैं। अल्लाह के मुक़ाबले अपने इज्ज़ (निर्बल होने) और छोटेपन का एहसास आदमी के अन्दर आजिज़ी और तक़वा (संयम) का एहसास उभारता है। और अल्लाह की अता की हुई चीज़ों का एहसास उसके अन्दर हम्द, अनुशंसा और शुक्र के जज़्बात पैदा करता है।

अगर आदमी की चेतना जागी हुई हो, ये दोनों कैफियतें हर रोज़ हर तजुर्बे से आदमी के अन्दर पैदा होती रहेंगी। वह हर घटना से दोनों रब्बानी ख़ुराक हासिल करता रहेगा। फिर इन्हीं दोनों कैफ़ियतों को और भी ज़्यादा और गहराई से हासिल करने के लिए रमज़ान के महीने का रोज़ा मुक़र्रर किया गया है। रमज़ान का रोज़ा गोया सामान्य तरबियत का विशेष कोर्स है।

क़ुदरत का सबक़

जानवरों के दो सबसे बड़े मसले हैं- खाना और अपनी हिफाज़त। जानवरों में एक-दूसरे के दुश्मन होते हैं और हर जानवर को हर दम अपने बचाव का ख़याल रखना पड़ता है। जानवरों में बचाव के जो तरीक़े पाए जाते हैं वे इंसान के लिए भी बहुत अहमियत रखते हैं, क्योंकि जानवरों का तरीक़ा असल में प्राकृतिक तरीक़ा है। जानवर जो कुछ करते हैं अपनी जिबिल्लत (प्राकृतिक स्वभाव) के तहत करते हैं। दूसरे शब्दों में वे सीधे क़ुदरत के सिखाए हुए हैं। जानवर क़ुदरत के सीखे हुए विद्यार्थी हैं। उनका अमल या कर्म क़ुदरत का बताया हुआ सबक़ है। उनके काम करने के ढंग को, पैदा करने वाले की पुष्टि हासिल है। इस सिलसिले में कुछ मिसालें पेश हैं:

1. हाथी और शेर जंगल के दो सब से बड़े जानवर हैं। अगर दोनों में टकराव हो जाए तो यह टकराव दोनों के लिए ख़तरनाक और प्राणघातक होता है। हाथी और शेर दोनों इस सच्चाई से अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं। इसलिए वे हमेशा यह कोशिश करते हैं कि एक-दूसरे से कतरा कर निकल जाएं। बहुत ही कम ऐसा होता है कि दोनों यह नौबत आने दें कि उनके बीच सीधे जंग शुरू हो जाए। दो ऐसे दुश्मनों की जंग, जिनमें दोनों में से कोई दूसरे को ख़त्म करने की ताकत न रखता हो, हमेशा दोतरफा तबाही पर ख़त्म होती है। शेर और हाथी अपनी पूरी ज़िन्दगी में इस टकराव से बचते रहते हैं।
2. यही मामला सांड का है। दो सांड (भैंसे या बैल) अगर एक दूसरे से लड़ जाएं तो ऐसा बहुत कम मुमकिन है कि एक-दूसरे को खत्म कर दें। सांड ऐसे बेफायदा टकराव से बचने के लिए यह तरकीब करते हैं कि अपनी-अपनी हदें बाँट लेते हैं। दो सांड

एक इलाके में पहुंच जाएं तो चलते-चलते जब किसी जगह पर दोनों की मुठभेड़ होती है तो दोनों एक-दूसरे को सींग मार कर यह ज़ाहिर करते हैं कि यहां से एक तरफ़ तुम्हारा इलाका है और दूसरी तरफ़ मेरा इलाक़ा है। इस दिखावटी या प्रतीकात्मक टकराव के बाद दोनों अपने पीछे की तरफ़ लौट जाते हैं। और इसके बाद दोनों पूरी तरह इस हद के बंटवारे को निभाते हैं। बहुत कम ऐसा होता है कि दो सांड आपस में लड़ जाएं।

3. आप नीली घोड़ी या बीर बहूटी को छुएं तो वह पैर समेट कर मुर्दा-सी बनकर पड़ जाएगी। बहुत से जानवरों के लिए अपने दुश्मन से बचने का यह आसान तरीक़ा है। जब वे देखते हैं कि दुश्मन सिर पर आ गया है और उससे बचना नामुमकिन है तो वे अपने को निष्क्रय और बेजान-सा बना लेते हैं। उनका दुश्मन उनको देखता है पर वह मुर्दा समझ कर उनको छोड़ देता है। वे अपने को ग़ैर मौजूद ज़ाहिर करके अपने को दुश्मन से बचा लेते हैं और जब दुश्मन हट जाता है तो भाग जाते हैं।
4. जो जानवर बिलों के अन्दर रहते हैं, उनके लिए हमेशा यह ख़तरा होता है कि उनका दुश्मन उनके बिल के अन्दर घुस जाएगा और दुश्मन से वह इस तरह घिर जाएंगे कि बिल के छोटे से रास्ते से भाग न सकेंगे। इसलिए बिल वाले जानवर हमेशा अपने बिल में एक पिछला रास्ता (इमरजेंसी गेट) रखते हैं जो संकट के वक़्त काम आ सके। जब भी कोई जानवर देखता है कि सामने के सूराख से उसका दुश्मन घर में घुस आया है वे पीछे के सूराख से निकल कर भाग जाता है और दुश्मन की पकड़ से अपने को बचा लेता है।
5. एक बहुत छोटा कीड़ा है। वह अपने दुश्मन-कीड़े को ख़त्म करने

के लिए बहुत दिलचस्प तरीका अपनाता है। वह अपने दुश्मन कीड़े के जिस्म में अपना डंक चुभा देता है जो इंजैक्शन की सुई की तरह होता है— यानी नुकीला और अंदर से पोला। वह बहुत फुर्ती से अपने बेहद छोटे अंडे को उसके जिस्म में पहुंच देता है। यह अंडा, जो दरअसल ज़िन्दा बच्चे का शुरूआती रूप (भ्रूण) होता है, अपने मेज़बान जानवर के जिस्म का अन्दरूनी हिस्सा खाता रहता है, यहां तक कि वह लारवा (छोटे बच्चे) की शक्ल अख़्तियार कर लेता है। अब यह लारवा बाहर निकलने के लिए ज़ोर करता है। मेज़बान जानवर के लिए यह लम्हा सख़्त तर्कलीफदेह हो सकता है, पर वह एक ऐसे दुश्मन के मुक़ाबले में अपने को बेबस पाता है जो खुद उसके पेट में घुसा हुआ हो। इस तरह लारवा ज़ोर करता रहता है, यहां तक कि वह अपने मेज़बान जानवर के जिस्म को फाड़ कर बाहर आ जाता है। यह सारा कुछ इतना ज़्यादा तकलीफदेह होता है कि इसके दौरान मेज़बान जानवर की मौत हो जाती है।

क़ुदरत के सिखाए हुए जीव-जन्तुओं में बचाव के जो तरीके पाए जाते हैं। वही इंसान के लिए भी पूरी तरह कारगर हैं। इंसान के लिए भी अपने दुश्मन के मुकाबले में बेहतरीन तरीका यह है कि वह सीधे टकराव से बचे और कतरा कर निकलने की कोशिश करे। दुश्मन को भी यह महसूस करने का मौका न दिया जाए कि आप उसके 'दायरे' में प्रवेश कर रहे हैं। अगर दुश्मन का सामना हो जाए तो उसके मुकाबले में अपने को निष्क्रिय और बेहरकत जाहिर करके अपने को उसकी पकड़ से बचा लिया जाए, अपने दायरे में सिमट कर उसको यह अहसास दिलाया जाए कि मेरी वजह से तुम्हारा किसी किस्म का कोई नुकसान नहीं। उसके साथ ऐसी तदबीर की जाए जिसके ज़रिए संकट की घड़ी में दुश्मन का वार खाली जा सके। अगर

दुश्मन के खिलाफ़ कार्रवाई करना ज़रूरी हो तो बेहतर तरीक़ा यह है कि दुश्मन के अपने 'जिस्म' में उस चीज़ का एक 'अंश' पहुंचा दिया जाए जिसकी खुराक दुश्मन का जिस्म हो। वह उसको चुपचाप खाता रहे, यहां तक कि अन्दर ही अन्दर वह दुश्मन को ख़त्म कर दे।

जानवरों ने अपने बचाव के ये उसूल खुद नहीं बनाए, वे उनको ख़ुदा ने सिखाए हैं। इनको ख़ुदाई स्वीकृति हासिल है। फिर जानवरों की दुनिया में इस तरह के बचाव व सुरक्षा के तरीक़े 'बुज़दिली' की वजह से नहीं हैं, बल्कि ख़ालिस हक़ीक़त पसंदी (यथार्थवाद) पर आधारित हैं। इसका मतलब यह होता है कि ग़ैरज़रूरी टकराव से बचकर अपनी तरक्क़ी के काम को जारी रखा जाए। कोई जानवर चारे की तलाश में जा रहा है। कोई अपने जोड़े से मिलने के लिए निकला है। कोई अपना घर बनाने की कोशिश में लगा है। किसी को अपने बच्चों की परवरिश करने के लिए मौक़ा चाहिए। ऐसी हालत में उसकी अपने दुश्मन से मुठभेड़ हो जाती है। अब अगर जानवर दुश्मन से लड़ाई शुरू कर दे तो उसकी अपनी तामीर-व-तरक्क़ी का काम धरा रह जाएगा। यही वजह है कि हर जानवर दुश्मन से सीधी टक्कर लेने से बचता है, बशर्ते कि वह उसमें मजबूरन गिरफ्तार न हो जाए। वह अपने तामीरी काम को जारी रखने की ख़ातिर टकराव से बचकर निकल जाता है।

यह प्रवृत्ति जानवरों में स्वाभाविक रूप से पाई जाती है और वे इसे अचेत रूप से अपनाते हैं। जबकि इंसान को इसे सचेत रूप से समझकर अपनाना और अपने व्यवहार में लागू करना होता है।

एक और आवाज़

जब एक इंसान बोल रहा हो और आप उसकी बात सुन रहे हों तो यह कोई असाधारण घटना नहीं होती। यह एक बेहद अनोखी घटना होती है, जो हमारी ज़मीन पर घटती है। एक शख़्स का बोलना और दूसरे शख़्स का सुनना अपने अन्दर इतनी ज़्यादा निशानियां रखता है कि आदमी अगर इस पर सोचे तो वह हैरत के समुद्र में डूब जाए।

ऐसी अजीब घटना क्यों होती है? यह इसलिए होती है ताकि इंसान एक महान् हक़ीक़त को महसूस कर सके। वह इन्सानी कलाम (वार्तालाप) के ज़रिए ख़ुदाई कलाम (वार्तालाप) को अपनी कल्पना में लाए।

जिस तरह एक इंसान बोलता है और आप सुनते हैं, उसी तरह ख़ुदा भी बोल रहा है। वह भी इन्सानों से संवाद कर रहा है। जो शख़्स इंसान की बात सुने, पर वह ख़ुदा की बात न सुने वह बहरा है। आदमी को कान इसलिए दिए गए हैं कि वह ख़ुदा की बात सुनने वाला बनें। मगर उसका हाल यह हुआ कि इन्सानों की बात उसको सुनाई दी पर ख़ुदा की बात उसको सुनाई न दी। ऐसा शख़्स यक़ीनन बहरा है, उसके बहरा होने में कोई शक नहीं, चाहे वह देखने में कान वाला ही क्यों न दिखाई देता हो।

इंसान की हर चीज़ ख़ुदा के लिए है। उसको कान इसलिए दिए गए थे कि वह ख़ुदा की बात सुने। कान के अन्दर दूसरी आवाज़ों को सुनने की क्षमता इसलिए रखी गई थी कि उसको क़रीबी तजुर्बे से मालूम हो जाए कि वह 'सुनने की सलाहियत रखता है। पर जो चीज़ सिर्फ़ प्रारम्भिक तजुर्बे के लिए थी उसी को उसने आख़िरी तजुर्बा समझ लिया। वह रास्ते में अटक कर रह गया। वह असली मंज़िल तक नहीं पहुंचा।

इंसान की बात को सुनना और खुदा की बात को न सुनना ऐसा ही है जैसे कोई शख्स फल का छिलका खाए और उसका मगज़ फेंक दे। वह

दिए की रोशनी को रोशनी समझे, पर सूरज की रोशनी का रोशनी होना उसे मालूम न हो।

ऐसा आदमी बेशक अंधा है, चाहे उसके चेहरे पर दो आंखें मौजूद हों, चाहे दुनिया के रजिस्टर में उसका नाम देखने वालों की फेहरिस्त में लिखा हुआ हो।

बेहतर हल

सोचना (thinking) हमारी दुनिया की एक बेहद रहस्यमय प्रक्रिया है। आधुनिक समय में इस विषय पर कई किताबें लिखी गई हैं। इन शोधों ने इंसान के ज्ञान को बढ़ाने से ज़्यादा उसकी हैरानी को बढ़ा दिया है। कुछ किताबों के नाम इस प्रकार हैं:

- Dr. Rapaport, *Toward a Theory of Thinking*, 1951
- W.E. Vinacke, *The Psychology of Thinking,* 1952
- F.C. Bartlett, *Thinking*, 1958
- Max Wertheimer, *Italian Productive Thinking*, 1959

इन शोधों के माध्यम से कई नई जानकारियां सामने आई हैं। एक अहम जानकारी यह है कि इंसानी दिमाग में हमेशा एक बेहद महत्वपूर्ण प्रक्रिया चलती रहती है। मनोवैज्ञानिक इसे "मानसिक तूफान" (brainstorming) कहते हैं। यह प्रक्रिया तब होती है जब दिमाग किसी नए चैलेंज का सामना करता है। ऐसे समय में दिमाग अपनी स्वाभाविक क्षमता से समस्याओं के नए हल खोजने लगता है। यह प्रक्रिया इस संभावना को बढ़ा देती है कि समस्या का कुछ बेहतर हल (superior solution) सामने आ जाए:

A process called brainstorming has been offered

> as a method of facilitating the production of new solutions to problems. These unrestricted suggestions increase the probability that at least some superior solutions will emerge (*Encyclopedia Britannica,* 1984, U.S.A., Vol. 18, p. 357).

समस्या का बेहतर हल मिल जाने के बाद सफलता उतनी ही निश्चित हो जाती है जितना शाम के बाद सुबह का आना।

ईश्वर का यह कितना अनोखा तरीका है कि उसने कठिनाइयों को हमारी प्रगति की सीढ़ी बना दिया।

रचनात्मक योग्यता

यूनिवर्सिटी के एक प्रोफेसर से पूछा गया कि आपके अनुसार शिक्षित होने की पहचान क्या है। प्रोफेसर ने उत्तर दिया — वह व्यक्ति जो "नहीं" से "है" की रचना कर सके:

> The person who can create things out of nothing.

यह परिभाषा बिल्कुल सही है। इसमें कोई शक नहीं कि किसी व्यक्ति के शिक्षित और समझदार होने की सबसे खास पहचान यही है कि वह कुछ नया खोज सके। ज़ाहिर तौर पर "नहीं" जैसे हालात में वह "है" की सच्चाई को सामने ला सके। यह योग्यता जीवन के हर क्षेत्र से जुड़ी है, चाहे वह ज्ञान का क्षेत्र हो या व्यापार का, सामाजिक मामलों की बात हो या राष्ट्रीय

मामलों की। जीवन के हर पहलू में वही व्यक्ति सबसे अधिक तरक्की करता है जो इस मानव योग्यता का सबूत दे सके।

इस दुनिया में इंसान को अधूरी जानकारी से उच्च ज्ञान की खोज करनी होती है। उसे प्रतिकूल परिस्थितियों में अनुकूल अवसर ढूंढने होते हैं। उसे दुश्मनों के बीच से अपने दोस्त की पहचान करनी होती है। उसे असफलताओं के तूफान में सफलता का रास्ता तय करना होता है। उसे यह साबित करना होता है कि वह जीवन के खंडहरों से अपने लिए एक नया और शानदार महल खड़ा कर सकता है। जो लोग इस रचनात्मक योग्यता का प्रमाण देते हैं, वही सही मायनों में इंसान कहलाने के योग्य हैं। जो लोग इस योग्यता का सबूत नहीं दे पाते, वे असल में जानवरों जैसे हैं, चाहे वे ऊपर से इंसानों की तरह कपड़े पहने हुए हों।

यह रचनात्मकता (creativity) ही किसी व्यक्ति या समाज की सबसे बड़ी पूंजी है। यही चीज़ उसे इस दुनिया में ऊंचा स्थान दिलाती है। जो लोग रचनात्मकता की योग्यता खो देते हैं, वे किसी और तरीके से अपना स्थान नहीं बना सकते, चाहे वे कितना भी शोर-शराबा क्यों न करें। चाहे उनके विरोध और शिकायतों की आवाज़ से धरती और आसमान गूंज उठें। वे लाउडस्पीकर के शोर से हलचल तो मचा सकते हैं, लेकिन स्थायित्व का शांत और मजबूत किला कभी नहीं खड़ा कर सकते।

मेहनत के ज़रिए

बापसी सिधवा (Bapsi Sidhwa, b. 1936) एक पारसी महिला हैं। वे पाकिस्तान (लाहौर) की रहने वाली हैं। आजकल वे टेक्सास (अमेरिका)

की यूनिवर्सिटी ऑफ ह्यूस्टन में प्रोफेसर हैं। अंग्रेज़ी भाषा में उनके लिखे गए उपन्यास अंतरराष्ट्रीय स्तर के पब्लिशिंग हाउसों से प्रकाशित होते हैं।

हैरत की बात यह है कि बापसी सिधवा की औपचारिक शिक्षा बिल्कुल नहीं हुई। वे लाहौर के एक स्कूल में शुरुआती शिक्षा ले रही थीं कि उन्हें पोलियो की बीमारी हो गई। उनके माता-पिता ने यह सोचकर कि उनकी शिक्षा अब संभव नहीं, उन्हें स्कूल से निकाल लिया। इसके बाद उन्होंने घर पर ट्यूटर की मदद से पढ़ाई शुरू की, लेकिन यह सिलसिला भी ज़्यादा दिनों तक नहीं चला।

अब बापसी सिधवा के इस दुःख ने उनका मार्गदर्शन किया। वे खुद से पढ़ने लगीं। वे हर समय अंग्रेज़ी की किताबें पढ़ती रहती थीं। उनके शब्दों में, वे एक "कभी न तृप्त होने वाली पाठक" (voracious reader) बन गईं। अंततः उन्होंने अपनी मेहनत से ऐसा स्तर हासिल कर लिया कि वे अंग्रेज़ी में लेख लिखने लगीं। मगर दो साल तक उन्हें अपने भेजे गए लेखों के जवाब में केवल "अस्वीकृति पर्चियां" (rejection slips) मिलती रहीं। उनकी पहली किताब का मसौदा आठ साल तक उनकी अलमारी में धूल खाता रहा। यहां तक कि उन्हें निराशा के दौरे पड़ने लगे।

आखिरकार हालात बदले। उनके लेख विदेशी मैगज़ीनों में छपने लगे। अब वे विश्व स्तर पर पढ़ी जाने वाली अंग्रेज़ी लेखिका बन चुकी हैं। औपचारिक डिग्री न होने के बावजूद वे अमेरिका की एक यूनिवर्सिटी में "रचनात्मक लेखन" (creative writing) पढ़ा रही हैं (*टाइम्स ऑफ इंडिया,* 25 फरवरी 1990)।

हकीकत यह है कि सभी ज्ञान मेहनत की पाठशाला में सिखाए जाते हैं। हर तरक्की मेहनत की कीमत चुकाकर हासिल होती है। और मेहनत वह चीज़ है जो हर इंसान के पास होती है। यहां तक कि उस इंसान के पास भी जिसे बीमारी ने अपंग बना दिया हो, जो कॉलेज या यूनिवर्सिटी की डिग्री

न ले सका हो — मेहनत एक ऐसी पूंजी है जो कभी किसी के लिए खत्म नहीं होती।

बचकर चलिए

एक रास्ता है जिसमें कांटेदार झाड़ियाँ उगी हुई हैं। यदि कोई व्यक्ति बेपरवाही से उस रास्ते पर चल पड़ता है, तो कांटे उसके शरीर में चुभते हैं, उसके कपड़े फट जाते हैं, और वह अपनी मंज़िल तक देर से पहुँचता है। इस सबके बीच उसका मानसिक संतुलन भी डगमगा जाता है और उसकी आंतरिक शांति समाप्त हो जाती है।

अब वह व्यक्ति क्या करेगा? क्या वह कांटों के खिलाफ कोई कॉन्फ्रेंस बुलाएगा? क्या वह कांटों के बारे में जोशीले बयान जारी करेगा? क्या वह संयुक्त राष्ट्र से यह मांग करेगा कि दुनिया के सारे पेड़ों से कांटों को खत्म कर दिया जाए ताकि भविष्य में कोई मुसाफिर इस समस्या का शिकार न हो?

कोई गंभीर और समझदार व्यक्ति ऐसा कभी नहीं करेगा। इसके विपरीत वह अपनी नासमझी का एहसास करेगा। वह खुद से कहेगा कि जब अल्लाह ने तुम्हें दो आंखें दी थीं, तो तुमने क्यों न यह किया कि कांटों से बचकर चलते? तुम अपना दामन समेट कर कांटों वाले रास्ते से निकल जाते। इस तरह तुम्हारा शरीर भी कांटों से सुरक्षित रहता और तुम्हें अपनी मंज़िल तक पहुंचने में देर भी न होती।

अल्लाह ने पेड़ों की दुनिया में यह उदाहरण रखा ताकि इंसान इसे अपनी सामाजिक दुनिया में यात्रा करते समय सीख के तौर पर अपनाएं। मगर ऐसा लगता है कि किसी ने भी इस ईश्वरीय निशानी को नहीं पढ़ा। अल्लाह के इस संदेश को सुनकर किसी ने इससे सीख नहीं ली। आज की

दुनिया में आपको ऐसे बहुत से लोग मिलेंगे जो सामाजिक कांटों के बीच लापरवाही से चलते हैं। और जब कांटे उनके शरीर से चुभकर उन्हें तकलीफ पहुंचाते हैं, तो वे एक पल सोचे बिना खुद कांटों को बुरा कहने लगते हैं। वे अपनी नासमझी को दूसरों पर थोपने की बेकार कोशिश करते हैं।

ऐसे सभी लोगों को जानना चाहिए कि जिस तरह पेड़ों की दुनिया से कांटेदार झाड़ियां खत्म नहीं की जा सकतीं, उसी तरह सामाजिक दुनिया से कांटेदार इंसान भी कभी खत्म नहीं होंगे, यहाँ तक कि कयामत न आ जाए। इस दुनिया में सुरक्षित और कामयाब जिंदगी का राज़ कांटेदार इंसानों से बचकर चलने में है। इसके अलावा हर दूसरा तरीका केवल तबाही को बढ़ाने वाला है और कुछ नहीं।

हिकमत वाला तरीका

ज़िंदगी में बार-बार ऐसा होता है कि इंसान को यह फ़ैसला लेना पड़ता है कि वह क्या करे और क्या न करे। ऐसे मौकों पर फ़ैसला लेने के दो आधार होते हैं:

1. What is right (क्या सही है)
2. What is possible (क्या संभव है)

हिकमत भरा तरीका यह है कि व्यक्तिगत मामलों में इंसान यह देखे कि क्या सही है, और जो तरीका सही हो, उसे अपनाए। लेकिन सामूहिक मामलों में यह देखना सही होता है कि क्या संभव है, और जो चीज़ संभव हो, उसे अपना लिया जाए।

इस फ़र्क की वजह यह है कि व्यक्तिगत मामलों में पूरा मसला सिर्फ अपनी ज़ात का होता है। आपको अपनी ज़िंदगी पर पूरा अधिकार है। आप

अपनी ज़िंदगी को जिस दिशा में चाहें, मोड़ सकते हैं और अपने साथ जैसा चाहें व्यवहार कर सकते हैं। इसलिए व्यक्तिगत मामलों में आपको आदर्शवादी होना चाहिए और जितना हो सके, वही रवैया अपनाना चाहिए जो धर्म और नैतिकता की दृष्टि से उचित हो।

लेकिन सामूहिक मामलों में आपकी ज़िंदगी के साथ एक दूसरा पक्ष भी जुड़ जाता है। उस बाहरी पक्ष पर आपका कोई अधिकार नहीं होता। आप उससे अनुरोध कर सकते हैं, लेकिन उसे मजबूर नहीं कर सकते। ऐसे हालात में समझदारी की बात यह है कि सामूहिक मामलों में "संभव" (possible) को देखा जाए। दो विकल्पों में से जो विकल्प व्यवहारिक रूप से संभव हो, उसे स्वीकार कर लिया जाए।

व्यक्तिगत मामलों में "सही" (right) पर चलने से ज़िंदगी का सफर रुकता नहीं, बल्कि जारी रहता है। लेकिन सामूहिक मामलों में ऐसा करने पर दूसरे पक्ष का विरोध आपके सफर को तुरंत रोक देता है। तब सफर को टाल कर सारी ऊर्जा विवाद में खर्च होने लगती है।

इसलिए बेहतर और कामयाब तरीका ये है कि दूसरे पक्ष की बात का ध्यान रखते हुए जो भी रास्ता निकल रहा हो, उसे अपना लिया जाए। वर्तमान को भविष्य पर छोड़ते हुए अपना सफ़र जारी रखा जाए। दुनिया में ज़िंदगी गुज़ारने का यही समझदारी भरा तरीका है।

चेतना का निर्माण

दूसरे विश्व युद्ध तक अमेरिका पूरी दुनिया में मोटर कार का सबसे बड़ा व्यापारी था। हर व्यक्ति के दिमाग़ में "रोल्स रॉयस" कार का वर्चस्व छाया हुआ था। दूसरे विश्व युद्ध के बाद जर्मनी की "वोक्सवैगन" का दौर आया।

1970 तक 140 देशों में 16 मिलियन से अधिक वोक्सवैगन कारें बिक चुकी थीं। मगर अब जापानी कारों का ज़माना है। आज "टोयोटा" (न कि जनरल मोटर्स) कारों की दुनिया का बादशाह है। अमेरिका की सड़कों पर जो कारें दौड़ती हैं, उनमें से 35% कारें जापान की बनी हुई होती हैं।

आज दुनिया में इस्तेमाल होने वाले इलेक्ट्रॉनिक सामान का 80% जापान में बना हुआ होता है। जब अमेरिका का अपोलो (II) चांद पर गया, तो उसमें रखने के लिए एक बेहद छोटा और सटीक काम करने वाला कैसेट रिकॉर्डर चाहिए था। इतना छोटा और सही काम करने वाला रिकॉर्डर सिर्फ जापान ही बना सकता था। नतीजतन, अपोलो II के साथ जापानी रिकॉर्डर रखकर उसे चांद पर भेजा गया।

दूसरे विश्व युद्ध तक जापान का यह हाल था कि "मेड इन जापान" (Made in Japan) शब्द जहां भी लिखा होता, लोग समझते कि यह सस्ता और अविश्वसनीय होगा। जापानी सामान की छवि इतनी खराब थी कि पश्चिमी देशों के व्यापारी जापानी सामान अपनी दुकानों पर रखना अपमान समझते थे। फिर सिर्फ 40 वर्षों में जापान ने इतनी क्रांतिकारी तरक्की कैसे हासिल कर ली?

एक अमेरिकी विद्वान विलियम ओयूची (William O'uchi) के अनुसार, इसका रहस्य उनके कर्मचारियों के अंदर "प्रेरणा" (motivation) पैदा करना है।

जापानियों ने अपनी प्राथमिक शिक्षा का स्तर बहुत ऊंचा किया। उन्होंने प्राथमिक शिक्षकों को ऊंची तनख्वाह और प्रोफेसरों जैसी इज़्ज़त दी, ताकि बेहतरीन शिक्षक उनकी नई पीढ़ी को शिक्षा दे सकें। उन्होंने अपने लोगों में गहराई से यह चेतना पैदा की कि उद्योग में सबसे महत्वपूर्ण चीज़ "गुणवत्ता" (Quality) है।

आधुनिक जापान में हर जगह क्वालिटी कंट्रोल सर्कल स्थापित हैं।

1980 तक एक लाख क्वालिटी कंट्रोल सर्कल पंजीकृत हो चुके थे। इसके अलावा, कहा जाता है कि जापान में दस लाख गैर-पंजीकृत क्वालिटी सर्कल भी मौजूद हैं।

सफलता कैसे

फरवरी 1992 में दिल्ली में किताबों की प्रदर्शनी (book fair) आयोजित हुई। 7 फरवरी को मैं भी इसे देखने गया। अलग-अलग स्टॉल देखते हुए एक जगह पहुंचा, तो वहां के बोर्ड ने मेरा ध्यान खींच लिया। बोर्ड पर लिखा था: "थिंक इनकॉर्पोरेटेड" (Think Incorporated)।

यह बुक फेयर में एक अनोखा स्टॉल था। इसका मकसद था लोगों को सोचने की कला सिखाना। क्योंकि गलत सोच इंसान को नाकामी की ओर ले जाती है और सही सोच सफलता की ओर। यहां मिस्टर प्रमोद कुमार बत्रा की एक खूबसूरत छपी हुई अंग्रेज़ी किताब थी। इसका नाम "मैनेजमेंट थॉट्स" (Management Thoughts) था। इसमें कुल 315 पन्ने और 1360 उपयोगी कथन शामिल थे। उदाहरण के तौर पर एक कथन यह था:

> "Our attitude determines our altitude." (हमारा मानसिक रवैया हमारी ऊंचाई को निर्धारण करता है।)

इसी तरह, इस स्टॉल पर कई प्रेरणादायक पोस्टर भी थे। एक पोस्टर में ऊपर माचिस की एक तीली दिखाई गई थी। उसके नीचे लिखा था कि माचिस की तीली का एक सिर होता है, लेकिन उसमें दिमाग नहीं होता। इसलिए जब भी रगड़ होती है, वह तुरंत जल उठती है। हमें इस छोटी सी

माचिस की तीली से सीखना चाहिए। हम और आप सर रखते हैं और इसी के साथ दिमाग भी, इसलिए हमें चाहिए कि हम भड़कें नहीं:

> "A match-stick has a head, but it does not have a brain. Therefore, whenever there is a friction, it flares up immediately. Let us learn from this humble match-stick. You and we have heads as well as brains. Therefore, let us not react on impulse."

एक इंसान वह है जो भड़काने वाली बात पर तुरंत भड़क उठता है। वह फौरन भावनाओं में आकर प्रतिक्रिया देता है। ऐसा इंसान हमेशा नाकाम रहेगा। दूसरा इंसान वह है जो भड़काने वाली बात के बावजूद संयम में रहता है। वह ठंडे दिमाग से सोचता है, फिर कार्रवाई करता है। ऐसा इंसान हमेशा कामयाब रहेगा। दूसरा इंसान वास्तव में "इंसान" है, जबकि पहला सिर्फ माचिस की एक तीली है।

जिसकी शरारत का असर उसके बाद भी रहे

एक हकीम का कहना है कि बरकत उसके लिए है कि जब वह मरा तो उसके गुनाह भी उसके साथ मर गए। और तबाही उसके लिए है कि जब वह मरे तो उसके बाद उसके गुनाह भी बाक़ी रहें।

नाकामी और सफलता

अमेरिका की तरक्की का राज़ एक साधारण से शब्द में छुपा है, और वह शब्द है “रिसर्च” (Research)। वहां हर चीज़ पर रिसर्च की जाती है। उदाहरण के तौर पर, कई लोगों ने इस पर रिसर्च की है कि सफलता और नाकामी क्या है, और नाकामी को दोबारा सफलता में कैसे बदला जा सकता है। इस विषय में कुछ किताबों के नाम इस प्रकार हैं:

- Carole Hyatt, *When Smart People Fail*
- Rabbi Harold Kushner, *When Bad Things Happen to Good People*
- Charles Garfield, *Peak Performers: The New Heroes of American Business*
- Harvey Mackay, *Swim With the Sharks Without Being Eaten Alive*

इन किताबों में विषय से संबंधित क़ीमती जानकारी इकट्ठा की गई है। यहां हम केवल दो महत्वपूर्ण बातें पेश कर रहे हैं:

पहली बात यह है कि इस दुनिया में यह नामुमकिन है कि कोई व्यक्ति हमेशा के लिए नाकामी से सुरक्षित (Failure-proof) जीवन जी सके। हर व्यक्ति को कभी न कभी नाकामी का सामना करना पड़ता है। व्यक्ति को चाहिए कि वह हर नाकामी को अपने लिए एक सबक बनाए। अधिकतर सफल लोगों का राज़ यह होता है कि नाकाम होने के बावजूद उन्होंने अपनी नाकामी को अंतिम शब्द नहीं माना:

> “They learnt not to take failure as the last word.”

दूसरी बात यह है कि जिस तरह नाकामी एक समस्या है, उसी तरह सफलता भी एक समस्या है। लगातार सफलता व्यक्ति के अंदर घमंड (arrogance) पैदा कर देती है, जो नाकामी का एक बड़ा कारण बन जाता है। एक सफल व्यापारी ग्लेन अर्ली (Glen Early) ने कहा:

> "I can't afford to get arrogant about success. So, I am always trying to improve my business."
>
> (मैं सफलता पर अहंकारी बनने का जोखिम नहीं उठा सकता। इसलिए मैं हमेशा अपने व्यापार को बेहतर बनाने की कोशिश करता हूं।)

सफलता और नाकामी कोई रहस्यमय चीजें नहीं हैं। ये दोनों ज्ञात कारणों के परिणाम हैं। इन कारणों को समझ लीजिए, और फिर आपको किसी से कोई शिकायत नहीं रहेगी।

गुस्सा न दिलाओ

29 मई 1990 को दिल्ली के अखबारों में एक सीख देने वाली खबर प्रकाशित हुई। सुदर्शन पार्क (मोती नगर) की झुग्गियों में रहने वाला एक व्यक्ति था, जिसका नाम अनंत राम था। उसकी उम्र 35 साल थी। वह शराब का आदी था। जब उसके पास शराब के लिए पैसे नहीं थे, उसने अपनी पत्नी से पैसे मांगे। पत्नी ने शराब के लिए पैसे देने से इनकार कर दिया। इस पर पति-पत्नी के बीच झगड़ा हुआ। इसके बाद टाइम्स ऑफ इंडिया (29 मई 1990) के मुताबिक़ जो हुआ, वह यह था:

> "The accused Anant Ram, a habitual drunkard,

> was enraged when his wife refused to give him money he asked for. Giving way to his tantrums, he dashed his son Arjun against the floor, thus killing him then and there."

अनंत राम, जो शराब का आदी था, जब उसकी पत्नी ने पैसे देने से मना कर दिया, तो वह गुस्से में आ गया। गुस्से में आपा खोकर उसने अपने दो साल के बेटे (अर्जुन) को कई बार उठाकर ज़मीन पर पटक दिया। इसके नतीजे में बच्चा वहीं मौके पर मर गया।

जब इंसान गुस्से में होता है, तो उस समय वह शैतान के क़ब्ज़े में होता है। उस वक्त वह किसी भी अमानवीय हरकत को अंजाम दे सकता है, यहां तक कि अपने ही बच्चे की निर्दयता से हत्या भी कर सकता है।

यह एक ऐसी कमज़ोरी है जो हर इंसान के अंदर मौजूद होती है। समाज में सुरक्षित और कामयाब ज़िंदगी गुज़ारने का तरीका यह है कि इंसान दूसरों को गुस्सा दिलाने से बचे। समझदारी से कोशिश करे कि कोई भी व्यक्ति उस भावनात्मक स्थिति तक न पहुंचे, जब वह शैतान के क़ब्ज़े में चला जाए और पागलपन भरी हरकतें कर बैठे, जैसा कि ऊपर के वाक्य में देखा गया।

गुस्सा और बदले की भावना किसी विशेष क़ौम या समुदाय से नहीं जुड़ी है। यह हर इंसान के स्वभाव में शामिल है, चाहे वह किसी भी क़ौम या देश का हो। गुस्से और बदले को "मानवीय समस्या" के तौर पर लेना चाहिए, न कि किसी विशेष क़ौम या समुदाय की समस्या के तौर पर।

अधिकार और लाचारी

प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइंस्टीन (Einstein) ने भौतिक विज्ञान के एक सिद्धांत को इस तरह बयान किया है:

> "Energy can neither be created nor destroyed."
>
> (ऊर्जा को न उत्पन्न किया जा सकता है और न नष्ट किया जा सकता है।)

यह तथ्य ईश्वर की असीम शक्ति का सबूत है। इंसान इस दुनिया को सिर्फ इस्तेमाल कर सकता है। वह इसे बदलने या मिटाने में सक्षम नहीं है। इससे यह भी पता चलता है कि इस दुनिया में इंसान की असली हैसियत क्या है। इंसान इस दुनिया का मालिक नहीं है, बल्कि एक अधीन व्यक्ति है। इसी स्थिति को धार्मिक शब्दों में "परीक्षा" कहा जाता है।

इंसान इस दुनिया में इसलिए आता है ताकि वह एक सीमित समय के भीतर अपनी परीक्षा का उत्तर लिख सके। इसके बाद उसे यहां से चले जाना होगा। इसके अलावा किसी और चीज़ पर उसे कोई पूर्ण अधिकार नहीं।

कुछ लोग दुनिया की परेशानियों से हार मानकर आत्महत्या का रास्ता चुन लेते हैं। उन्हें लगता है कि खुद को मिटाकर वे अपनी समस्याओं का अंत कर देंगे। लेकिन यह सोचना एक भ्रांति है। जैसे भौतिक दुनिया की ऊर्जा को नष्ट नहीं किया जा सकता—क्योंकि वह किसी न किसी रूप में बनी रहती है—उसी तरह उस ऊर्जा को भी समाप्त नहीं किया जा सकता जो एक इंसान के रूप में अस्तित्व में आई है। जीवन कोई मिटने वाली चीज़ नहीं, बल्कि एक निरंतरता है, जो इस दुनिया से आगे भी अपना स्वरूप बनाए रखती है।

यह स्थिति इस बात का इशारा है कि इस दुनिया में इंसान का असली मामला क्या है।

इंसान को यह अधिकार है कि वह सच्चाई का इनकार कर दे। लेकिन सच्चाई को बदलना उसके लिए संभव नहीं। इंसान को यह अधिकार है कि वह बगावत करे, लेकिन बगावत के नतीजे से खुद को बचाना उसके लिए संभव नहीं। इंसान को यह अधिकार है कि वह नैतिकता के नियमों को न माने, लेकिन नैतिकता की अहमियत को इस दुनिया से खत्म करना उसके बस में नहीं।

इंसान को यह अधिकार है कि वह जो चाहे करे, लेकिन उसे यह अधिकार नहीं है कि अपनी किसी चाहत को उस आदर्श सिद्धांत की हैसियत दे दे, जिसके आधार पर आखिरकार सभी इंसानों का फैसला किया जाएगा।

इंसान इस दुनिया में आज़ाद है, लेकिन उसकी आज़ादी सीमित है, न कि असीमित।

अपनी कमज़ोरी

रॉबर्ट एम्मियन (Robert Emmiyan) रूस के प्रसिद्ध एथलीट हैं। उन्हें लंबी कूद के चैंपियन (Top Long-Jumper) के रूप में जाना जाता है। वे 15 फरवरी 1965 को पैदा हुए और अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में गोल्ड मेडल जीतकर असाधारण शोहरत हासिल की।

एक भारतीय पत्रकार श्री वी. कृष्णास्वामी ने रॉबर्ट एम्मियन का विस्तृत इंटरव्यू लिया। यह इंटरव्यू टाइम्स ऑफ इंडिया (5 अप्रैल 1988)

में प्रकाशित हुआ। श्री कृष्णास्वामी ने रॉबर्ट से पूछा कि अंतरराष्ट्रीय खेलों में सफलता पाने के लिए आप क्या करते हैं। रॉबर्ट एम्मियन ने जवाब दिया:

> "The most important is to get rid of the defects which prevent me from improving my performance. My coach and I know that I have reserves which we must put to use."
>
> (सबसे महत्वपूर्ण है अपनी उन कमज़ोरियों को दूर करना, जो मेरी प्रदर्शन क्षमता को बेहतर बनाने में बाधा डालती हैं। मेरे कोच और मैं दोनों जानते हैं कि मुझमें छुपी हुई क्षमताएं हैं, जिनको हमें उपयोगी बनाना है।)

रॉबर्ट एम्मियन ने खेल में सफलता का जो राज़ बताया, वही ज़िंदगी में सफलता का भी राज़ है। जीवन के संघर्ष में जब कोई व्यक्ति असफल होता है, तो वह अपनी ही कमज़ोरियों की वजह से असफल होता है। अपनी आंतरिक कमज़ोरियों को पहचानना और उन्हें दूर कर बेहतर तैयारी के साथ आगे बढ़ना ही सफलता का मूल मंत्र है।

इस दुनिया में जो भी व्यक्ति सफल होता है, वह इस शर्त को पूरा करके ही सफल होता है। और जो असफल होता है, वह इसलिए असफल होता है कि वह इस शर्त को पूरा नहीं कर सका। असफल वह है, जो अपनी पूरी क्षमताओं का इस्तेमाल करने में नाकाम रहे, और सफल वह है, जो अपनी पूरी क्षमताओं का इस्तेमाल करने में सफल हो जाए।

बचत से कमाई

कुछ पदार्थ ऐसे होते हैं जो बिजली के प्रवाह को अपने अंदर से गुज़रने देते हैं। इन्हें “कंडक्टर” (Conductor) कहा जाता है। तांबा, लोहे और एल्युमिनियम जैसे पदार्थ इसी श्रेणी में आते हैं। इसलिए बिजली को पावर हाउस से अन्य स्थानों तक ले जाने के लिए इन्हीं पदार्थों के तार बनाए जाते हैं। इन तारों के माध्यम से बिजली एक जगह से दूसरी जगह पहुंचाई जाती है।

इस प्रक्रिया के दौरान ये पदार्थ गर्म हो जाते हैं और बिजली के प्रवाह में रुकावट पैदा करते हैं। इसके परिणामस्वरूप लगभग 50% बिजली बर्बाद हो जाती है। यानी पावर हाउस में जितनी बिजली उत्पन्न होती है, उसका केवल आधा हिस्सा ही उपयोग में आता है, बाकी का आधा हिस्सा बर्बाद हो जाता है।

डच वैज्ञानिक हाइक ओनेस (Heike Kamerlingh Onnes, 1853-1926) ने 1911 में एक प्रयोग के दौरान पाया कि कुछ पदार्थ ऐसे हैं, जो एक विशेष तापमान पर पहुंचने के बाद “मौलिक शून्य” (Absolute Zero) की स्थिति में आ जाते हैं। इस स्थिति में वे अपनी प्रतिरोधकता (resistance) पूरी तरह खत्म कर देते हैं और बिना किसी रुकावट के बिजली का प्रवाह कर सकते हैं। ऐसे पदार्थ को “सुपरकंडक्टर” (superconductor) और इस प्रक्रिया को “सुपरकंडक्टिविटी” (superconductivity) कहा जाता है।

अब, लगभग 80 साल की रिसर्च के बाद, यह तकनीक अपनी अंतिम मंज़िल पर पहुंच गई है। अब यह संभव हो गया है कि सुपरकंडक्टर का उपयोग करके बिजली का प्रवाह किया जाए, जिससे बिजली का 100% उपयोग किया जा सके। इसका मतलब है कि बिना बिजली उत्पादन बढ़ाए, इस्तेमाल की जा सकने वाली बिजली की मात्रा दोगुनी हो जाएगी।

इस नई खोज ने इस पुरानी कहावत को सच साबित कर दिया है:

"Electricity saved is electricity generated."

(बिजली की बचत, बिजली उत्पादन के बराबर है।)

यह एक उदाहरण है जिससे यह समझा जा सकता है कि बचत भी एक प्रकार की आय है। यदि आप अपनी आय नहीं बढ़ा सकते, तो अपने खर्च में कटौती कीजिए। खर्च में कमी करके आप अपनी आय को बढ़ा सकते हैं। यह आय बढ़ाने का एक ऐसा तरीका है, जो हर व्यक्ति के नियंत्रण में है।

युद्ध के बिना विजय

अमेरिकी साप्ताहिक "टाइम" (4 जुलाई 1988) की कवर स्टोरी जापान से संबंधित है। इसका शीर्षक बड़े अर्थपूर्ण तरीके से यह है:

"Super Japan: Can an economic giant become a global power?"

(सुपर जापान: क्या एक आर्थिक महाशक्ति एक वैश्विक शक्ति बन सकती है?)

1945 में अमेरिका ने जापान पर विजय की खुशी मनाई थी। लेकिन आज वही पराजित जापान अमेरिका पर विजय हासिल कर रहा है। शुरुआत में यह विजय केवल आर्थिक स्तर पर थी, लेकिन अब यह दूसरे क्षेत्रों में भी फैल रही है।

आज अमेरिका दुनिया का सबसे बड़ा कर्ज़दार देश है, जिस पर 400 बिलियन डॉलर का विदेशी कर्ज़ है। इसके विपरीत, जापान सबसे बड़ा कर्ज़ देने वाला देश है, जिसने दुनिया को 240 बिलियन डॉलर का कर्ज़ दिया है।

आजकल अमेरिका में बड़ी संख्या में ऐसी किताबें और लेख प्रकाशित हो रहे हैं, जिनमें यह बताया जा रहा है कि अमेरिका तेज़ी से पतन की ओर बढ़ रहा है, जबकि जापान तेज़ी से उन्नति कर रहा है। इनमें से एक किताब है:

> Prof. Paul Kennedy, "The Rise and Fall of the Great Powers."

"टाइम" के इस अंक को पढ़ने के बाद कई पाठकों ने पत्र लिखे। इनमें से कुछ पत्र 25 जुलाई 1988 के अंक में प्रकाशित हुए। इनमें एक पत्र प्रिंसटन के ब्रायन मिर्स्की (Brian Mirsky) का था। उन्होंने अपने संक्षिप्त पत्र में लिखा:

> "Your article on Japan's economic success makes it obvious that although the U.S won the war, Japan won the peace."
>
> (जापान की आर्थिक सफलता पर आपका लेख स्पष्ट करता है कि भले ही अमेरिका ने युद्ध जीता था, लेकिन जापान ने शांति जीत ली।)

जापान की यह कहानी बताती है कि ईश्वर की दुनिया में संभावनाओं का दायरा कितना व्यापक है। यहां एक पराजित देश अपने विजेता पर विजय पा सकता है – बिना युद्ध लड़े, बिना किसी संघर्ष या टकराव के।

हिकमत की बात

प्रसिद्ध उद्योगपति जी. डी. बिड़ला आज़ादी की लड़ाई में सक्रिय रूप से शामिल थे। उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को कुल मिलाकर एक करोड़ रुपये से अधिक दान किए। वे महात्मा गांधी के क़रीबी सहयोगियों में से थे। 1947 से पहले बिड़ला हाउस (दिल्ली) कांग्रेस नेताओं का स्थायी केंद्र बना हुआ था।

15 अगस्त 1947 को साढ़े दस बजे वायसराय की आखिरी आधिकारिक घोषणा रेडियो पर प्रसारित होने वाली थी, जिसमें भारत की आज़ादी का एलान होना था। सभी बड़े कांग्रेस नेता बिड़ला हाउस में बैठे घड़ी की सुइयों को देख रहे थे कि कब साढ़े दस बजे और वे वायसराय का भाषण सुनें। जी.डी. बिड़ला भी वहां मौजूद थे।

जी. डी. बिड़ला की आदत थी कि वे रात के ठीक आठ बजे सोने के लिए अपने कमरे में चले जाते थे। जैसे ही उनकी घड़ी में आठ बजे, वे सभा से उठ गए और कहा:

> “अब तो मेरा सोने का समय हो गया। वायसराय का भाषण मैं कल सुबह अखबार में पढ़ लूंगा।”

यही सफल जीवन जीने का सही तरीका है। इंसान को चाहिए कि वह “समस्या” और “उद्देश्य” में फर्क समझे। समस्या पर ध्यान तभी तक देना चाहिए, जब तक वह आपके उद्देश्य के आड़े न आए। लेकिन जब समस्या और उद्देश्य में टकराव हो जाए, तो समस्या को हालात के हवाले करके अपने उद्देश्य की ओर बढ़ जाना चाहिए।

अधिकतर लोग मसलों में उलझे रहते हैं। नतीजतन, वे अपना मानसिक संतुलन खो देते हैं और उच्च लक्ष्यों के लिए वक़्त नहीं निकाल

पाते। धीरे-धीरे वे मायूस होकर एक दिन जीवन से विदा ले लेते हैं। लेकिन यह समझदारी नहीं है। समस्याओं को हल करने में अपनी शक्ति खर्च कीजिए, लेकिन इसकी एक हद तय कीजिए। जब यह हद आ जाए, तो समस्याओं को छोड़कर अपने उद्देश्य को पकड़ लीजिए।

यह एक सच्चाई है कि समस्याओं का हल अक्सर हालात पर निर्भर करता है। चाहे इंसान कितना भी परेशान हो, अंत में वही होता है, जो हालात की मांग होती है। इसलिए सबसे बड़ी समझदारी यही है कि एक हद तक समस्या पर ध्यान देने के बाद उसे हालात के हवाले कर दें।

घड़ी में “आठ” बजने तक समस्या पर ध्यान दें। आठ बजते ही समस्या को छोड़कर सोने चले जाएं और यह मान लें कि जो भी फैसला हालात करेंगे, वही आपको मंज़ूर होगा।

सादा उसूल

मारिया टालचीफ (Maria Tallchief, b. 1925) अमेरिका की एक प्रसिद्ध महिला कलाकार हैं। उन्होंने सफल कलाकार बनने का एक सादा सिद्धांत बताया है। हालांकि यह सिद्धांत केवल कलाकारों के लिए नहीं है, बल्कि हर क्षेत्र में काम करने वाले व्यक्ति के लिए है। वह सिद्धांत है:

“See more, be more.”

(ज़्यादा देखो और ज़्यादा बनो बन जाओ।)

जिज्ञासा (curiosity) हर तरक्की की आत्मा है। व्यक्ति को चाहिए कि वह हमेशा कुछ और जानने की कोशिश करे। वह ज़्यादा देखे, ज़्यादा सुने, और सवाल पूछकर अपनी जानकारी में इज़ाफा करे। जितनी अधिक

जानकारी होगी, उतनी ही ज़्यादा तरक्की उसके हिस्से में आएगी। और ज़्यादा जानकारी उसी व्यक्ति को मिलती है, जो हमेशा सीखने और जानने की कोशिश में लगा रहता है।

अधिकतर लोग अपनी अज्ञानता (ignorance) से अनजान रहते हैं। वे न जानते हुए भी यह मानते हैं कि वे सब कुछ जानते हैं। यह मानसिकता किसी भी व्यक्ति के लिए घातक है। ऐसा व्यक्ति वास्तव में अज्ञानी होता है, लेकिन वो खुद को विद्वान समझता है। वह नासमझ होता है, लेकिन खुद को बुद्धिमान मान लेता है। ऐसा व्यक्ति भले ही खुद को क़ीमती समझे, लेकिन बाहरी दुनिया के नज़र में उसकी कोई क़ीमत नहीं होती।

सबसे अच्छा यह है कि व्यक्ति खुद को "विद्यार्थी" माने और हमेशा विद्यार्थी बना रहे। ज्ञान की तलाश से कभी न थके। उसके लिए सबसे खुशी का पल वह हो, जब वह कोई नई चीज़ सीखे या उसकी जानकारी में कोई नई बात जुड़ जाए।

जो व्यक्ति ज़्यादा सीखेगा, वह इस दुनिया में ज़्यादा सफल होगा। बुद्धि बढ़ने से इंसान के काम करने की ताकत बढ़ जाती है। बुद्धि का विकास एक आम व्यक्ति को खास बना देता है।

इस दुनिया में जानकारी की कोई सीमा नहीं है। इसलिए जानकारी बढ़ाने की भी कोई सीमा नहीं हो सकती। व्यक्ति को हमेशा खुद को "अज्ञानी" मानना चाहिए ताकि उसकी सीखने की चाहत कभी खत्म न हो।

खतरा नहीं

एक विचारक का प्रसिद्ध कथन है:

“The only thing we have to fear is fear itself.”

(हमें डरने की एकमात्र चीज़ स्वयं डर ही है।)

ज़िंदगी में ऐसे क्षण आते हैं, जो देखने में ख़तरनाक लगते हैं। इन्हें देखकर इंसान डर जाता है। लेकिन जीवन जीने का सही तरीका यह है कि इंसान खतरे को खतरा न समझे, बल्कि इसे केवल एक “समस्या” माने। समस्या मानने से दिमाग़ उसका हल खोजने में लग जाता है। इसके विपरीत, जब समस्या को खतरा समझ लिया जाता है, तो डर की मानसिकता पैदा होती है। इंसान निराश होकर बैठ जाता है और जो कुछ वह कर सकता था, वह भी करना उसके लिए मुश्किल हो जाता है।

जो व्यक्ति जीवन की जद्दोजहद के मैदान में उतरता है, उसे सबसे पहले यह जानना चाहिए कि वह अकेला नहीं है। यहां उसकी तरह कई और लोग भी हैं, जो अपने हौसले के मुताबिक़ जीवन की जद्दोजहद में लगे हुए हैं। उसके साथ प्रकृति का एक व्यापक सिस्टम भी है। इस सिस्टम में सर्दी भी है और गर्मी भी, सूखा भी है और पानी भी, मैदान भी हैं और पहाड़ भी, फूल भी हैं और कांटे भी।

इन दोहरे हालात की वजह से इंसान के सामने कई तरह की रुकावटें आती हैं। बार-बार ऐसा होता है कि उसकी गाड़ी रुकती हुई नज़र आती है। ऐसे हालात हर इंसान के साथ आते हैं, और ये आते ही रहेंगे, हम इन्हें चाहें या न चाहें।

लेकिन हमारे लिए तसल्ली की बात यह है कि दुनिया का सिस्टम ऐसा बनाया गया है कि अगर यहां विरोध करने वाले लोग हैं, तो उनके साथ

सहयोग करने वाले लोग भी मौजूद हैं। जहां रुकावटें खड़ी होती हैं, वहीं संभावनाओं के दरवाजे भी हर ओर खुले रहते हैं।

जो इंसान विरोधों या रुकावटों में उलझकर रह जाता है, वह अपने सफर को पूरा नहीं कर पाता। इसके विपरीत, जो व्यक्ति रुकावटों का सामना करते हुए अपनी सोच को समाधान खोजने की तरफ़ लगा देता है, वह ज़रूर आगे बढ़ने का रास्ता पा लेता है। उसे कोई ताकत उसकी मंज़िल तक पहुंचने से रोक नहीं सकती।

जोश बिना होश

मिकी थॉम्पसन (Mickey Thompson, b. 1928) अमेरिका में पैदा हुआ। उसने कार रेसिंग में अंतरराष्ट्रीय शोहरत हासिल की, यहां तक कि उसे "स्पीड किंग" कहा जाने लगा। लेकिन मार्च 1988 में उसकी गोली मारकर हत्या कर दी गई। उस समय उसकी उम्र 59 वर्ष थी।

मिकी थॉम्पसन बेहद साहसी व्यक्ति थे। नवंबर 1987 में उन्होंने अपने दोस्तों को लॉस एंजेलेस में बताया कि कुछ लोग उन्हें फोन पर जान से मारने की धमकी दे रहे हैं। उनके दोस्त एर्नी अल्वाराडो (Ernie Alvarado) ने बताया कि मिकी को पता था कि कौन उन्हें मारना चाहता है। दोस्त ने पूछा:

"क्या तुमने इसकी सूचना पुलिस को दी है?"

मिकी ने जवाब दिया: "इसकी कोई ज़रूरत नहीं।"

लेकिन मिकी गलती पर थे। मार्च 1988 की एक सुबह, जब वे अपनी 41 वर्षीय पत्नी ट्रूडी (Trudy) के साथ कैलिफोर्निया के ब्रैडबरी में अपने

घर से ऑफिस के लिए निकल रहे थे, तभी दो लोगों ने उन पर बंदूक से हमला कर दिया। ट्रूडी निराशा में कहती रहीं:

> "Don't shoot! Don't shoot!"
>
> (मत मारो! मत मारो!)

लेकिन गोलियों की बौछार ने कुछ ही मिनटों में दोनों की जान ले ली। मिकी ने 1960 में 400 मील प्रति घंटे की रफ्तार से कार चलाकर अमेरिका का पहला तेज़ रफ्तार चालक होने का खिताब जीता था। यह यात्रा उन्होंने एक विशेष कार के जरिए की थी, जिसमें चार इंजन लगे थे।

साप्ताहिक "टाइम" (28 मार्च 1988) ने इस घटना पर टिप्पणी करते हुए लिखा:

> "The disregard for danger that marked Thompson's driving career may have led to his death in his own front yard."
>
> (खतरे की परवाह न करना, जिसने मिकी थॉम्पसन को तेज़ रफ्तार का राजा बनाया, वही उनके लिए मौत का कारण बन गया।)

बहादुरी और निडरता अच्छी चीजें हैं। लेकिन इंसान आखिरकार कमज़ोर है; वह असीमित बहादुरी या निडरता का बोझ नहीं उठा सकता। इसलिए बहादुरी और निडरता के साथ यह भी ज़रूरी है कि इंसान सावधान रहे। उसे बुद्धिमानी और विवेक का ख्याल रखना चाहिए।

बिना सोचे-समझे लिया गया जोखिम उतना ही गलत है, जितना कि कायरता से पीछे हटना।

दुश्मन से सीखना

1949 में जापानियों ने अपने यहां एक औद्योगिक सेमिनार आयोजित किया। इस सेमिनार में उन्होंने अमेरिका के डॉ. एडवर्ड डेमिंग (Dr. Edward Deming) को खास निमंत्रण देकर बुलाया। डॉ. डेमिंग ने अपने लेक्चर में उच्च औद्योगिक उत्पादन के लिए एक नया सिद्धांत पेश किया। यह सिद्धांत था "क्वालिटी कंट्रोल" (Quality Control) का। (हिंदुस्तान टाइम्स, 28 दिसंबर 1986)

दूसरे विश्व युद्ध में जापान को अमेरिका के हाथों अपमानजनक हार का सामना करना पड़ा था। इस दृष्टि से जापानियों के दिल में अमेरिकियों के खिलाफ नफरत होनी चाहिए थी। लेकिन जापानियों ने खुद को इन नकारात्मक भावनाओं से ऊपर उठा लिया। इसी वजह से वे यह कर सके कि एक अमेरिकी प्रोफेसर को अपने सेमिनार में बुलाएं और उसके बताए गए सिद्धांत को खुले दिल से स्वीकार करें।

जापानियों ने डॉ. डेमिंग के क्वालिटी कंट्रोल के सिद्धांत को पूरी तरह अपनाया। उन्होंने अपने पूरे औद्योगिक तंत्र को "बिना किसी दोष" (Zero-Defect) की नीति पर चलाना शुरू किया। यानी ऐसा उत्पादन करना, जिसमें किसी भी प्रकार का कोई दोष न हो। जापानियों की गंभीरता और उनका समर्पण (Dedication) इस बात की गारंटी बना कि यह लक्ष्य पूरी तरह हासिल हो।

जल्द ही जापानी कारखानों में बिना किसी दोष वाला सामान बनने लगा। यहां तक कि ब्रिटेन के एक दुकानदार ने कहा:

"अगर मैं जापान से एक मिलियन सामान मंगाता हूं, तो मुझे

> यकीन होता है कि उनमें से एक भी सामान में कोई कमी नहीं होगी।”

नतीजा यह हुआ कि पूरी दुनिया में जापान के उत्पादों पर 100% भरोसा किया जाने लगा। जापान की व्यापारिक सफलता बढ़ती चली गई। यहां तक कि जापान ने अमेरिका के बाज़ार पर भी कब्ज़ा कर लिया, जिसके एक विशेषज्ञ से उन्होंने क्वालिटी कंट्रोल का यह सिद्धांत सीखा था।

इस दुनिया में बड़ी सफलता वे लोग हासिल करते हैं, जो हर किसी से कुछ सीखने की कोशिश करते हैं – चाहे वह उनका दोस्त हो या दुश्मन।

सफलता का राज़

एक पश्चिमी विचारक का कथन है:

> “That which does not kill me makes me stronger.”
>
> (जो चीज़ मुझे नहीं मारती, वह मुझे और भी मज़बूत बना देती है।)

जब इंसान किसी बड़ी मुश्किल का सामना करे और हिम्मत न हारे, बल्कि सोच-विचार के जरिए उसका हल निकाले, तो वह अपने अंदर एक नई ताकत पैदा कर लेता है। उसने अपने भीतर वह क्षमता जगा ली, जिससे वह मुख़ालिफ़ हालात का सामना कर सके और रुकावटों के बावजूद आगे बढ़ता रहे। मुश्किलें नासमझ इंसान को तबाह कर देती हैं, लेकिन समझदार इंसान के लिए यही मुश्किलें तरक्की की सीढ़ी बन जाती हैं।

ज़िंदगी में सफल होने के लिए सबसे महत्वपूर्ण चीज़ “उच्च

विचारधारा” है। हमें उन सवालों से ऊपर उठना चाहिए जो अतीत या गुज़रे हुए दुखों पर आधारित होते हैं।

“मेरे साथ ऐसा क्यों हुआ?” इस सवाल के बजाय इंसान को उन बातों पर सोचना चाहिए जो भविष्य के रास्ते खोलने वाले हों— “अब जब यह पेश आचुका है, मुझे इसके लिए क्या करना चाहिए”:

> ‘’We need to get over the questions that focus on the past and on the pain—Why did this happen to me?—and ask instead the question which opens doors to the future. Now that this has happened, what shall I do about it?’’
>
> (Rabbi Haroid Kushner, *When Bad Things Happen to Good People*)

यह दुनिया ऐसी बनी है कि यहां नाखुशगवार घटनाएं अक्सर होती रहती हैं। इंसान बार-बार मुश्किलों में घिरता है। ऐसी स्थिति में सफल जीवन का केवल एक ही राज़ है—अतीत को भुलाकर भविष्य के बारे में सोचना। वह खोए हुए अवसरों पर अफसोस करने के बजाय, अपनी पूरी ऊर्जा उन संभावनाओं पर लगाए जो अभी भी उसके पास मौजूद हैं, जो अब तक नष्ट नहीं हुई हैं—वर्तमान को स्वीकार करना इंसान के लिए भविष्य के दरवाजे खोलता है। और वर्तमान को न मानने से इंसान न केवल वर्तमान खो देता है, बल्कि आने वाले भविष्य से भी वंचित हो जाता है।

मुश्किल में आसानी

पारंपरिक तरीके के कोल्हू में जब गन्ना डाला जाता है, तो उसमें दबाव कम होता है और गन्ने को बेलनों के बीच से सिर्फ एक बार निकाला जाता है। नतीजतन, गन्ने का लगभग 25% रस उसके अंदर ही रह जाता है।

बिजली से चलने वाले क्रशर (Crusher) में तुलनात्मक रूप से ज़्यादा दबाव होता है और गन्ने को बेलनों के बीच से दो बार निकाला जाता है। फिर भी, लगभग 15% रस नहीं निकल पाता। बड़ी-बड़ी मिलों में बहुत अधिक दबाव डाला जाता है और गन्ने को चार बार मशीन के बेलनों के बीच से निकाला जाता है। इसका नतीजा यह होता है कि गन्ने का लगभग सारा रस बाहर निकल आता है।

यह एक उदाहरण है जिससे यह अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि "दबाव" कितना महत्वपूर्ण है। अल्लाह ने इस दुनिया में जो चीजें बनाई हैं, उनके अंदर अनगिनत संभावनाएं रखी हैं। लेकिन किसी चीज़ के अंदर छुपी हुई क्षमता तभी बाहर आती है जब उस पर दबाव डाला जाए। दबाव जितना अधिक होगा, उतनी ही अधिक उसकी छुपी हुई क्षमता बाहर आएगी।

यही स्थिति इंसान की भी है। हर इंसान के अंदर जन्मजात अनगिनत क्षमताएं होती हैं। आम परिस्थितियों में ये क्षमताएं अंदर ही छुपी रहती हैं। वे तभी प्रकट होती हैं जब इंसान दबाव का सामना करता है और उसकी शख्सियत को निचोड़ने वाली प्रक्रिया से गुज़ारा जाता है।

इतिहास में जितने भी लोगों ने बड़ी तरक्की की है, वे वही लोग थे जिन्होंने अपने माहौल में दबाव के हालात का सामना किया। जिन्होंने क़ुरान 94:5-6 के इस कथन *"इन्न म'अल उस्र युस्रा"* (हर कठिनाई के साथ आसानी है) के रचनात्मक रहस्य को समझा। जिन्होंने जीवन के मैदान में

इस हौसले के साथ क़दम रखा कि वे मुश्किलों की ज़मीन पर सफलता का पौधा उगाएंगे।

इंसानी नज़र कठिनाई को सिर्फ कठिनाई के रूप में देखती है। लेकिन ईश्वरीय नज़र वह है, जो कठिनाई को आसानी के रूप में देखना सीख ले।

दुकानदारी

दुकानदार वह है जो दुकानदार बनने के साथ-साथ ग्राहक भी बन जाए। जो सिर्फ बेचने वाला न हो, बल्कि साथ ही खरीदने वाला भी हो। वह ख़ुद को भी समझे और साथ में अपनी दुकान पर आने वाले संभावित खरीदार को भी समझे।

दुकानदार और ग्राहक दोनों बिल्कुल अलग तरह के इंसान होते हैं। दुकानदार का ध्यान पैसे की तरफ होता है, जबकि ग्राहक का ध्यान सामान की तरफ। दुकानदार की नज़र ग्राहक की जेब पर होती है, और ग्राहक की नज़र दुकानदार के सामान पर। लेकिन जो दुकानदार सिर्फ यह जानता हो कि उसे ग्राहक की जेब से पैसा निकालना है, वह कभी बड़ा दुकानदार नहीं बन सकता।

सफल दुकानदार वह है जो ग्राहक को एक किताब की तरह पढ़े। जो ग्राहक की ज़रूरत को अपनी ज़रूरत बनाए। जो ग्राहक के दिल की धड़कन को अपने सीने में महसूस करे। जो यह समझे कि ग्राहक उससे क्या चाहता है। जो यह जाने कि ग्राहक अपनी इच्छा के अनुसार किस चीज़ से संतुष्ट होगा।

एक दुकानदार वह है जो सड़क पर दुकान खोलकर बैठ जाए। कोई ग्राहक आए तो सामान पर छपी हुई क़ीमत देखकर उसे दाम बता दे। ग्राहक

अगर सामान मांगे तो सामान दे दे। अगर ग्राहक सामान देखकर रख दे, तो दुकानदार फिर अपनी सीट पर बैठ जाए या इत्मीनान से अखबार पढ़ने लगे।

दूसरा दुकानदार वह है जिसका शरीर दुकान में हो, लेकिन उसका दिमाग़ सड़कों और बाज़ारों में घूमता हो। मानसिक रूप से वह ग्राहकों के बीच चल-फिर रहा हो। ग्राहक के बताने से पहले ही वह उसकी ज़रूरत और मांग को जानता हो। वह ग्राहक को एकतरफा खुश करने की कोशिश करे, चाहे ग्राहक ने किसी बात से उसे नाराज़ ही क्यों न कर दिया हो।

वह आखिरी हद तक ग्राहक का हितैषी बन जाए, चाहे ग्राहक पहली बार उसकी दुकान पर आया हो और यह संभावना हो कि वह दोबारा कभी न आए।

सफल यात्रा

20 जनवरी 1984 की सुबह थाई एयरवेज का एक विमान (Boeing 747) कराची से पश्चिम की ओर उड़ान भर रहा था। यह विमान 29,000 फीट की ऊंचाई पर उड़ रहा था। उसी समय इंडियन एयरलाइंस का एक विमान मुंबई से दिल्ली की ओर उड़ने वाला था। इस विमान को भी 29,000 फीट की ऊंचाई पर उड़ना था। उड़ान भरने से ठीक पहले एयर ट्रैफिक कंट्रोल को पता चला कि थाई एयरवेज का विमान उसी दिशा में आ रहा है।

यदि इंडियन एयरलाइंस का पायलट अपने प्रोग्राम के अनुसार जहाज़ उड़ाता, तो मंदसौर (मध्य प्रदेश) के ऊपर दोनों विमानों की टक्कर हो जाती। इससे थाई एयरवेज और इंडियन एयरलाइंस दोनों के विमान और उनके यात्री नष्ट हो जाते। (*टाइम्स ऑफ इंडिया*, 25 जनवरी 1984)

एयर ट्रैफिक कंट्रोल को अंतिम क्षण में इस बात की जानकारी मिली। उन्होंने तुरंत इंडियन एयरलाइंस के कप्तान को दो विकल्प दिए:

1. 25,000 फीट की ऊंचाई पर उड़ान भरें।
2. यदि 29,000 फीट की ऊंचाई पर ही उड़ान भरनी है, तो 25 मिनट देरी से उड़ान शुरू करें।

इंडियन एयरलाइंस के कप्तान ने दूसरी सलाह पसंद की और 25 मिनट की देरी के बाद विमान उड़ाया। इस तरह दोनों विमान मध्य-आकाशीय टक्कर (mid-air collision) से बच गए।

इंडियन एयरलाइंस का विमान अपने मूल कार्यक्रम के अनुसार सुबह 7 बजे मंदसौर के ऊपर से गुजरता। लेकिन कार्यक्रम में बदलाव के बाद यह सुबह साढ़े 7 बजे वहां से गुजरा। इंडियन एयरलाइंस के एक अधिकारी ने इस घटना का उल्लेख करते हुए कहा:

> "It was a miracle which saved passengers on both aircraft."
>
> (यह एक चमत्कार था जिसने दोनों विमानों के यात्रियों को बचा लिया।)

यही ज़िंदगी का भी मामला है।

1. यदि आप "29,000 फीट" की ऊंचाई पर उड़ना चाहते हैं, तो यह न भूलें कि वहां और लोग भी उड़ रहे हैं। ऐसी स्थिति में आपके पास दो ही विकल्प हैं:
2. दूसरों का ख्याल न करते हुए उड़ान भरें और फिर नष्ट होकर झूठी कुर्बानी की मिसाल बनें।

या फिर ऐसा "चमत्कार" दिखाएं कि या तो दूसरों से नीचे उड़कर आगे निकल जाएं या फिर "आधे घंटे" की देरी से उड़ान शुरू करें।

दूसरी स्थिति में आप सफल रहेंगे और सुरक्षित अपनी मंज़िल तक पहुंच जाएंगे।

सीमाओं को लांघते हुए

"मैंने 1982 में अपनी टांग खो दी थी और तभी से मैं दुनिया के चारों ओर समुद्री यात्रा कर रहा हूं," यह बात ट्रिस्टन जोन्स (Tristan Jones) ने बैंकॉक में थाईलैंड के विकलांग बच्चों के एक समूह से कही। वे एक नाविक, लेखक और साहसी व्यक्ति हैं। उनका संदेश बिल्कुल स्पष्ट था:

> "आप ये इंतज़ार न करें कि दूसरे लोग आपकी मदद करेंगे। आपको आत्मनिर्भर बनने और अपने तरीके से काम करने का हुनर सीखना चाहिए," दाढ़ी वाले कप्तान ने कहा।

53 वर्षीय जोन्स 1952 से अपने तरीके से असाधारण काम करते आ रहे हैं, जब उन्हें ब्रिटेन की रॉयल नेवी से यह कहकर हटा दिया गया था कि वे शारीरिक रूप से समुद्र के लिए अनुपयुक्त हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान सैन्य सेवा के दौरान उनके पैर में घाव हो गया था। यह घाव अंततः उनकी विकलांगता का कारण बना और 1982 में उनका बायां पैर घुटने के ऊपर से काट दिया गया।

1953 से जोन्स दुनिया को यह साबित करते आ रहे हैं कि वे शारीरिक रूप से समुद्र के लिए अनुपयुक्त नहीं हैं। पिछले 34 वर्षों में उन्होंने 6,40,000 किलोमीटर की समुद्री यात्रा की है। उन्होंने बीस बार अटलांटिक महासागर पार किया है (जिसमें से नौ बार अकेले) और पृथ्वी के चारों ओर तीन बार समुद्री यात्रा पूरी की है।

“I lost my leg in 1982 and have been sailing around the world ever since,” Tristan Jones – sailor, author, and adventurer – told a group of handicapped Thai children in Bangkok, reports DPA. The message was clear:

“You must not wait for people to help you. You must learn to help yourself and must do things your own way,” the bearded Welsh captain said.

Jones, 53, has been doing extraordinary things his own way since 1952 when he was discharged from Britain’s Royal Navy for being “physically unfit for sea.” He had received a leg wound in active duty during World War II, which eventually led to his invalid status and in 1982 resulted in the amputation of his left leg, above the knee.

Since 1953, Jones has been proving to the world that he is anything but “physically unfit for sea.” In the past 34 years, he has sailed 640,000 kilometres (all in crafts under 40 feet), made 20 trans-Atlantic ocean crossings (nine single-handed), and circumnavigated the world three times.

(*The Times of India,* New Delhi, August 18, 1987)

सफलता का रहस्य

डॉ. सी. वी. रमन (Sir Chandrasekhara Venkata Raman, 1888-1970) भारत के महानतम वैज्ञानिकों में से एक हैं। 1930 में उन्हें भौतिकी का नोबेल पुरस्कार मिला। वे विज्ञान के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार पाने वाले पहले एशियाई थे। इसके बाद वे विश्व भर में प्रसिद्ध हो गए। उनकी वैज्ञानिक खोज "रमन प्रभाव (Raman Effect)" आज विज्ञान के स्थापित सिद्धांतों में मानी जाती है।

रमन का जन्म एक साधारण परिवार में हुआ। उनके पिता मात्र दस रुपये महीने की तनख्वाह पर स्कूल शिक्षक थे। उन्होंने कठिन हालात में अपनी असाधारण मेहनत से विज्ञान के क्षेत्र में ऊंचा स्थान प्राप्त किया। उन्होंने अपनी सफलता की यात्रा को इन शब्दों में व्यक्त किया:

> "A long history of frustration, disappointment, struggle and every kind of tribulation."
>
> (एक लंबा इतिहास असफलता, निराशा, संघर्ष और हर तरह की कठिनाइयों का।)

एक व्यक्ति ने रमन की वैज्ञानिक सफलता को कम आंकने की कोशिश करते हुए कहा कि वे अपनी खोज तक सिर्फ "संयोग" से पहुंचे हैं, जैसे कई अन्य वैज्ञानिक भी संयोग से अपनी खोज करते हैं। यह सुनकर रमन ने गंभीरता से कहा:

> "The idea that a scientific discovery can be made by accident is ruled out by the fact that the accident, if it is one, never occurs except to the right man."

(यह विचार कि वैज्ञानिक खोज संयोग से की जा सकती है,
इस तथ्य की वजह से गलत है कि संयोग, अगर होता भी है,
तो केवल सही व्यक्ति के साथ ही होता है।)

डॉ. रमन ने अपनी ज़िंदगी की आखिरी खोज का सार इन शब्दों में बयान किया:

"The right man, right thinking, right instruments,
and right results."

(सही व्यक्ति, सही सोच, सही उपकरण, और सही परिणाम।)

उद्देश्य की अहमियत

कर्नाटक के हासन ज़िले में एक गांव है जिसका नाम थपरघट्टा है। यहां एक व्यक्ति था जिसका नाम लछ नाइक था, जो झोंपड़ी में रहता था और चौकीदारी का काम करता था। उसके चार बच्चे थे। उसने निश्चय किया कि वह अपनी तीन बेटियों को "देवी चामुंडेश्वरी" को बलि चढ़ा देगा।

23 अप्रैल 1988 को उसने देवी की मूर्ति लाई, उसकी पूजा की और इसके बाद अपनी तीन बेटियों (डेढ़ साल, तीन साल और तेरह साल) को दरांती से मार डाला। जब उसके 8 वर्षीय बेटे राजकुमार ने इसका विरोध किया, तो उसने उस पर भी हमला कर दिया, जिससे उसका दायां हाथ कट गया। इस पागलपन भरे कृत्य के बाद वह भाग गया। चार दिन बाद उसकी लाश एक आम के पेड़ से लटकी हुई मिली।

लछ नाइक की पत्नी लली थम्मा (35 वर्ष) को मुख्यमंत्री राहत कोष से 5000 रुपये मिले और इंडियन रेड क्रॉस सोसाइटी से 1000 रुपये की

मदद मिली। अब वह अपने बेटे के भविष्य के बारे में योजना बना रही है। उसका विचार है कि उसके बेटे को पढ़ाई करनी चाहिए। वह इसके लिए तैयार है कि अगर उसे बेटे की पढ़ाई के लिए जिंदगीभर काम करना पड़े, तो वह ऐसा करेगी।

उसे 50 रुपये प्रति माह विधवा पेंशन मिलने की उम्मीद है, और उसके बेटे को अपंगता भत्ते के रूप में इतनी ही राशि मिलेगी। राजकुमार, जिसके दाएं हाथ की पांचों उंगलियां कट चुकी हैं, अब बाएं हाथ से लिखना सीख रहा है। (टाइम्स ऑफ इंडिया, 28 अप्रैल 1988)

लली थम्मा का सब कुछ बर्बाद हो चुका था। ऐसे में यह स्वाभाविक था कि वह भी आत्महत्या कर लेती या अपने बेटे के साथ रोने और मातम करने में लग जाती। लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। उसने सब कुछ भुलाकर सकारात्मक कदम उठाने की योजना बनाई।

इसका कारण यह था कि उसने अपने अपंग बेटे के भविष्य को संवारने में अपने लिए एक उद्देश्य खोज लिया था।

“उद्देश्यपूर्ण व्यक्ति कभी हताश नहीं होता। इस दुनिया में हताश वही है, जो अपने उद्देश्य को खो देता है।”

स्वीकृति

सैयद मुश्ताक अली क्रिकेट के एक बेहद मशहूर खिलाड़ी हैं। शरद वर्मा ने उनका एक इंटरव्यू लिया, जो हिंदुस्तान टाइम्स (15 मई 1987) में प्रकाशित हुआ। वे लिखते हैं कि भारतीय क्रिकेट के इतिहास में बहुत कम लोगों ने वह असाधारण स्थान हासिल किया है, जो सैयद मुश्ताक अली ने किया। लगभग 20 वर्षों तक वे क्रिकेट के हीरो बने रहे।

उनके बारे में सर नेविल कार्डस (Sir Neville Cardus) ने कहा था कि मुश्ताक एक "बाज़ीगर" हैं, जो नामुमकिन को मुमकिन बनाकर सफलता हासिल कर सकते हैं। इसी तरह कीथ मिलर (Keith Miller) ने कहा कि वे हमारे समय के अविश्वसनीय रूप से बेहतरीन खिलाड़ी हैं।

सैयद मुश्ताक अली की शोहरत 1930 में शुरू हुई, जब उनकी उम्र सिर्फ 16 वर्ष थी। वे भले ही कम खेलते थे, लेकिन जब खेलते थे, तो उनका प्रदर्शन सबसे उत्कृष्ट होता था।

1945-46 में कोलकाता में ऑस्ट्रेलिया और भारत की टीमों का मुकाबला था। सैयद मुश्ताक अली को भारतीय टीम से बाहर कर दिया गया। इस पर कोलकाता में जबरदस्त प्रदर्शन हुए और हर तरफ यह नारा गूंज उठा:

"No Mushtaq, No Test"

(मुश्ताक नहीं, तो टेस्ट नहीं)

आखिरकार आयोजकों को सैयद मुश्ताक अली को टीम में शामिल करना पड़ा।

अब सैयद मुश्ताक अली की उम्र 72 साल हो चुकी है। शरद वर्मा से अपने अनुभव बताते हुए उन्होंने कहा कि एक बार इंग्लैंड में भारत और इंग्लैंड की टीमों का मुकाबला था। इंग्लैंड टीम के कप्तान वॉली हैमंड (Wally Hammond) थे। सैयद मुश्ताक अली ने रन बनाना शुरू किए और 90 से आगे बढ़ गए।

हालांकि वॉली हैमंड विरोधी टीम के कप्तान थे, फिर भी वे अपनी स्वीकृति (Acceptance) के जज़्बे को रोक न सके। उन्होंने तेज़ी से आकर मुश्ताक अली का कंधा थपथपाया और कहा:

"Steady, my boy, steady, get your hundred first."
(जमे रहो, मेरे बेटे, जमे रहो, अपना शतक पूरा करो।)

"मुर्दा इंसान" की सबसे बड़ी पहचान होती है "स्वीकृति का अभाव" और "जिंदा इंसान" की सबसे बड़ी पहचान होती है "स्वीकृति"।

जिंदा इंसान जब किसी सच्चाई या खूबी को देखता है, तो वह उसको स्वीकार किए बिना नहीं रह सकता, भले ही यह स्वीकृति अपनी हार मानने के बराबर ही क्यों न हो।

ऊँची सोच

टोक्यो के एक प्रकाशन संस्थान ने 160 पृष्ठों की एक पुस्तक प्रकाशित की है। यह पुस्तक जापानी समाज और जापानी व्यक्तित्व के स्वभाव का परिचय देती है। पुस्तक का नाम है:

Chie Nakane, Japanese Society (1987)

इस पुस्तक की लेखिका ची नाकाने हैं, जो टोक्यो विश्वविद्यालय में सामाजिक मानवशास्त्र (Social Anthropology) की प्रोफेसर हैं। उन्होंने विस्तार से बताया है कि जापानी लोगों की मानसिकता कैसी होती है। उनके अनुसार, जापानी व्यक्ति की मानसिकता को संक्षेप में इस तरह व्यक्त किया जा सकता है:

> "The constant desire to rise a little higher than the average."
>
> (औसत से ऊपर उठने की निरंतर इच्छा।)

लेखिका के अनुसार, यही जापानी लोगों का जीवन-दर्शन है। वे इसे धार्मिक शिक्षा की तरह पवित्र मानते हैं और निरंतर इस पर अमल करते हैं।

ज़िंदगी में ठहराव नहीं होता। व्यक्ति या तो ऊपर उठता है या नीचे गिरता है। यह सिद्धांत इतना स्पष्ट है कि अगर आप खुद को ऊपर नहीं उठाते, तो आप स्वतः ही नीचे गिरने लगते हैं। नीचे गिरने के लिए किसी अतिरिक्त प्रयास की आवश्यकता नहीं होती।

यह सिद्धांत धार्मिक और सांसारिक दोनों मामलों में समान रूप से सत्य है। धार्मिक दृष्टिकोण से सच्चा ईमान वाला वही है जिसका ईमान निरंतर बढ़ता रहे। जिस व्यक्ति के ईमान में बढ़ोतरी रुक जाती है, वह ईमान की गिरावट की ओर बढ़ने लगता है। यहां किसी एक स्थिति में रुकना संभव नहीं है।

यही मामला दुनिया का है। दुनियावी मामलों में भी व्यक्ति को निरंतर विकास की ओर बढ़ते रहना चाहिए। जो व्यक्ति विकास की यात्रा नहीं करता, वह पहले जड़ता ठहराव (Stagnation) का शिकार हो जाता है और फिर धीरे-धीरे समाप्त हो जाता है— हमेशा अपने विकास की चिंता करें।

विकास की चिंता न करना, अपने आपको मृत्यु के हवाले करने के समान है।

ज़िंदा या मुर्दा

गाड़ी के चलने के दो तरीके होते हैं। एक यह कि उसे एक होशमंद ड्राइवर चलाए और दूसरा यह कि उसके इंजन को चालू करके उसे सड़क पर छोड़ दिया जाए। देखने में दोनों गाड़ियां चलती हुई नज़र आएंगी, लेकिन इन दोनों में बहुत बड़ा फर्क है।

ड्राइवर वाली गाड़ी चलकर अपनी मंज़िल तक पहुंचती है, जबकि

बिना ड्राइवर वाली गाड़ी का अंजाम यह होता है कि वह कुछ देर तक दौड़ती है और फिर किसी चीज़ से टकराकर खत्म हो जाती है।

एक समझदार ड्राइवर जब गाड़ी चलाता है, तो वह रास्ते को देखता हुआ गाड़ी चलाता है। ज़रूरत के मुताबिक़ वह कभी रुकता है और कभी चलता है। कभी आगे बढ़ता है और कभी पीछे हटता है। कभी सीधे चलता है और कभी दाएं या बाएं मुड़ता है। यही वह गाड़ी है जो कामयाबी के साथ अपनी मंज़िल तक पहुंचती है।

इसके विपरीत, जो गाड़ी बिना ड्राइवर के दौड़ रही हो, वह सिर्फ़ एक तरफ़ा दौड़ती रहेगी। उस गाड़ी में न तो अक्ल है और न ही समझ। वह न तो रुक सकती है और न पीछे हट सकती है। न वह मुड़ सकती है और न धीमी हो सकती है। वह बस अंधाधुंध आगे की ओर दौड़ती रहेगी। ऐसी गाड़ी का एकमात्र अंजाम यह है कि वह कुछ दूर चले और फिर किसी से टकराकर नष्ट हो जाए।

इस उदाहरण से जिंदा इंसान और मुर्दा इंसान का फर्क समझ में आता है। जिंदा इंसान होशमंद इंसान होता है, जबकि मुर्दा इंसान बेअक्ल और बेहोश इंसान होता है।

जिंदा इंसान जब किसी समय बोलेगा, तो मौके के हिसाब से चुप भी हो जाएगा। वह जब चलेगा, तो ज़रूरत के मुताबिक रुक भी जाएगा। वह जब आगे बढ़ेगा, तो हालात देखकर पीछे भी हट जाएगा। वह जब तेज़ दौड़ेगा, तो कभी अपनी रफ्तार धीमी भी कर लेगा। इसका नतीजा यह होगा कि वह अपनी कामयाबी तक पहुंच जाएगा।

इसके विपरीत, मुर्दा इंसान वह है, जिसमें इस तरह की समझ नहीं होती। जो बोलने के बाद चुप न हो सके, जो चलने के बाद रुकना न जाने, जो सिर्फ़ अपनी शर्तें मनवाना जानता हो और दूसरे की शर्तों को मानना उसके लिए नामुमकिन हो।

ऐसा इंसान मुर्दा इंसान है। ख़ुदा की दुनिया में सिर्फ़ यह मुक़द्दर है की वो तबाही और बर्बादी का निशान बनकर रह जाए।

खोने के बाद भी

ए पी (लंदन) की दी हुई एक खबर इस प्रकार प्रकाशित हुई है — मिस्टर स्टेनली जाकी हंगरी में पैदा हुए। वे एक काले वस्त्रधारी भिक्षु, ईसाई विद्वान और भौतिकी के प्रोफेसर हैं। उन्होंने कहा कि दस साल तक आवाज़ से वंचित रहना उनके लिए उनके विज्ञान और धर्म से संबंधित लेखन पर 2 लाख 20 हजार डॉलर जीतने का जरिया बना।

1953 में मेरे गले की सर्जरी के एक हादसे ने मुझे लिखने और सोचने का समय दिया, और ऐसा हमेशा नहीं होता। बहुत से बेहद लोकप्रिय किताबों के लेखक ऐसे हैं, जो बिल्कुल सोचते ही नहीं हैं, उन्होंने कहा। मिस्टर जाकी, जिन्होंने धर्म में प्रगति के लिए टेम्पलटन पुरस्कार प्राप्त किया है, यह मानते हैं कि ईसाइयत ने वह मानसिक वातावरण तैयार किया जिसने विज्ञान को विकास का अवसर दिया। वह इस विचार के कड़े आलोचक हैं कि विज्ञान और ईश्वर एक-दूसरे से असंबंधित चीजें हैं।

> Mr. Stanley L. Jaki, a Hungarian-born Benedictine monk, theologian and physics professor, says losing his voice for ten years helped him win a $220,000 prize for his writings on science and faith.'' A surgical mishap in my throat in 1953 gave me time to write and to think, and that's not always the

> case. Many writers of best-sellers don't think at all,'' the scholar said. Mr. Jaki, who won the Templeton Prize for progress in religion, holds that Christianity created the intellectual climate which allowed science to flourish. He is a stern critic of the view that science and God are unrelated. (*The Times of India,* New Delhi, May 14, 1987).

मिस्टर जाकी के साथ यह हादसा हुआ कि गलत ऑपरेशन की वजह से उनकी बोलने की क्षमता खत्म हो गई। लेकिन उनकी सोचने और पढ़ने की क्षमता बरकरार रही। उन्होंने अपनी इस बची हुई क्षमता का भरपूर उपयोग किया। दस साल की खामोश मेहनत से उन्होंने एक ऐसी किताब लिखी, जिसका इनाम सवा दो लाख डॉलर था।

हादसे के बाद जो लोग खोई हुई चीज़ का ग़म करते हैं, वे सिर्फ अपनी बर्बादी को बढ़ाते हैं। लेकिन जो लोग हादसे के बाद बची हुई चीज़ों पर ध्यान केंद्रित करते हैं, वे फिर से सफलता की मंज़िल पर पहुँच जाते हैं।

मानसिक एकाग्रता

चार्ल्स डार्विन (1882-1809) आधुनिक युग के सबसे प्रसिद्ध विचारकों में से एक है। उसके विचारों से यद्यपि लेखक को सहमति नहीं है, लेकिन यह एक सच्चाई है कि आधुनिक मनुष्य के बौद्धिक निर्माण में जितना योगदान डार्विन का है, उतना शायद ही किसी अन्य विचारक का हो।

डार्विन ने आधुनिक दुनिया में यह असाधारण स्थान अपनी असाधारण

मेहनत के माध्यम से प्राप्त किया। एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका (1984) के लेख में उसके जीवन के बारे में लिखा गया है:

> "All his mental energy was focused on his subject, and that was why poetry, pictures, and music ceased in his mature life to afford him the pleasure that they had given him in his earlier days" (Vol. 5, p. 495).

डार्विन की सारी मानसिक शक्ति उसके विषय पर केंद्रित हो गई थी। और यही कारण था कि कविता, चित्र और संगीत उसके जीवन के बाद के दिनों में उसे वह खुशी नहीं दे सके, जो उन्होंने उसके आरंभिक जीवन में दी थी।

यह मानसिक एकाग्रता किसी भी काम में उच्च सफलता हासिल करने के लिए अत्यंत आवश्यक है, चाहे वह सही काम हो या गलत। जब तक व्यक्ति अपने उद्देश्य में इतना खो न जाए कि बाकी सभी चीजें उसे भूल जाएं और किसी दूसरी चीज़ में उसे ख़ुशी न मिले, तब तक वह कोई बड़ी सफलता हासिल नहीं कर सकता। सभी महान लोगों ने इसी तरह काम किया है। इसके अलावा कोई बड़ा काम करने का और कोई तरीका नहीं है।

जब एक व्यक्ति किसी काम में पूरी तरह व्यस्त होता है, तो उस समय उस काम के सभी छिपे हुए रहस्य उसके सामने खुलते हैं। तभी वह उस काम के सभी आवश्यक पहलुओं पर ध्यान देने में सक्षम होता है। तभी यह संभव होता है कि उसकी सभी प्राकृतिक क्षमताएं उसके उद्देश्य की प्राप्ति में लग जाएं। एकाग्रता और समर्पण के बिना कोई बड़ी सफलता प्राप्त नहीं होती। अधिकांश लोग पूरी एकाग्रता के साथ अपना काम नहीं करते, और यही कारण है कि वे बड़ी सफलताओं से वंचित रह जाते हैं।

महान प्रगति

मानव मनोविज्ञान के विशेषज्ञों ने इंसानी सोच को दो प्रकारों में विभाजित किया है— कन्वर्जेंट थिंकिंग (convergent thinking) और डायवर्जेंट थिंकिंग (divergent thinking)। कन्वर्जेंट थिंकिंग यह है कि आदमी की सोच केवल एक ही बिंदु की ओर केंद्रित रहती है। एक चीज़ उसकी सोच की पकड़ में आती है, लेकिन दूसरी चीज़ उसकी सोच की पकड़ में नहीं आ पाती। यह गैर-रचनात्मक सोच है।

डायवर्जेंट थिंकिंग का मामला इससे अलग है। डायवर्जेंट थिंकिंग यह है कि आदमी की सोच एक दिशा से दूसरी दिशा की ओर मुड़ जाती है। वह एक चीज़ को देखता है और उसके बाद उसका दिमाग दूसरी चीज़ की ओर चला जाता है। इसे रचनात्मक सोच (creative thinking) भी कहा जाता है।

एक व्यक्ति किसी बस्ती में जूता खरीदने गया। वहां की आबादी काफी बड़ी थी। लेकिन वहां जूते की दुकान नहीं थी। अब एक व्यक्ति ऐसा है जो इस अनुभव से केवल यह जानता है कि उस बस्ती में जूते की दुकान नहीं है। यह वह व्यक्ति है जिसके पास केवल कन्वर्जेंट थिंकिंग है। दूसरा व्यक्ति वह है जिसे इस अनुभव से यह विचार आया कि उस बस्ती में जूते खरीदने वाले लोग तो हैं, लेकिन जूते की दुकान नहीं है। इसलिए, अगर वहां जूते की दुकान खोली जाए तो वह बहुत सफल हो सकती है। उसने तुरंत वहां जूते की दुकान खोल दी और फिर भारी मुनाफा कमाया।

यह दूसरा व्यक्ति वह है जिसके पास डायवर्जेंट थिंकिंग है। उसने जूते की दुकान के न होने में एक नए व्यापार की संभावना देखी। उसने दुकान की कमी में दुकान की संभावना को पहचान लिया।

डायवर्जेंट थिंकिंग की यह विशेषता उन लोगों में पाई जाती है जिनके

पास रचनात्मकता (creativity) की सलाहियत होती है। यही रचनात्मकता बड़ी प्रगतियों की सबसे महत्वपूर्ण शर्त है। उन्हीं लोगों ने महान वैज्ञानिक खोजें की हैं जिनके पास रचनात्मक सोच थी। उन्हीं लोगों ने बड़े राजनीतिक कार्य किए हैं जिनके पास रचनात्मक दृष्टिकोण था। और वही लोग व्यापार में उच्च सफलताएं हासिल करते हैं जो रचनात्मक सोच का प्रदर्शन कर सकते हैं।

इस दुनिया में पाने वाला वो है जिसने खोने में पाने का रहस्य खोज लिया हो।

खोज

खोज मानव का एक अद्वितीय गुण है। किसी नई चीज़ की खोज किसी व्यक्ति की सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जाती है। इतिहास के हर युग में उन लोगों को विशेष सम्मान और आदर मिला है जिन्होंने मानव ज्ञान में किसी नई चीज़ का योगदान दिया हो।

खोज क्या है, और कोई व्यक्ति किसी खोज तक कैसे पहुंचता है, इस बारे में अल्बर्ट सेंट-ग्योरगी (Albert Szent-Györgyi, 1893-1986) का एक कथन अत्यंत अर्थपूर्ण है। उन्हें भौतिक विज्ञान में एक नई चीज़ की खोज के लिए नोबेल पुरस्कार मिला था। इस संदर्भ में, उन्होंने एक प्रश्न के उत्तर में कहा:

> "Discovery consists of seeing what everybody has seen and thinking what nobody has thought."

(खोज यह है कि व्यक्ति उस चीज़ को देखे जिसे हर किसी ने देखा है, लेकिन उससे ऐसा विचार निकाले जिसे किसी ने नहीं सोचा।)

खोज (discovery) की इस व्याख्या का एक प्रसिद्ध उदाहरण न्यूटन की घटना है। न्यूटन ने सेब के पेड़ से एक फल को नीचे गिरते हुए देखा। पेड़ से फल का गिरना एक अत्यंत सामान्य घटना है जिसे हर कोई जानता है और देख चुका है। लेकिन न्यूटन ने जब इस घटना को गहरी नज़र से देखा, तो उसे उसी साधारण घटना में एक असाधारण चीज़ मिली— यानी गुरुत्वाकर्षण के नियम (laws of gravity)। जिस चीज़ को हर किसी ने देखा, उसमें उसने वह चीज़ खोज ली जो किसी और को नहीं मिली।

यही खोज सभी बड़ी सफलताओं का खजाना है। वही व्यक्ति बड़ी प्रगति तक पहुंचता है जो कोई नई चीज़ खोजे। वही राष्ट्र दूसरों के मुकाबले श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करता है जो दूसरों के मुकाबले कोई नई विधि या उपाय ईजाद कर सके। जो लोग इस रचनात्मक क्षमता का प्रमाण नहीं देते, वे केवल पीछे की पंक्ति में जगह पाते हैं। वे कभी भी आगे की पंक्ति में स्थान पाने वाले नहीं बनते।

ज़ेहन का निर्माण

संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक और सांस्कृतिक संगठन के संविधान में जो बातें लिखी गई हैं, उनमें से एक महत्वपूर्ण बात यह है:

> “Since wars begin in the minds of men, it is in the minds of men that the defenses of peace must be constructed.”

(चूंकि युद्ध का आरंभ मनुष्य के मस्तिष्क में होता है, इसलिए शांति के बचाव भी मनुष्य के मस्तिष्क में ही निर्मित किए जाने चाहिए।)

(www.en.unesco.org/70years/building_peace [accessed on 01.06.21])

यह बहुत सही बात है। वास्तविकता यह है कि चाहे सड़क पर दो व्यक्तियों का झगड़ा हो या जंग के मैदान में दो राष्ट्रों का टकराव, इस प्रकार की सभी घटनाएं हमेशा ज़ेहन में शुरू होती हैं। कुछ लोगों के ज़ेहन में गुस्सा, उत्तेजना, इंतेक़ाम और नफरत के विचार पैदा होते हैं। जब यही विचार बढ़कर व्यवहारिक रूप लेते हैं, तो इसे झगड़ा या युद्ध कहा जाता है। इसलिए यदि मस्तिष्क के स्तर पर शांति स्थापित की जा सके, तो कार्य के स्तर पर भी शांति स्थापित हो जाएगी।

मनुष्य के ज़ेहन में नकारात्मक विचार हमेशा प्रतिक्रिया के रूप में उत्पन्न होते हैं। किसी ने कठोर बात कह दी, तो आपको गुस्सा आ गया। किसी ने अप्रिय अनुभव दिया, तो आप उत्तेजित हो गए। किसी ने आपके सम्मान को ठेस पहुंचाई, तो आपके भीतर इंतेक़ाम की आग भड़क उठी। यही सभी चीजें, जो शुरुआत में मस्तिष्क के अंदर उत्पन्न होती हैं, बाहर आकर युद्ध और अशांति का कारण बन जाती हैं।

ऐसी स्थिति में व्यक्तिगत झगड़े और राष्ट्रीय युद्ध दोनों को रोकने का एकमात्र प्रभावी तरीका यह है कि लोगों को जेहनी तौर पैर विकसित किया जाए। लोगों के भीतर वह स्वभाव विकसित किया जाए जिसे धर्म में “सब्र” (धैर्य) कहा गया है। यह लक्ष्य तब प्राप्त होगा, जब लोगों की नकारात्मक सोच को समाप्त किया जाए और उनके भीतर सकारात्मक सोच विकसित की जाए। लोगों को यह स्वभाव सिखाया जाए कि वे उत्तेजक बातों पर

उत्तेजित न हों। वे अप्रिय घटनाओं में उलझने के बजाय उनसे बचें। वे नफरत के जवाब में प्रेम करना सीखें। वे शांत दिमाग से निर्णय लें, न कि भावनात्मक उबाल के तहत।

ज़ेहन का सुधार कार्य का सुधार है, और ज़ेहन का निर्माण जीवन का निर्माण।

अनिवार्य समस्या

ऐनी ब्रोंटे (Anne Bronte) एक महिला लेखिका थीं। उनका जन्म 1820 में इंग्लैंड में हुआ और 1849 में उनका निधन हो गया। उनकी रचनाओं में हक़ीक़त-पसंदी (यथार्थवाद) का सबक़ मिलता है। उनका एक कथन यह है कि इस ग़ैर-मेयारी (अपूर्ण) दुनिया में हर चीज़ के साथ हमेशा एक "लेकिन" मौजूद रहता है:

"There is always a 'but' in this imperfect world."

यह निस्संदेह एक ज्ञानवर्धक कथन है। मौजूदा दुनिया परीक्षा के लिए बनाई गई है। इसलिए यहां पूर्णता की स्थिति प्राप्त करना संभव नहीं है। यहां विभिन्न प्रकार की सीमाएं हैं। यहां हर इंसान को विचार और कर्म की स्वतंत्रता हासिल है। यहां बार-बार हितों का टकराव होता है। इस आधार पर, यहां किसी के लिए भी एक सहज जीवन प्राप्त करना संभव नहीं है। यहां हर व्यक्ति को हमेशा एक "लेकिन" का सामना करना पड़ता है। इसलिए ज़रूरी है कि व्यक्ति अपने कार्यों में इस हक़ीक़त को ध्यान में रखे। अन्यथा, अंत में उसे असफलता का सामना करना पड़ेगा।

आप स्वतंत्र हैं कि अपनी गाड़ी को सड़क पर पूरी तेज़ रफ्तार से

दौड़ाएं। लेकिन यह आपके बस में नहीं कि दूसरी दिशा से आने वाली गाड़ियों को रोककर सड़क को केवल अपने लिए खाली कर लें। आप एक अप्रिय जुलूस को रोकने के लिए उससे उलझ सकते हैं, लेकिन यह आपके नियंत्रण में नहीं कि उसके बाद सशस्त्र पुलिस को हस्तक्षेप करने से रोक दें। आप अपने एक राष्ट्रीय मुद्दे के लिए रैली और प्रदर्शन का आयोजन कर सकते हैं, लेकिन आपके लिए यह मुमकिन नहीं कि विपक्ष के भीतर विरोधी प्रतिक्रिया को रोक सकें। आप अन्याय के नाम पर विरोध और मांगों का तूफान खड़ा कर सकते हैं, लेकिन आप इस दुनिया के उस नियम को नहीं बदल सकते जिसमें व्यक्ति को उतना ही मिलता है जितनी योग्यता उसने अपने अंदर पैदा की हो।

इस दुनिया में हर ओर एक “लेकिन” की रुकावट खड़ी है। इस रुकावट को पहचानें और इसे ध्यान में रखते हुए अपने कार्यों की योजना बनाएं। अगर आपने इसे अनदेखा कर दिया और अपना कार्य शुरू कर दिया, तो अंत में आपके हिस्से में बर्बादी के सिवा कोई और चीज़ आपके हिस्से में आने वाली नहीं।

प्रकृति का पाठ

टीक (teak) एक मकान-संबंधी लकड़ी है। टीक का सबसे बड़ा उत्पादक देश म्यांमार (बरमा) है। इसके बाद भारत, थाईलैंड, इंडोनेशिया और श्रीलंका में टीक का उत्पादन होता है। भारत में लगभग दो हज़ार साल से इसका उपयोग किया जा रहा है।

टीक की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता, एक विशेषज्ञ के शब्दों में, इसकी असाधारण लंबी आयु (extraordinary durability) है। हज़ार साल

पुरानी इमारतों में भी टीक की लकड़ी की बीम अच्छी स्थिति में पाई गई हैं। प्राचीन काल में जहाज और पुल आदि अक्सर इसी लकड़ी से बनाए जाते थे।

टीक की लकड़ी के लंबे समय तक टिके रहने का मुख्य कारण यह है कि, आम लकड़ियों की तरह, इसमें दीमक नहीं लगती। दीमक लकड़ी का दुश्मन है। दीमक लगने के बाद कोई भी लकड़ी लंबे समय तक सही स्थिति में नहीं रह सकती। लेकिन टीक के लिए दीमक का कोई खतरा नहीं है। इसी वजह से इसकी लंबी उम्र को कोई चुनौती नहीं दे सकता।

टीक की वह कौन-सी विशेषता है जिसकी वजह से वह दीमक के खतरे से सुरक्षित रहती है? इसका कारण बिल्कुल साधारण है। टीक की लकड़ी में एक प्रकार का कड़वा स्वाद होता है। यह स्वाद दीमक को पसंद नहीं है। लकड़ी ही दीमक का भोजन है, लेकिन टीक की लकड़ी, विशेष रूप से, दीमक के स्वाद के अनुसार नहीं होती। इसी कारण दीमक इसे अपना भोजन नहीं बनाता।

इस उदाहरण से प्रकृति का तरीका समझ में आता है। प्रकृति ने यह चाहा कि टीक को दीमक से बचाया जाए। इस उद्देश्य के लिए उसने टीक को शोर-शराबा या विरोध का तरीका नहीं सिखाया। प्रकृति ने सीधा यह किया कि टीक के अंदर एक ऐसी विशेषता पैदा कर दी, जिसके परिणामस्वरूप दीमक अपने-आप उससे दूर हो गया।

इस दुनिया में, जैसे लकड़ी का दुश्मन दीमक है, वैसे ही मनुष्यों में भी एक-दूसरे के दुश्मन होते हैं। अब मनुष्य उनसे बचने के लिए क्या करे? उसे यह करना है कि वह अपने अंदर ऐसी विशेषता विकसित कर ले, जिससे उसका दुश्मन अपने-आप उससे दूर रहे। वह उसके खिलाफ कोई कार्रवाई करने से स्वाभाविक रूप से बच जाए।

गुस्से का परिणाम

दिल्ली में करोल बाग के इलाके में अजमल खान रोड है। यहां एक साथ जूते की दो दुकानें थीं। एक दुकान के मालिक का नाम सुरेंद्र कुमार (35 साल) है और दूसरी दुकान के मालिक का नाम बलराज अरोड़ा (45 साल)। एक हफ्ते पहले सुरेंद्र कुमार की दुकान से एक व्यक्ति ने एक जोड़ी जूता खरीदा। दुकानदार ने इसकी कीमत 180 रुपये ली। ग्राहक बाहर निकला तो दूसरे दुकानदार बलराज अरोड़ा ने उसे आवाज देकर बुलाया। उसके जूते देखकर पूछा कि यह कितने रुपये में खरीदा। उसने बताया कि 180 रुपये में। बलराज अरोड़ा ने अपनी दुकान से वैसा ही जूता निकालकर दिखाया और कहा कि देखो, यह वही जूता है और इसे मैं तुम्हें सिर्फ 135 रुपये में दे सकता हूं (द पायनियर, 14 अक्टूबर 1992)।

ग्राहक गुस्से में आ गया। वह जूता लेकर दोबारा सुरेंद्र कुमार की दुकान पर गया और कहा कि तुमने मुझसे ज्यादा पैसे लिए हैं। मुझे 45 रुपये वापस करो। इस पर सुरेंद्र कुमार भड़क गया और पड़ोस की दुकान पर जाकर बलराज अरोड़ा को डांटने लगा। कुछ लोगों ने बीच-बचाव कर दोनों को अपनी-अपनी दुकानों में वापस भेज दिया। लेकिन गुस्सा बरकरार रहा। यहां तक कि एक हफ्ते बाद, 13 अक्टूबर 1992 को, सुरेंद्र कुमार ने बलराज अरोड़ा से तेज-तेज बात की और आखिरकार अपनी जेब से रिवॉल्वर (32 bore Smith and Wesson) निकाली और एक के बाद एक छह गोलियां उस पर चला दीं। बलराज अरोड़ा को तुरंत लोहिया अस्पताल ले जाया गया, जहां डॉक्टरों ने उसे मृत घोषित कर दिया।

अब हत्यारे का मामला अदालत में है। या तो मारे गए व्यक्ति की तरह हत्यारे को भी फांसी पर लटकाया जाएगा, या हत्यारा लाखों रुपये खर्च करके मुकदमे को अपने पक्ष में करवाएगा और अदालत से रिहाई का

फैसला हासिल करेगा। अगर एक स्थिति हत्यारे के लिए शारीरिक मौत है, तो दूसरी स्थिति उसके लिए आर्थिक मौत।

हत्यारा अगर गुस्से और बदले की भावना से प्रभावित न होता, तो वह बहुत आसानी से समझ सकता था कि उसके लिए बेहतर विकल्प यह था कि वह उक्त ग्राहक को 45 रुपये लौटा देता और उसे विदा कर देता। जहां तक पड़ोसी दुकानदार का मामला था, उसे वह व्यावसायिक तरीके से हल करने की कोशिश करता।

एक नसीहत

बेंजामिन फ्रैंकलिन (Benjamin Franklin) एक अमेरिकी विचारक था। वह 1706 में पैदा हुआ और 1790 में उसका निधन हुआ। उसका एक प्रसिद्ध कथन है:

> "Keep your eyes wide open before marriage, half shut afterwards."
>
> (शादी से पहले अपनी आंखें पूरी खुली रखें, लेकिन शादी के बाद उन्हें आधा बंद कर लें।)

इसका मतलब है कि शादी करने से पहले अपने जीवन साथी के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करें। लेकिन जब शादी हो जाए, तो चीज़ों को समझदारी और समर्पण के साथ स्वीकार करें। इसी बात को सरल शब्दों में किसी ने इस तरह कहा:

> "शादी से पहले जांचो और शादी के बाद निभाओ।"

कोई भी पुरुष या महिला पूर्ण नहीं होता। कोई भी आदर्श या मानक के अनुसार खरा नहीं उतरता। इसलिए शादी से पहले जांच-पड़ताल करना ज़रूरी है, लेकिन शादी के बाद यह करना चाहिए कि अपने जीवन साथी की अच्छाइयों पर ध्यान दें और उनकी कमियों को नज़रअंदाज़ करें। आदर्श की प्राप्ति मौजूदा दुनिया में संभव नहीं है। इसी के साथ, यह भी ज़रूरी नहीं कि जिसे एक पक्ष आदर्श माने, वह दूसरे पक्ष के लिए भी आदर्श हो। इस कारण, चाहे कोई कितना ही सही क्यों न हो, वह दूसरे को पूरी तरह संतुष्ट नहीं कर सकता। दोनों पक्षों को एक-दूसरे में कुछ न कुछ कमियां दिखाई देंगी।

अब एक विकल्प यह है कि दूसरे पक्ष की कमियों से लड़कर अलगाव कर लिया जाए। लेकिन समस्या यह है कि एक संबंध से अलग होने के बाद, जो दूसरा संबंध बनेगा, उसमें भी जल्दी ही वही या कोई और कमी दिखाई देगी। और यदि दूसरे संबंध को समाप्त कर तीसरा या चौथा संबंध बनाया जाए, तो उसमें भी। ऐसी स्थिति में मुवाफिक़त (adjustment) का तरीका अपनाना चाहिए। हर पुरुष या महिला में अच्छाइयां भी होती हैं और कमियां भी। ज़रूरत है कि अच्छाइयों पर ध्यान दिया जाए और कमियों को सहन किया जाए। व्यावहारिक रूप से यही एकमात्र तरीका है। इसके अलावा इस दुनिया में कोई और तरीका संभव नहीं।

मतभेद के बावजूद

हर महिला और पुरुष के मन में शादी से पहले एक आदर्श पति और आदर्श पत्नी की छवि होती है। लेकिन शादी के बाद दोनों महसूस करते हैं कि उन्होंने जिसे अपना जीवन साथी चुना है, वह उनके आदर्श से कमतर

है। यही भावना समस्या पैदा करती है। महिला और पुरुष दोनों सचेत या अवचेतन रूप से यह महसूस करने लगते हैं कि उनका चयन सही नहीं था।

इस भावना के आते ही दोनों के बीच मतभेद शुरू हो जाते हैं, जिसका परिणाम दो रूपों में सामने आता है— एक कड़वा वैवाहिक जीवन या फिर तलाक। लेकिन ये दोनों ही स्थितियां समान रूप से गलत और अप्राकृतिक हैं।

एक युवक से बातचीत हुई, जिसका उल्लेख मैंने अपनी डायरी में 3 दिसंबर 1985 को इन शब्दों में किया है:

> "बातचीत के दौरान युवक ने अपनी शादी का ज़िक्र किया। उन्होंने कहा कि मेरी शादी मेरे माता-पिता ने करवाई, लेकिन मेरी जो पत्नी है, वह मुझे पसंद नहीं। मैंने कहा कि सबसे अच्छी शादी वह है, जो नापसंद की शादी हो। मैंने कहा कि मेरे इस कथन को आप लिख लें और इसे 20 साल बाद देखें। क्योंकि इन शब्दों की गहराई को आप आज नहीं समझ सकते। इसकी सच्चाई आपको तब समझ में आएगी, जब मेरे जैसे आपके बाल भी सफेद हो चुके होंगे।"

असल में पति और पत्नी के बीच मतभेद का कारण यह नहीं होता कि उनका चयन गलत था। इसका कारण केवल यह होता है कि दोनों प्रकृति की एक सच्चाई को समझने में असफल रहते हैं। वह यह कि मतभेद जीवन का एक हिस्सा है; यह किसी विशेष महिला या पुरुष का हिस्सा नहीं है।

यही इस समस्या का एकमात्र समाधान है। महिला और पुरुष दोनों अगर यह समझ लें कि उनके साथ जो कुछ हो रहा है, वह ईश्वर की रचनात्मक योजना के तहत हो रहा है, न कि उनके गलत चयन के कारण।

अगर दोनों इस सच्चाई को समझ लें, तो वैवाहिक जीवन की समस्या अपने आप खत्म हो जाएगी।

सृष्टि-निर्माता ने अपनी निर्माण-योजना के अनुसार, हर दो व्यक्तियों के बीच अंतर रखा है। इस समस्या का समाधान अंतर को मिटाना नहीं है, बल्कि इसका समाधान यह है कि व्यक्ति उस कला को सीखे जिसे अंतर-प्रबंधन की कला (art of difference management) कहा जा सकता है। अंतर को मिटाने की कोशिश न करें, बल्कि अंतर के साथ जीना सीखें। और तब आपका जीवन सफल वैवाहिक जीवन बन जाएगा।

पारिवारिक जीवन हो या सामाजिक जीवन, दोनों में मतभेद उत्पन्न होना स्वाभाविक है। इस समस्या का समाधान केवल एक है, और वह है— मतभेद के बावजूद एकजुट होकर रहना।

मेहमान-नवाज़ी या दिखावा

आजकल यह आम प्रचलन है कि लोग अपने मेहमानों के खाने-पीने का बहुत ज़्यादा इंतज़ाम करते हैं और इस पर काफी पैसा खर्च करते हैं। अगर उनसे कहा जाए कि यह फ़िज़ूलखर्ची और संसाधनों का इस्राफ़ (अपव्यय) है, तो वे कहते हैं कि यह शरियत की शिक्षा है, क्योंकि इस्लाम में ‘‘इकराम-ए-ज़ैफ़’’ (मेहमान का सम्मान) का आदेश है।

मगर यह पूरी तरह से ग़लतफहमी है। शरियत में जिस इकराम-ए-ज़ैफ़ का आदेश है, वह केवल आवश्यकता के अनुसार है, न कि दिखावे और तकल्लुफ़ के लिए। हदीस में इकराम-ए-ज़ैफ़ की शिक्षा दी गई है। हदीस में है कि हज़रत मुहम्मद (स.अ.व.) ने फ़रमाया, ‘‘जो ईश्वर पर और आख़िरत के दिन पर विश्वास रखता हो, उसे चाहिए कि अपने मेहमान का इकराम करे।’’

मगर इकराम का अर्थ हरगिज़ तकल्लुफ़ (दिखावा) नहीं। यह एक मानवीय और नैतिक कार्य है, न कि कोई दिखावे की चीज़।

मेहमान के लिए तकल्लुफ़ से बचने की सख़्त हिदायत दी गई है। हज़रत सलमान (रज़ि.) ने बताया, "पैग़म्बर मुहम्मद (स.अ.व.) ने हमें मेहमान के लिए तकल्लुफ़ करने से मना किया।" (शु'ब-उल-ईमान 9155) इसी तरह, एक हदीस में पैग़म्बर मुहम्मद (स.अ.व.) ने फ़रमाया, "मैं और मेरी उम्मत के परहेज़गार लोग तकल्लुफ़ से बहुत दूर रहते हैं।" (अल-मक़ासिदुल हसनः, 191)

वास्तव में, मेहमान की खातिरदारी में जो तकल्लुफ़ किया जाता है, वह असल में मेज़बान के खुद के सम्मान का एक रूप होता है, न कि मेहमान का सम्मान। एक परहेज़गार व्यक्ति के लिए तकल्लुफ़ जैसी दिखावटी चीज़ का कोई महत्व नहीं होता।

मौत की याद

एक दिन मैंने अपने साथियों के बारे में सोचा जो मेरे साथ इस दुनिया में थे। मिस्टर ए को मैंने जीवित देखा था, लेकिन अब वे नहीं रहे। इसी तरह मिस्टर बी, सी, डी, और ई का यही अंजाम हो चुका है। हाल ही में मुझे मिस्टर वाई की भी मृत्यु की खबर मिली। मैं गहरे विचार में पड़ गया और मन में आया कि मेरी बारी क़रीब आ गई है:

> The countdown has reached the last but one number.

फिर मैंने सोचा कि यह मामला केवल मेरा नहीं है। यह हर इंसान का

मामला है। हर कोई देखता है कि उसके आसपास के लोग मरते जा रहे हैं, लेकिन फिर भी कोई अपनी मृत्यु के बारे में नहीं सोचता। वह केवल इस दुनिया की समस्याओं के बारे में हर वक़्त सोचता है लेकिन मौत के बाद के मामलों पर नहीं।

इसका कारण यह है कि हर इंसान अपने डीएनए (DNA) के द्वारा नियंत्रित होता है। जीवन से संबंधित सभी चीजें डीएनए के कोड में लिखी होती हैं, लेकिन मौत का मामला डीएनए से नहीं जुड़ा। हर एक की मौत केवल ख़ालिक़ (सृजनकर्ता) के आदेश से होती है।

इंसान को चाहिए कि वह मौत के बारे में आत्म-जागरूकता (self-consciousness) विकसित करे। वह इस विषय में अपने डीएनए से परे जाकर सोचे। ऐसा करने से ही इंसान मौत की वास्तविकता को समझेगा और मौत के बाद की ज़िंदगी के लिए तैयारी करेगा।

इंसान और शैतान

इंसान के अंदर दो तरह की भावनाएँ होती हैं— दोस्ती और दुश्मनी की भावना । ये दोनों भावनाएँ प्राकृतिक हैं और हर व्यक्ति में होती हैं।

लेकिन इन भावनाओं का सही उपयोग अलग-अलग है। दोस्ती की भावना इंसानों के लिए है और दुश्मनी की भावना शैतान के लिए। शैतान इंसान का जन्मजात दुश्मन है। शैतान का प्रयास यही है कि इंसान के भीतर दुश्मनी की भावना को इंसानों की ओर मोड़ दे।

यही इंसान का इम्तिहान है। जब इंसान को किसी से दुश्मनी महसूस हो, तो वह इसे शैतान की साज़िश माने और तुरंत अपनी नकारात्मक भावनाओं को सकारात्मक में बदलने का प्रयास करे। क़ुरआन की सूरह

अल-माइदा (5:91) में बताया गया है कि: *"शैतान तुममें दुश्मनी और घृणा पैदा करना चाहता है।"*

दुनिया में इंसानों के बीच अक्सर ऐसी स्थितियाँ पैदा होती हैं जो शिकायत और विवाद का कारण बनती हैं। ऐसे मौकों पर शैतान इंसान के भीतर घुसने का प्रयास करता है और इसे बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत करता है। इंसान को चाहिए कि वह शैतान को यह मौका न दे और अपने आप को शैतान की साज़िशों से बचाए।

खुशहाली लौट आई

दिल्ली में मेरे घर के पास एक पेड़ है, जिसे मैं "स्पिरिचुअल ट्री" (आध्यात्मिक पेड़) कहता हूँ। इसके नीचे बैठकर मुझे शांति मिलती है।

मानसून से पहले यह पेड़ सूख गया था। बेजान तने की तरह लग रहा था, और मैंने सोचा कि शायद इसकी उम्र पूरी हो चुकी है और यह दोबारा हरा नहीं होगा। लेकिन मानसून आने के बाद इसमें फिर से हरियाली लौटने लगी। इसकी शाखाओं पर हरी पत्तियाँ निकलने लगीं, और अगस्त के अंत तक यह पूरी तरह से हरा-भरा हो गया।

यह एक प्रतीकात्मक रूप में इंसान के लिए एक सबक है। इंसान की आत्मिक जीवन के लिए भी यह ज़रूरी है कि उसे "पानी" मिलता रहे। जिस इंसान को इस पानी से वंचित कर दिया जाए, उसकी शख्सियत (व्यक्तित्व) भी सूखे पेड़ जैसी हो जाएगी।

इंसानी जीवन के लिए यह जीवनदायी पानी ईश्वर की कृपा है। इंसान को चाहिए कि वह ईश्वर के साथ निरंतर आध्यात्मिक संबंध बनाए रखे। इसी

संबंध से उसे खुशहाली मिलेगी। अगर यह संबंध किसी कारणवश टूट जाए तो उसकी हालत सूखे पेड़ की तरह हो जाएगी।

ईश्वर से इस संबंध का माध्यम "ज़िक्र" (स्मरण) है। यह किसी विशेष दुआ का नाम नहीं है बल्कि यह अलग-अलग स्थितियों में उसे बार-बार याद करना है। जैसे इस पेड़ को देख कर हमने ईश्वर के चमत्कार को देखा और दिल से दुआ की: "हे ईश्वर, जिस तरह इस पेड़ को हरा किया है, वैसे ही मुझे भी हरियाली से भर दे।" ऐसी सोच के साथ जीने वाला इंसान हर चीज़ में ईश्वर के काम की झलक पाता है। वही समझदार है जो इस रब्बानी फैज़ (रहमत) को अपनी ज़िंदगी में अपनाता है।

विवाद से पीछे हटना

अनुभव बताता है कि जब दो पक्षों में किसी विषय पर विवाद उत्पन्न हो जाए, तो आगे बढ़ने का रास्ता बंद हो जाता है। केवल पीछे लौटने का विकल्प खुला रहता है। ऐसे समय में आगे बढ़ने का प्रयास केवल हानि को बढ़ाने के समान होता है। ऐसे मौके पर सबसे सही विकल्प "यू-टर्न" लेना होता है, यानी पीछे लौटना।

पीछे हटने का अर्थ कायरता नहीं है, बल्कि यह एक रणनीति है। यह एक ऐसा तरीका है जिसमें पीछे हट कर दोबारा आगे बढ़ने की योजना बनाई जा सकती है। बुद्धिमान व्यक्ति हमेशा ऐसे समय में यू-टर्न का विकल्प चुनता है। उदाहरण के लिए, 1799 में टीपू सुल्तान और अंग्रेजों के बीच संघर्ष हुआ। टीपू सुल्तान ने यू-टर्न का विकल्प नहीं लिया, और परिणामस्वरूप उनकी सल्तनत बर्बाद हो गई। इसके विपरीत, हैदराबाद की मुस्लिम रियासत

ने ऐसी ही स्थिति में अंग्रेजों के सामने यू-टर्न का विकल्प चुना, और इस निर्णय के कारण वह रियासत एक सदी तक सुरक्षित रही।

बुद्धिमान वही है जो संघर्ष की स्थिति को अनुभव के रूप में देखे और परिणाम के आधार पर अपने कार्यों की पुन: योजना बनाए। ऐसा व्यक्ति आज के दिन को छोड़कर कल के दिन को पा लेता है, जबकि जो ऐसा नहीं करता, वह आज और कल दोनों को खो देता है। जीवन में अक्सर ऐसा होता है कि आगे बढ़ने का मार्ग पीछे लौटने में होता है, लेकिन व्यक्ति उसे आगे की ओर खोजता है। वास्तव में, विवाद के स्थान से पीछे हटना समझदारी और बहादुरी दोनों है। इसके विपरीत, विवाद में टकराव शुरू कर देना न समझदारी है और न बहादुरी।

इस्लाम में प्रतिक्रिया का स्थान नहीं

कई लोग व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर हिंसा में लिप्त हैं। उनसे जब पूछा जाए कि वे यह विनाशकारी कार्य क्यों कर रहे हैं, तो वे जवाब देते हैं कि यह तो स्वाभाविक प्रतिक्रिया (reaction) है। जब किसी समूह के साथ अन्याय होता है, तो प्रतिक्रिया के रूप में हिंसक उपाय अपनाना स्वाभाविक है। लेकिन उनका यह तर्क पूरी तरह से ग़ैर-इस्लामी और अवास्तविक है।

असल में, सही कार्य का मापदंड यह है कि उसके परिणाम (result) को देखा जाए। सही कार्य वही है जो लाभकारी परिणाम उत्पन्न करे। कोई भी कार्य जो अनुकूल परिणाम उत्पन्न नहीं करता, उसे त्याग देना चाहिए।

व्यवहारिक दृष्टि से कोई कार्य या तो लाभकारी होता है, या वह कार्य करने वालों के लिए विपरीत परिणाम उत्पन्न करता है। इसके बीच की

कोई स्थिति नहीं होती। सही कार्य वही है जो परिणामदायी हो। जो कार्य परिणामदायी न हो, वह केवल अपने विनाश में वृद्धि का प्रतीक है।

प्रतिक्रिया के रूप में हिंसा अपनाना उस कार्य का वास्तविक उत्तर नहीं है। सही उत्तर यह है कि स्थिति का विश्लेषण किया जाए, सकारात्मक दृष्टिकोण के साथ परिणामदायक योजना बनाई जाए, और टकराव की बजाय निर्माण के सिद्धांत पर कार्य शुरू किया जाए। यही इस्लाम का सच्चा और सही तरीका है।

नकारात्मक प्रभाव, सकारात्मक प्रभाव

एक व्यक्ति ने एमबीए की डिग्री प्राप्त की और इसके बाद दिल्ली में एक मल्टीनेशनल कंपनी में अच्छी नौकरी पा ली। उन्होंने इस नौकरी के आधार लोन लेकर पर घर और कार प्राप्त किये। परन्तु कुछ समय बाद वे मुझसे मिले और नाराज़गी भरे लहजे में बोले कि कंपनी ने उनके एक जूनियर को प्रमोशन दे दिया, जबकि उन्हें नहीं।

मैंने कहा, "इस कंपनी की नौकरी के कारण ही आपको घर और कार मिले। आपने इसका कभी आभार व्यक्त नहीं किया, लेकिन आपका प्रमोशन नहीं हुआ तो आप नाराज़ हो रहे हैं।"

अधिकतर लोगों का स्वभाव यही होता है। वे अपने अनुकूल घटनाओं का उल्लेख नहीं करते, लेकिन उनके विरुद्ध कुछ हो जाए तो उसकी खूब चर्चा करते हैं। यह प्रवृत्ति इंसान की मानसिकता को प्रभावित करती है और एक नकारात्मक व्यक्तित्व का निर्माण करती है।

इंसान का स्वभाव यह है कि यदि सौ में निन्यानवे सकारात्मक बातें हों, तो वे उसकी शख्सियत का हिस्सा नहीं बनतीं। लेकिन एक नकारात्मक

बात उसकी शख्सियत में पूरी तरह से घुल जाती है। एक गिलास पानी में अगर आप रंग डालें तो वह पूरे पानी में फैल जाएगा। यही मामला इंसान का है। जब वह किसी घटना से नकारात्मक प्रभाव लेता है, तो वह उसकी पूरी शख्सियत में फैल जाता है। इसके विपरीत, कोई सकारात्मक घटना जल्दी से भुला दी जाती है।

लिहाज़ा, हर व्यक्ति को चाहिए कि वह किसी नकारात्मक प्रभाव का अनुभव करे, तो तुरंत उसे भुला दे, वरना उसकी भारी कीमत उसे नकारात्मक व्यक्तित्व के रूप में चुकानी पड़ेगी।

धन पर्याप्त नहीं है

अमेरिका के बिल गेट्स को सॉफ्टवेयर दिग्गज (software giant) कहा जाता है। उनके पास कोई बड़ी शैक्षिक डिग्री नहीं है। उन्होंने हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में पढ़ाई की थी, लेकिन बीच में ही छोड़ दी, फिर भी वे धरती के सबसे धनी व्यक्ति बन गए। 1999 में उनकी संपत्ति का अनुमान सौ बिलियन डॉलर से अधिक था।

उन्होंने कंप्यूटर प्रौद्योगिकी में कई उपलब्धियाँ हासिल कीं, और दुनिया भर में उनका व्यवसाय इतना बढ़ा कि उन्हें "कंप्यूटर किंग" कहा जाने लगा। लेकिन यह समृद्धि तरक़्क़ी उन्हें आंतरिक शांति नहीं दे सकी।

इसलिए उन्होंने मानवता की सेवा (philanthropy) को अपने जीवन का नया उद्देश्य बनाया। उन्होंने "बिल एंड मेलिंडा गेट्स फाउंडेशन" की स्थापना की और अपनी संपत्ति का आधा हिस्सा इसमें दान कर दिया। 27 जून 2008 को, 52 वर्ष की आयु में उन्होंने कंप्यूटर व्यवसाय से रिटायर होने का एलान कर दिया।

असल में, कोई भी भौतिक सुविधा या प्रगति व्यक्ति को सच्ची शांति नहीं दे सकती। इस संसार को उसके सृजनकर्ता ने इस उद्देश्य के लिए नहीं बनाया है कि यहाँ व्यक्ति अपनी सभी इच्छाओं की पूर्ति करे और पूर्ण संतोष प्राप्त करे। यह एक सीमित दुनिया है जो केवल व्यक्ति को उसकी आवश्यकताओं को पूरा करने का अवसर देती है ताकि वह अपनी ऊर्जा को ऊँचे आध्यात्मिक उद्देश्य में लगा सके और आख़िरत में ईश्वर के अनन्त इनाम का हकदार बन सके।

मादी तरक्की, रूहानी मौत

नई दिल्ली के अंग्रेज़ी अख़बार 'हिंदू' के 2 सितंबर 2008 के अंक में एक शिक्षाप्रद रिपोर्ट छपी, जो भारत के मशहूर खिलाड़ी अभिनव बिंद्रा के बारे में थी। अभिनव बिंद्रा ने अगस्त 2008 में बीजिंग (चीन) में हुए ओलंपिक खेलों में शूटिंग में गोल्ड मेडल जीता। इस रिपोर्ट का शीर्षक था— "मैं एक हारा हुआ इंसान हूँ"।

रिपोर्ट के अनुसार, अभिनव बिंद्रा ने कहा कि उन्हें लगता है कि वे ज़िंदगी में एक हारे हुए व्यक्ति हैं, क्योंकि उन्होंने शूटिंग के सिवा कुछ नहीं किया। उन्होंने बीबीसी के कार्यक्रम "एक मुलाकात" में कहा, "मैंने अपनी पूरी ज़िंदगी में बस शूटिंग की है। मैंने ज़िंदगी में और कुछ नहीं किया। मैं अपने आपको एक हारा हुआ इंसान मानता हूँ। मैं बस सोता हूँ, दौड़ता हूँ और शूटिंग के अलावा कुछ नहीं करता। खेल ज़िंदगी का केवल एक हिस्सा है। जीवन में और भी कई चीजें हैं, लेकिन मैंने और कुछ नहीं किया।"

इंसानी शख्सियत के दो हिस्से होते हैं— मादी (भौतिक) हिस्सा और रूहानी (आध्यात्मिक) हिस्सा। यदि कोई व्यक्ति केवल अपने भौतिक हिस्से

को संतुष्ट करता है, तो वह इसी तरह की कमी और निराशा का अनुभव करता रहेगा। लेकिन यदि वह अपने रूहानी हिस्से को भी पोषित करता है, तो उसे कभी भी ऐसी निराशा महसूस नहीं होगी।

शख़्सियत की तामीर (व्यक्तित्व का निर्माण)

ईश्वर इंसान का ख़ालिक़ (सृजनकर्ता) है। मानसिक और शारीरिक रूप से इंसान जो कुछ भी है, वह पूरी तरह से ईश्वर की रचना का नतीजा है। लेकिन इस दुनिया में इंसान की जो शख़्सियत बनती है, वह खुद उसकी अपनी तामीर (निर्माण) का नतीजा होती है। इस दृष्टिकोण से यह कहना सही होगा कि इंसान पचास प्रतिशत ईश्वर द्वारा निर्मित है और पचास प्रतिशत खुद के द्वारा निर्मित है।

इंसान प्राकृतिक रूप से हर किस्म की क्षमताएँ लेकर पैदा होता है, लेकिन ये क्षमताएँ उसमें संभावित रूप (potential) में होती हैं। इन क्षमताओं को वास्तविकता (actual) में लाना इंसान का अपना काम है। यह एक शानदार अवसर है जो हर व्यक्ति को मिलता है। यही इंसान की ज़िम्मेदारी है कि वह अपनी संभावनाओं को वास्तविकता में बदल दे, अन्यथा एक असफल इंसान के रूप में मृत्यु को प्राप्त करे।

संभावनाओं को वास्तविकता में बदलना एक निरंतर प्रक्रिया है, जो जीवनभर चलती रहती है। इस प्रक्रिया की शुरुआत गहरे चिंतन-मनन से होती है। गहरे चिंतन के ज़रिए इंसान सच्चाई तक पहुँचता है। इसके बाद इंसान को हर दिन आत्ममंथन (introspection) करना होता है। उसे अपनी कमजोरियों और त्रुटियों की पहचान करनी होती है और उन्हें सुधार कर

अपने अंदर मानसिक और आध्यात्मिक विकास की प्रक्रिया को जारी रखना होता है।

व्यक्तित्व निर्माण की इस प्रक्रिया को इंसान खुद अंजाम देता है, लेकिन इस प्रक्रिया को सही तरीके से जारी रखने के लिए उसे लगातार ईश्वर की मदद की ज़रूरत होती है। यह मदद दुआ के माध्यम से मिलती है। जो व्यक्ति दुआ के साथ जीता है, वही अपनी शख्सियत के निर्माण में कामयाब होता है। दुआ के बिना यह काम मुकम्मल नहीं हो सकता। इंसान जब पैदा होता है, तो वह कच्चे लोहे की तरह होता है। हर व्यक्ति को अपने कच्चे लोहे को तरक्की देकर स्टील बनाना होता है। यह कार्य हर किसी के लिए अनिवार्य है।

ज़्यादा ज़हीन, ज़्यादा दूर

इंसानों में कुछ लोग फितरी तौर पर ज़्यादा ज़हीन (बुद्धिमान) होते हैं और कुछ कम। इतिहास से पता चलता है कि ज़्यादा बुद्धिमान लोग अक्सर खुद को दीन (धर्म) के कामों से दूर रखते हैं। हमेशा ऐसे लोग जो कम बुद्धिमान माने जाते हैं, वे अपने आप को दीन के काम में लगाते हैं।

इसका कारण वह है जिसे क़ुरआन में "हुब्बे-आजिला" (तुरंत लाभ की चाह) कहा गया है। बुद्धिमान लोग जल्दी ही व्यापार और नौकरी की दुनिया में लाभकारी जगह पा लेते हैं, जबकि दीन के काम का फल आख़िरत से जुड़ा होता है।

इससे यह कहा जा सकता है कि जो व्यक्ति ज़्यादा बुद्धिमान होता है, वह अमल (व्यवहार) में उतना ही नादान साबित होता है। वे अस्थायी लाभ

की ख़ातिर, हमेशा के लाभ को नज़रअंदाज कर देता है और अस्थायी खुशी के बदले जन्नत की सच्ची खुशी से खुद को महरूम कर देते हैं।

इसके अलावा, अधिक बुद्धिमान व्यक्ति की एक कमज़ोरी यह होती है कि वह अहम (अहंकार) से ग्रस्त होता है, और दीन के काम में इसका कोई स्थान नहीं। दीन का काम विनम्रता पर आधारित होता है, न कि गर्व या श्रेष्ठता पर। ऐसे लोग जो खुद को ईश्वर के मुकाबले में पूरी तरह समर्पित नहीं कर पाते, दीन के कामों के लिए अयोग्य (incompetent) बन जाते हैं।

भूतकाल में जीना

अगर लोगों से बात की जाए तो अक्सर देखा जाता है कि अधिकतर लोग, बल्कि शायद सभी लोग किसी न किसी के खिलाफ कोई शिकायत या नकारात्मक भावना पाले रहते हैं। आज की दुनिया में पूरी तरह सकारात्मक सोच रखने वाला व्यक्ति मिलना मुश्किल है।

इस तरह की सोच व्यक्ति के अंदर नकारात्मक व्यक्तित्व (negative personality) पैदा करती है, जो किसी भी महिला या पुरुष के लिए आत्म-हत्या से कम नहीं। जहां सामान्य आत्म-हत्या शारीरिक होती है (physical suicide), वहीं नकारात्मक सोच निःसंदेह मानसिक आत्म-हत्या (psychological suicide) है।

अगर इस बारे में लोगों से पूछताछ की जाए, तो यह बात सामने आती है कि उनकी शिकायतें अक्सर किसी ऐसी घटना पर आधारित होती हैं, जिनका संबंध बीते समय से है। लोगों की यह आदत विनाशकारी होती है कि जब भी उनके साथ कोई अप्रिय घटना घटती है, तो वे इसे दूसरों के साथ साझा करते हैं और हमेशा इसे अपनी याद (memory) में जीवित रखते हैं।

यही आदत उनके अंदर नकारात्मक व्यक्तित्व के निर्माण का सबसे बड़ा कारण बन जाती है।

हर व्यक्ति को चाहिए कि जब भी उसके साथ कोई अप्रिय घटना घटे, तो वह उसी समय उसे भुला दे। उसे दूसरों से उसका ज़िक्र नहीं करना चाहिए, बल्कि यह कोशिश करनी चाहिए कि उस अप्रिय घटना में कोई सुखद पहलू खोजे। इस तरह वह एक नकारात्मक अनुभव को सकारात्मक अनुभव में बदल सकता है। ठीक वैसे ही जैसे एक यात्री के पैर में कांटा चुभ जाए, तो वह तुरंत उस कांटे को निकालकर बाहर फेंक देता है और उसे अपनी जीवित यादों का हिस्सा नहीं बनाता।

समझदार वही है जो भूतकाल की कड़वी यादों को भुला देता है। वह अपने मन को भूतकाल की अप्रिय यादों का जंगल नहीं बनने देता। इस दुनिया में सफल जीवन जीने का यही एकमात्र तरीका है।

नफ़रत का बम

हर इंसान के अंदर एक छिपा हुआ शैतान होता है, जिसे नफ़रत का बम (hate bomb) कहा जा सकता है। सामान्य परिस्थितियों में यह बम सोया हुआ रहता है, लेकिन यदि इसे उकसाया जाए, तो अचानक यह उग्र रूप में भड़क उठता है। यह एक वास्तविकता है कि हर इंसान में नफ़रत के इस बम के जगने की संभावना होती है।

इसका अर्थ यह है कि हर व्यक्ति एक अत्यधिक विस्फोटक (highly inflammable) पदार्थ है। यदि किसी समाज में दस हज़ार लोग हैं, तो वे दस हज़ार चलते-फिरते ज्वलनशील पदार्थों का समूह हैं। सामान्य रूप से,

यह उनका निजी हित है जो उन्हें शांत बनाए रखता है, भले ही वे स्वभावतः उग्र हों।

इस स्थिति में नेतृत्व करना बहुत कठिन कार्य होता है। यदि किसी नेता के पास केवल शिकायत और विरोध का नारा है, तो उसे सार्वजनिक रूप से सामने नहीं आना चाहिए, क्योंकि उसका नकारात्मक नारा समाज में उथल-पुथल मचाएगा।

एक नेता का यह कर्तव्य है कि यदि उसके पास प्रेम का संदेश है, तो ही वह समाज में अपनी मुहिम लेकर आए। यदि उसके पास केवल नफ़रत और शिकायतें हैं, तो बेहतर यही है कि वह खुद को सीमित रखे।

सामाजिक आंदोलनों के दो प्रकार होते हैं— सकारात्मक आंदोलन और नकारात्मक आंदोलन। सकारात्मक आंदोलन वह है जो कर्तव्य के आधार पर उठाया जाए; यह एक सही आंदोलन होता है। जबकि नकारात्मक आंदोलन वह है जो अधिकारों की माँग और विरोध के आधार पर उठाया जाए; यह एक अस्थिर आंदोलन होता है। सकारात्मक आंदोलन हमेशा अच्छे परिणाम लाता है, और नकारात्मक आंदोलन का अंत हमेशा बुरे परिणामों में होता है।

परम सत्य की समझ

परम सत्य का ज्ञान हमेशा उच्च सोच (high thinking) के माध्यम से प्राप्त होता है। ईश्वर के बारे में, उसकी किताब के बारे में, और उसकी रचनाओं के बारे में जितना गहराई से इंसान सोचेगा, उतनी ही गहरी समझ तक पहुँचेगा। सत्य की समझ का सूत्र यही है— जितनी गहरी सोच, उतना ही गहरा ज्ञान।

क़ुरआन में गहरी सोच को दर्शाने के लिए विभिन्न शब्दों का उपयोग

किया गया है, जैसे तफक्कुर (सोच-विचार), तदब्बुर (ध्यान), तवस्सुम (दूरदर्शिता) और तअक्कुल (सूझ-बूझ)। दुनिया की हर चीज़ में विचार का विषय है, चाहे वह छोटी हो या बड़ी। यदि चीज़ों को साधारण रूप में न लिया जाए, बल्कि गहराई से सोचा जाए, तो हर चीज़ ज्ञान का स्रोत बन जाएगी। इस बात को एक फ़ारसी शायर ने इस प्रकार व्यक्त किया है:

बर्ग-ए-दरख़्तान-ए-सब्ज़ दर नज़र-ए-होशियार,
हर वर्क़े दफ़्तर अस्त मआरिफ़त-ए-कर्दगार।

"समझदार इंसान की नज़र में हर हरे पेड़ का पत्ता
ईश्वर की पहचान और ज्ञान की किताब का एक पन्ना
होता है।"

उदाहरण के लिए, हम रोज़ धरती पर चलते हैं लेकिन सोचते नहीं। अगर हम सोचें, तो यह चलना हमारे लिए ज्ञान का ख़ज़ाना बन सकता है। धरती पर चलना एक साधारण बात दिखती है, लेकिन अपनी वास्तविकता में यह एक अलौकिक घटना है। हमारी धरती पर चलते समय, कई शक्तियाँ हमारे साथ सहयोग करती हैं—जैसे धरती की संतुलित गुरुत्वाकर्षण शक्ति, हमारे शरीर के चारों ओर हवा का दबाव, ऑक्सीजन की निरंतर आपूर्ति, सूर्य की रोशनी। इस तरह की अनगिनत चीजें हमें मदद देती हैं, जिससे हम अपनी मंज़िल तक पहुँचते हैं। इस प्रकार की चीज़ों पर विचार करना ही उच्च ज्ञान का सबसे बड़ा स्रोत है।

सच्चा कर्म, सच्ची दुआ

हर इंसान जो इस दुनिया में आता है, एक निश्चित समय के बाद उसे मरना है और ईश्वर के सामने पेश होना है। इसके बाद ईश्वर उसकी हमेशा की ज़िंदगी के बारे में फ़ैसला करेगा। यह हमेशा की ज़िंदगी या तो जन्नत के रूप में होगी या नरक के रूप में। इसे "नजात" (मुक्ति) कहते हैं।

यह नजात उन लोगों को मिलेगी जो ईश्वर के सामने इस हाल में हाज़िर हों कि उनके पास दो में से एक चीज़ अपनी बेहतरीन सूरत में मौजूद हो— सच्चा अमल या सच्ची दुआ। सच्चा अमल वह है जो केवल ईश्वर की रज़ा के लिए किया जाए, और सच्ची दुआ वह है जो पूर्ण असहायता की भावना के साथ की जाए।

सच्चे अमल का मापदंड यह है कि उसे पूरी तरह ईश्वर की खातिर किया जाए। और सच्ची दुआ का मापदंड यह है कि उसे सम्पूर्ण असहायता की स्थिति में किया जाए।

सच्चे अमल की तौफ़ीक़ उसे मिलती है जो अपने अंदर से पूरी तरह से दिखावे और दोगलेपन को निकाल दे, जिसकी कथनी और करनी में कोई फर्क न रहे, और जो अपनी कमजोर शख्सियत को बदल सके। इसी तरह, सच्ची दुआ की तौफ़ीक़ उसे मिलती है जो अपने विवेक को इस स्तर तक बढ़ा ले कि वह ईश्वर की शक्ति के सामने अपनी पूरी असहायता को महसूस कर सके। इस स्तर पर पहुँच कर ही किसी को सच्ची दुआ हासिल होती है।

वास्तव में सच्ची दुआ और सच्चा अमल अलग नहीं हैं। सच्ची दुआ में सच्चा अमल शामिल होता है, और सच्चा अमल हमेशा सच्ची दुआ की बुनियाद पर ही पैदा होता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से, सच्चे अमल और सच्ची दुआ को अलग नहीं किया जा सकता। सच्चा अमल वास्तव में "हक़ीक़ी अमल" का दूसरा नाम है, और सच्ची दुआ "हक़ीक़ी दुआ" का दूसरा नाम।

मौत का पाठ

मैं एक जनाज़े में शामिल हुआ। मौत के बाद मरे हुए व्यक्ति का शरीर धोया गया। उसे नए कपड़े पहनाए गए, जनाज़े की नमाज़ पढ़ी गई, और फिर शव को कंधों पर उठाकर क़ब्र तक ले जाया गया। जब शव को क़ब्र में सम्मानपूर्वक लिटा दिया गया, तो मैंने सोचा, इस मृत शरीर के साथ इस तरह का इतना ध्यान क्यों दिया गया है? यह सत्य है कि मृत्यु के बाद इंसान का शरीर सिर्फ मिट्टी के अलावा कुछ नहीं होता, फिर भी उसे सामान्य मिट्टी की तरह इधर-उधर नहीं फेंका जाता, बल्कि उसके साथ एक इंसान जैसा व्यवहार किया जाता है।

"मिट्टी" के साथ "इंसान" जैसा व्यवहार करने का आदेश मृतक के लिए नहीं है, बल्कि जीवित रहने वाले के लिए है। मृतक के माध्यम से जीवित लोगों को यह पाठ दिया जाता है कि आखिरकार उनका परिणाम क्या होने वाला है। इस्लाम यह चाहता है कि जीवित लोग मृतक के रूप में स्वयं को देखें। वे मृत्यु से पहले मृत्यु का अनुभव करें। यह अनुभव इस प्रकार भी संभव था कि एक निर्धारित दिन कागज़ से एक मानव पुतला बनाया जाए और उसके साथ सभी रस्में निभाकर उसे मिट्टी के गड्ढे में डाल दिया जाए। लेकिन इस्लाम ने इस अनुभव को वास्तविक बनाने के लिए एक वास्तविक इंसान के मृत शरीर का उपयोग किया।

यह व्यक्ति हमारे जैसा एक जीवित इंसान था। चलते-चलते उसके कदम थम गए। बोलते-बोलते उसकी ज़ुबान चुप हो गई। देखते-देखते उसकी आँखें बेनूर हो गईं। लोगों के लिए उसकी जो कीमत थी, वह अचानक खत्म हो गई। अब, खुदा इस घटना का उपयोग करता है ताकि एक इंसान के माध्यम से वह लोगों को जीवन का पाठ याद दिलाए। लोग उसे सम्मान से तैयार करते हैं, और फिर उसे क़ब्र तक ले जाते हैं। जब उसे क़ब्र के गड्ढे में

लिटा दिया जाता है, तो हर आदमी यह करता है कि तीन बार अपनी हाथों में मिट्टी लेकर क़ब्र में डालता है। पहली बार मिट्टी डालते हुए वह कहता है, "इसी से हमने तुम्हें पैदा किया" (कुरआन 20:55); दूसरी बार मिट्टी डालते हुए वह कहता है, *"और इसी में हम तुम्हें वापस भेजेंगे"* (*कुरआन* 20:55); और तीसरी बार मिट्टी डालते हुए वह कहता है, "*और इसी से हम तुम्हें फिर से बाहर निकालेंगे*" (*कुरआन* 20:55)। यह तीन बार मिट्टी डालना पूरे मामले का चरम बिंदु है। इस जीवित घटना के माध्यम से बताया जाता है कि इंसान क्या है और उसका अंतिम परिणाम क्या होगा।

प्रकृति के साथ सहयोग करना

एक व्यक्ति ने मुझसे कहा, "जब भी मैं घर जाता हूँ, मेरी पत्नी मेरे खिलाफ कोई न कोई कठोर शब्द कह देती है। इस पर मुझे गुस्सा आ जाता है, और मैं भी कुछ कह देता हूँ, जिससे हमारे बीच झगड़ा हो जाता है। ऐसे झगड़े मेरे घर में अक्सर होते रहते हैं। इस समस्या का समाधान क्या है?"

मैंने कहा, "इस समस्या का केवल एक समाधान है: एकतरफा धैर्य। अर्थात, अगर आपकी पत्नी आपके खिलाफ कुछ कहे भी, तो भी आप प्रतिक्रिया न दें। हर परिस्थिति में एकतरफा मौन बनाए रखें।" उन्होंने पूछा, "क्यों मुझे ही एकतरफा चुप रहना चाहिए? उन्हें भी तो चुप रहना चाहिए, यह तो नाइंसाफी हुई।"

मैंने कहा, "यह न्याय का मामला नहीं है, बल्कि यह एक व्यावहारिक समाधान है। जन्मजात रूप से महिलाएँ भावनात्मक होती हैं। अक्सर ऐसा होता है कि वे किसी बात का अधिक प्रभाव ले लेती हैं और अपने भावनाओं को किसी पर निकालने की जरूरत महसूस करती हैं। यह महिलाओं की

एक प्राकृतिक आवश्यकता है। ऐसी स्थिति में महिला का सबसे निकटतम व्यक्ति उसका पति होता है, जिस पर वह अपने भावनाओं को निकाल सकती है और खुद को फिर से संतुलित कर सकती है।"

ऐसे समय में पुरुष को चाहिए कि वह इसे अहंकार का मुद्दा न बनाए, बल्कि सहयोग की भावना से कार्य करे। ऐसी स्थिति में यदि पुरुष सहनशीलता का रास्ता अपनाता है, तो वह वास्तव में सहयोग का रास्ता अपना रहा है। और यह सहयोग केवल महिला के साथ ही नहीं, बल्कि प्रकृति के साथ भी होता है। प्रकृति के नियमों के तहत, महिलाएँ इस प्रकार के भावनात्मक अभिव्यक्ति के लिए मजबूर होती हैं। इसलिए, ऐसे समय में जब पुरुष सहयोग की भावना दिखाता है, तो यह वास्तव में खुद को ईश्वर की इच्छा के सामने समर्पित करना होता है। निःसंदेह, यह एक ऐसा कर्म है जिसके लिए ईश्वर उसे अवश्य पुरस्कृत करेगा।"

अंतर को समझना

मिस्टर ए और मिस्टर बी में किसी बात पर मतभेद हो गया, और उन्होंने एक-दूसरे से बातचीत बंद कर दी। यह स्थिति कई सालों तक जारी रही। अंततः मिस्टर बी को यह महसूस हुआ कि ऐसा होना ठीक नहीं है। वे मिस्टर ए के पास गए, उनका अभिवादन किया, और कहा, "आइए, हम अपनी शिकायतों को समाप्त कर दें। यदि मेरी गलती थी, तो मैं बिना शर्त माफी माँगता हूँ। जो कुछ हुआ, उसे आप भी भूल जाएँ और मैं भी भूल जाऊँ। इस तरह, हम अपने संबंधों को फिर से सामान्य बना लें।"

मिस्टर बी की बात सुनने के बाद, मिस्टर ए ने कहा, "मैं इसके लिए तैयार नहीं हूँ। हमारे पैगंबर ने कहा है कि "एक सच्चा आस्थावान व्यक्ति

एक ही बिल से दो बार नहीं डसा जाता है” (ला युल्दग अल-मुमिन मिन जुहरी मर्रतैन: *सहीह अल-बुखारी*: हदीस संख्या 6133)। जो होना था, वह हो चुका, अब मैं दूसरी बार आपका अनुभव करने के लिए तैयार नहीं हूँ।”

इस बातचीत में, मिस्टर ए द्वारा बयान की गई हदीस का संदर्भ सही नहीं था। यह हदीस सामान्य सामाजिक संबंधों के बारे में नहीं है, बल्कि उन व्यवहारिक मामलों के बारे में है, जो विश्वास पर आधारित होते हैं, जैसे व्यापारिक साझेदारी या किसी वादे के आधार पर लेन-देन। ऐसे मामलों में, यदि कोई व्यक्ति एक बार अविश्वसनीय साबित हो, तो उसके साथ दोबारा सौदा नहीं करना चाहिए।

सामान्य सामाजिक संबंधों का मामला इससे भिन्न है। सामान्य सामाजिक संबंधों के बारे में एक और हदीस है, जिसमें कहा गया है कि यदि किसी व्यक्ति को किसी से शिकायत हो जाए, तो उसके लिए तीन दिन से अधिक बातचीत बंद करना उचित नहीं है। (*सहीह अल-बुखारी*: हदीस संख्या 6065) ऐसी स्थिति में व्यक्ति को चाहिए कि वह तीन दिनों के भीतर अपनी शिकायत को भूल जाए और फिर से सामान्य रूप से मिलना-जुलना शुरू कर दे।

इस घटना में मिस्टर ए की प्रतिक्रिया दोनों स्थितियों के अंतर को न समझ पाने के कारण थी। उन्होंने दो स्थितियों के बीच का अंतर नहीं समझा और एक हदीस का गलत संदर्भ में उपयोग कर लिया, जिसका उस स्थिति से कोई संबंध नहीं था।

लाड़-प्यार का संकट

आम तौर पर देखा गया है कि माता-पिता अपने बच्चों के साथ अत्यधिक लाड-प्यार का व्यवहार करते हैं, उनकी हर इच्छा पूरी करते हैं ताकि वे खुश रहें। इस प्रकार का लाड-प्यार एक बड़ी चुनौती है। इस लाड-प्यार का परिणाम यह होता है कि बच्चों के मन में प्यार का एक काल्पनिक मापदंड बन जाता है।

यह काल्पनिक मापदंड माता-पिता के व्यवहार पर आधारित होता है। धीरे-धीरे यह किसी व्यक्ति के मन में इतना गहराई से बैठ जाता है कि वे इसके खिलाफ सोच भी नहीं सकते। वे इस मापदंड को पूर्ण सत्य मान लेते हैं, और इसके विपरीत सोचना उनके लिए असंभव हो जाता है। इसका अंतिम परिणाम यह होता है कि व्यक्ति यह समझने लगता है कि केवल मेरे माता-पिता ही मुझसे प्यार करते हैं, माता-पिता के अलावा इस दुनिया में मुझसे प्यार करने वाला कोई नहीं है। प्यार का यह मापदंड व्यक्ति के लिए घातक साबित होता है। इसका परिणाम यह होता है कि वह अपने माता-पिता के प्रति तो अत्यधिक सकारात्मक राय रखता है और दूसरों के प्रति अत्यधिक नकारात्मक राय रखता है। वह अपने माता-पिता के मामले में भी अवास्तविक होता है और दूसरों के मामले में भी अवास्तविक।

मनुष्य अपने बचपन का केवल एक छोटा सा हिस्सा अपने माता-पिता के साथ घर में बिताता है। इसके बाद वह बाहर की दुनिया में प्रवेश करता है, एक ऐसी दुनिया में जहाँ चुनौतियाँ हैं, प्रतियोगिता है, और जहाँ कठिन परिस्थितियों का सामना करते हुए अपनी जिंदगी को बनाना होता है।

ऐसे में, माता-पिता की ओर से अपने बच्चों के प्रति सबसे अच्छी शुभकामना यह होगी कि वे उन्हें बाहरी दुनिया का सामना करने के लिए तैयार करें। उन्हें जीवन की सच्चाइयों से अवगत कराएँ। लाड-प्यार से जो

मानसिकता बनती है, वह केवल घर के अंदर ही काम आती है। घर से बाहर निकलते ही लाड-प्यार का महत्व समाप्त हो जाता है। ऐसे लोगों की स्थिति यह होती है कि वे हमेशा अपने परिवार से ही प्यार करते हैं और बाकी सभी लोगों के प्रति उनके दिल में केवल नफरत होती है।

एक बेहतर भविष्य की ओर

यह एक उच्च शिक्षित मुस्लिम व्यक्ति की कहानी है। उन्होंने एक विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी की डिग्री प्राप्त की और इसके बाद उन्हें एक अच्छी नौकरी मिली। वे इस नौकरी से खुश थे, लेकिन कुछ समय बाद उनके और उनके बॉस के बीच मतभेद हो गया। मतभेद इतना बढ़ गया कि उन्हें अपनी नौकरी छोड़नी पड़ी। इसके बाद मेरी उनसे मुलाकात हुई। वे बहुत निराश और चिंतित थे। मैंने उन्हें समझाया और फिर उनकी डायरी में ये शब्द लिख दिए:

> *"कभी-कभी माली एक पेड़ को एक स्थान से उखाड़ता है, केवल इसलिए ताकि वह उस पेड़ को एक बेहतर स्थान पर लगा सके, जहाँ वह अधिक फल-फूल सके"* (4 अक्टूबर, 1981)

इस सलाह के बाद उन्होंने अपनी कोशिश जारी रखी, और अंततः वे पहले से भी अधिक सफल हो गए।

यह प्रकृति का एक नियम है। यह नियम हर चौबीस घंटे में खामोश भाषा में इंसान को बताया जाता है। हर कोई जानता है कि हमारी दुनिया में हर शाम के बाद फिर से सुबह होती है। हर रात के बाद फिर से दिन का

उजाला फैल जाता है। यह प्रकृति की खामोश भाषा है, जो हमें बताती है कि इस दुनिया में असफलता हमेशा एक अस्थायी घटना होती है। इस दुनिया में हर असफलता के बाद सफलता का एक नया अवसर आता है, बशर्ते व्यक्ति धैर्यपूर्वक उसका इंतज़ार करे।

इंतज़ार का मतलब निष्क्रियता नहीं है। इसका अर्थ यह है कि व्यक्ति अपनी कोशिश को निरंतर जारी रखे। वह हर असफलता को अस्थायी चीज़ समझे और भविष्य के प्रति अपनी उम्मीद को कभी खत्म न होने दे। वह पीछे की बातों को भुलाए और हमेशा आगे की ओर बढ़ता रहे। वह भावनात्मक निर्णयों से बचे और हक़ीक़त-पसंद योजना बनाए। जीवन में हमेशा यह आवश्यक होता है कि व्यक्ति अनुभवों की रोशनी में अपने मामले का पुनर्मूल्यांकन करे, नई सोच के साथ नई योजना बनाए। यही बेहतर भविष्य की ओर यात्रा का एकमात्र प्रभावी सिद्धांत है।

"**अध्यात्म और सफल जीवन**" एक प्रेरणादायक पुस्तक है जो हमें बताती है कि सच्ची सफलता केवल बाहरी उपलब्धियों से नहीं, बल्कि आंतरिक शांति और संतुलन से मिलती है। हमें कभी भी समस्याओं से घबराना नहीं चाहिए। जीवन में कभी रास्ते बंद नहीं होते, हर कठिनाई अपने साथ कोई न कोई अवसर लाती है, और हर असफलता में सफलता का बीज छिपा होता है। हमें उन्हें पहचानकर असफलता को सफलता में बदलना है। सरल भाषा में लिखी गयी यह पुस्तक हर उम्र के पाठकों के लिए उपयोगी है। यह पुस्तक हमारे लिए एक मार्गदर्शक है जो हमें बताती है कि जीवन की उलझनों से उलझने के बजाय उनसे निकलने का तरीका कैसे खोजा जाए। जो लोग स्थायी सफलता और मन की शांति पाना चाहते हैं, उनके लिए यह पुस्तक निश्चय ही एक भरोसेमंद साथी साबित होगी।

PDF

Buy

ISBN 978-81-7898-738-5

9 788178 987385

Goodword Books
CPS International